

एक दिन प्रमांशु के किसी मित्र ने जयन्त को फोन करके बताया कि प्रमांशु कहीं चला गया है और उसका पता नहीं चल रहा था. जयन्त तुरंत उस मित्र से मिले. पूछने पर उसने बताया कि इन दिनों वह अपने पुराने दोस्तों को छोड़कर कुछ नये दोस्तों के साथ रहने लगा था. इसी बात पर उन लोगों के बीच में झगड़ा और मारपीट हुई थी. उसके बाद प्रमांशु कहीं गायब हो गया था. उस मित्र से नाम पता लेकर जयन्त उसके नए-पुराने सभी दोस्तों से मिले, खुलकर उनसे बात की; परंतु कुछ पता नहीं चला. जयन्त ने अनुभव किया कि कहीं न कहीं, कुछ बड़ी गड़बड़ है और हो सकता है, प्रमांशु के साथ कोई दुर्घटना हो गयी हो.

कहानी 'उनका बेटा' का एक अंश

उनका बेटा

(कहानी-संग्रह)

राकेश भ्रमर



प्रज्ञा प्रकाशन

24, जगदीशपुरम्, लखनऊ मार्ग,
निकट त्रिपुला चौराहा, रायबरेली-229001

ISBN : 978-81-929522-8-4



प्रज्ञा प्रकाशन

24, जगदीशपुरम्, लखनऊ मार्ग,

निकट त्रिपुला चौराहा, रायबरेली-229001

शाखा: 7, श्री होम्स, बचपन स्कूल के पास,
कंचन विहार, विजय नगर, जबलपुर-482002 (म.प्र.)

मूल्य: सजिल्द ₹ 300

पेपरबैक ₹ 150

आवरण: नीरज कश्यप/राकेश भ्रमर

प्रथम संस्करण: 2016 © राकेश भ्रमर

Unka Beta (Short Stories)

Rakesh Bhramar

मुद्रक:

ग्रेनेडियर्स एसोसियेशन प्रिंटिंग प्रेस, डिफेन्स सिनेमा के पास
कैन्ट, जबलपुर (म.प्र.)

भूमिका

मेरा सातवां कहानी संग्रह आपके हाथों में है. छटा कहानी संग्रह 'वह लड़की' इसी वर्ष जनवरी में आया था और दो माह बाद यह सातवां कहानी संग्रह भी आ गया है. पाठक आश्चर्य करेंगे कि इतनी जल्दी दूसरा कहानी संग्रह कैसे आ सकता है? परन्तु इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है, क्योंकि मेरे छठे कहानी संग्रह 'वह लड़की' में सन् 2013 के दौरान लिखी कहानियां संग्रहीत थीं और इस कहानी संग्रह में 2014 की लिखी कहानियां संकलित की गयी हैं. मेरी 2015 की कहानियां भी तैयार हैं, जो कभी भी संकलन के रूप में आपके समक्ष आ सकती हैं.

कुछ समय पूर्व मैंने यह नियम बनाया था कि एक माह में एक कहानी अवश्य लिखूंगा. इस प्रकार एक साल में बारह कहानियां हो जाती हैं. किसी वर्ष में तेरह भी हो गयी हैं, परन्तु बारह से कम कहानियां मैंने कभी नहीं लिखीं. यह क्रम सन् 2010-11 से चल रहा है. इतनी कहानियां मैं तब लिख रहा हूं, जब एक मासिक पत्रिका का संपादन भी मेरे जिम्मे हैं और कविताओं, ग़ज़लों के साथ-साथ उपन्यास लेखन भी जारी है. इस समय मैं तीन उपन्यास एक साथ लिख रहा हूं.

इतनी व्यस्तता में लेखन कार्य दुश्कर तो है ही, रचनात्मक गुणवत्ता बनाये रखना उससे भी कठिन कार्य है. परन्तु मेरी प्रकाशित कहानियों पर जिस प्रकार मुझे पाठकों से फोन पर प्रशंसा और सराहना मिलती है, उससे न केवल मेरा उत्साह बढ़ता है, बल्कि और अच्छा लिखने की प्रेरणा भी प्राप्त होती है. इस संग्रह की कई कहानियां पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं या प्रकाशन के लिए स्वीकृत हैं, यथा- बुढ़ापे का सहारा, डर, दोराहा, जिन्दा गोश्त, नीलकंठ और उनका बेटा (सरिता, दिल्ली प्रेस) और गांव में एक दिन (प्राची). शेष कहानियां कब्र के बाहर, कल्लो-कलूटी, खेल, खुली आंखों के सपने, मवाद और फूलमती अभी तक अप्रकाशित हैं, परन्तु इस संकलन में दी जा रही हैं.

मेरा सदैव यह मानना रहा है कि जो भी और जैसा भी लेखन हो, वह न केवल समाज से जुड़ा हुआ लेखन हो, बल्कि समाज को एक दिशा-निर्देश भी दे. इस सिद्धान्त में मैं कितना सफल होता हूं, यह तो पाठक ही बता सकते हैं. मैं अपने लेखन के संबंध में न तो कोई घोषणा करता हूं, न पुस्तक में किसी विद्वान लेखक या आलोचक से कोई भूमिका या प्रस्तावना लिखवाता हूं. जब कोई लेखक आग्रह करके किसी विद्वान से ऐसा करवाता है तो उसमें मात्र प्रशंसा होती है, स्वच्छा आलोचना नहीं.

कोई भी लेखक अपने को महान घोषित कर सकता है. वह गली-मोहल्लों से हजारों सम्मान-पत्र प्राप्त कर सकता है, परन्तु जो खुशी उसको पाठक की प्रशंसा से मिलती है, वह न तो किसी सम्मान-पत्र में है, न स्वयं को महान घोषित करने या करवाने में. पाठक की प्रशंसा एक लेखक का सबसे बड़ा सम्मान होती है और मुझे खुशी है कि मुझे यह सम्मान अपने पाठकों से सदा प्राप्त होता रहा है.

मेरी कहानियों का पाठक हर प्रदेश और शहर में मौजूद है. किसी कहानी को पढ़कर जब कोई अनजान पाठक मुझे फोन करता है, तो ऐसा लगता है, जैसे मुझे ज्ञानपीठ ही नहीं, नोबल पुरस्कार मिल गया है. मैं अपने पाठकों का हृदय से आभारी हूं, कि उन्हें मेरी कहानियां पसंद आती हैं और वे उन्हें पढ़कर फोन द्वारा मुझे बधाई और शुभकामना प्रदान करते हैं.

मुझे आशा है, इस संग्रह की कहानियां पढ़कर भी पाठक मुझे फोन या पत्र द्वारा अपनी प्रतिक्रिया और आलोचना से अवगत करायेंगे, ताकि आगे मैं अपने लेखन में तदनुसार सुधार कर सकूं.

धन्यवाद और शुभकामनाओं के साथ!

आपका

राकेश भ्रमर

7, श्री होम्स, कंचन विहार,
बचपन स्कूल के पास, लामटी,
विजय नगर, जबलपुर-482002
मो: 9968020930

अनुक्रमिका

कहानी	पृष्ठ सं.
बुढ़ापे का सहारा	9
डर	21
दोराहा	39
गांव में एक दिन	61
जिन्दा गोश्त	76
कब्र के बाहर	91
कल्लो-कलूटी	107
खेल	135
खुली आंखों के सपने	147
मवाद	182
नीलकंठ	198
फूलमती	220
उनका बेटा	236

बुढ़ापे का सहाय

के शव बाबू सटिया गए हैं!
क्या सचमुच...वह तो अभी पचास के भी नहीं हुए, फिर भी उनकी बीवी ऐसा क्यों कहती है कि वह सटिया गए हैं. उन्होंने तो ऐसा कोई कार्य नहीं किया. बस बीवी की बात का हल्का-सा विरोध किया था. सच तो ये है कि वह जीवन भर अपनी पत्नी का विरोध नहीं कर पाए. उसके खिलाफ़ कभी कुछ कह नहीं पाए और बीवी अपनी मनमानी करती रही. दरअसल उनकी बीवी नीता उन पत्नियों में से थी, जो धार्मिक होती हैं. रात-दिन पूजा-पाठ में व्यस्त रहती हैं. पति को परमेश्वर मानती हैं, परन्तु पति का कहना कभी नहीं मानती हैं. उनकी घुट्टी में यह बात पिला दी जाती है कि पति परमेश्वर होते हुए भी पत्नी के अधीन रहता है, जीवन भर उसका कहना मानता है. इसीलिए पत्नियां मनमाने ढंग से उनसे हर काम करवा लेती हैं.

केशव बाबू उन व्यक्तियों में से थे जो हर बात को सरल और सहज तरीके से लेते हैं. किसी बात का पुरजोर तरीके से विरोध नहीं कर पाते. कई बार वह दूसरों के जोर देने पर ग़लत बात को भी सही मान लेते हैं. वह बावज़ह और बेवज़ह दोनों स्थितियों में झगड़ों से बचते रहते हैं. उनकी इसी कमज़ोरी का फ़ायदा उठाकर पत्नी हमेशा उनके ऊपर हावी रहती है.

आज भी कोई बहुत बड़ी बात नहीं हुई थी. लड़के की पढ़ाई और भविष्य को लेकर पति-पत्नी के बीच चर्चा हो रही थी. उनका लड़का एमसीए करके घर में बैठा हुआ था. तीन साल हो गये थे. अभी तक उसका कहीं प्लेसमेंट नहीं हुआ था. दरअसल केशव बाबू उसके एमसीए करने के पक्ष में नहीं थे. वह पढ़ाई में बहुत

साधारण था. बीसीए के लिए भी कई लाख देकर मैनेजमेंट कोटे से उसको भर्ती करवाया था. इसके पक्ष में भी वह नहीं थे, क्योंकि वह जानते थे कि बीसीए करने के बाद भी वह अच्छी पोजीशन नहीं ला पाएगा. इस स्थिति में उसका कैम्पस सेलेक्शन असंभव था. और हुआ भी यहीं...बीसीए में उसके बहुत कम मार्क्स आए थे. अतएव उसने जिद्द करके एमसीए में एडमिशन ले लिया था. इस पूरे मामले में मां-बेटे एक साथ थे और केशव बाबू अकेले.

केशव बाबू ने केवल इतना कहा था, “इतनी कम मेरिट में किसी अच्छी कंपनी में तुम्हारे लिए नौकरी मिलना असंभव है. क्यों न तुम कम्प्टीशन की तैयारी करो और छोटी-मोटी नौकरी कर लो.”

इसी बात पर उनकी बीवी भड़क गयी थी. तीखे स्वर में बोली थी, “आप तो सटिया गये हैं. कैसी बेतुकी बात कर रहे हैं. एमसीए करने के बाद बेटा क्या छोटी-मोटी सरकारी नौकरी करेगा? आपकी अभी दस साल की नौकरी बाकी है. बेटा कोई बूढ़ा नहीं हुआ जा रहा है और न हम भूखों मर रहे हैं. न हो तो बेटे को कोई और कोर्स करवा देते हैं. ज्यादा डिग्रियां होंगी तो नौकरी मिलने में आसानी होगी.”

केशव बाबू ने एक लाचार नज़र पत्नी पर डाली और फिर लड़के की तरफ़ देखा. वह एक कोने में चुपचाप खड़ा इस तरह उन दोनों की बातें सुन रहा था, जैसे उससे सम्बन्धित कोई बात नहीं हो रही थी. परन्तु जब उन्होंने ध्यान से देखा तो बेटे के चेहरे पर एक कुटिल मुस्कान विराजमान थी, जैसे कह रहा था, “आप लोग मेरे लिए लड़ते रहिए. पैसा बरबाद करते रहिए, परन्तु कसूंगा मैं वहीं, जो मेरा मन कहेगा.” केशव बाबू को अपने बेटे की इस कुटिलता पर बड़ा गुस्सा आया, परन्तु वह अच्छी तरह जानते थे कि उनके गुस्से की आग पर पत्नी के तर्कहीन पानी के छींटे पड़ते ही वह बर्फ़ की तरह ठण्डे पड़ जाएंगे. तब उन्हें प्यार की गर्मी देनेवाला कोई नहीं होगा. वह रात भर इस तरह करवटें बदलते रहेंगे जैसे किसी ने उनके बिस्तर पर तपती रेत के साथ-साथ कांटें भी बिछा दिए हों.

हारे हुए जुआरी की तरह अन्तिम चाल चलते हुए केशव बाबू ने कहा, “नौकरी बुद्धि से मिलती है, बहुत सी डिग्रियों से नहीं. और उसके लिए एक ही डिग्री काफी होती है. सोच लो, हमारी एक बेटा भी है. वह इससे ज्यादा बुद्धिमान और पढ़ने में तेज़ है. अपने जीवन की सारी कमाई बुढ़ापे तक इसकी पढ़ाई पर खर्चा करते रहेंगे, तो बेटा के लिए क्या बचेगा? उसकी शादी के लिए भी बचत करनी है.”

केशव बाबू की इतनी सरल और सत्य बात भी उनकी पत्नी को नागवार गुजरी और वह फिर से भड़क उठी, “आपको समझाने से कोई फ़ायदा नहीं. आप सचमुच सटिया गये हैं. बेटा की शादी में बहुत सारा दहेज देकर क्या करेंगे? सादी-सी शादी कर देंगे.”

“परन्तु क्या उसकी पढ़ाई में खर्चा नहीं लगेगा?”

पत्नी की बुद्धि बहुत ओछी थी, “उसको बहुत ज़्यादा पढ़ा-लिखाकर अपना पैसा क्यों बरबाद करें. वह कौन-सा हमारे घर में बैठी रहेगी और हमारे बुढ़ापे का सहारा बनेगी? लड़का हमारा वंश आगे बढ़ाकर हमारा नाम रोशन करेगा.”

अपनी पत्नी की ओछी सोच पर केशव बाबू फिर तरस खाकर रह गए. इसके सिवा और कर भी क्या सकते थे. उनके सीधे स्वभाव का फ़ायदा उठाकर उनकी पत्नी हमेशा उन पर हावी होती रही थी. अगर वह कभी अपनी आवाज़ ऊंची करते, तो उसकी आवाज़ उनसे भी ऊंची हो जाती. वह चीखना-चिल्लाना शुरू कर देती. इसी बात से वह डरते थे कि मोहल्ले वाले कहीं यह न समझ लें कि वह पत्नी के साथ मारपीट जैसा घटिया कृत्य करते हैं. अतः वह चुप हो जाते, फिर भी पत्नी का बड़बड़ाना जारी रहता. तब वह उठकर बाहर चले जाते, सड़क पर टहलते या पार्क में जाकर बैठ जाते.

केशव बाबू को बेटा की तरफ़ से कोई चिन्ता नहीं थी. वह पढ़ने में तेज़ थी. चिन्ता थी तो बस लड़के को लेकर थी, क्योंकि वह पढ़ने में न तो ज़हीन था, न बहुत ज़्यादा अंक ही परीक्षा में ला पाता था. ले-देकर केवल डिग्री ही उसके हाथ में आती थी, परन्तु केवल डिग्री से ही अच्छी नौकरी नहीं मिल सकती थी. पता नहीं, आगे चलकर क्या करेगा?

इस बार भी पत्नी के आगे केशव बाबू की नहीं चली और बेटे ने एमबीए में एडमिशन ले लिया. इसके लिए भी उन्हें कई लाख रुपये खर्च करने पड़े. अब कई साल तक बेटा निश्चिंत होकर बाप के पैसे को लुटाता हुआ ऐश कर सकता था. न उसे पढ़ाई की चिन्ता करनी थी, न नौकरी की.

बेटा ने इण्टर कर लिया तो एक बार फिर घर में हंगामा हुआ. वह नब्बे प्रतिशत अंक लेकर उत्तीर्ण हुई थी और बी.टेक करना चाहती थी. केशव बाबू उसके पक्ष में थे, परन्तु पत्नी नहीं चाहती थी. बोली,

“जरा दिमाग से काम लो. एक साल बाद बेटा अटारह की हो जाएगी. फिर उसकी शादी कर देंगे. बी.टेक करने में हम पैसा क्यों बरबाद करें. ज़्यादा पढ़ेगी

तो विवाह भी ज्यादा पढ़े-लिखे लड़के के साथ करना पड़ेगा. उसी हिसाब से विवाह में भी पैसा ज्यादा खर्च होगा. हम क्यों अपना पैसा बरबाद करें. उसका पति चाहेगा तो उसे आगे पढ़ाएगा, वरना घर में बैठेगी.”

केशव बाबू ने हैरत से पत्नी को देखा और बोले, “तुम खुद बी.ए. पास हो और बेटी के बारे में इस तरह की बातें कर रही हो. आज नारी के लिए शिक्षा का महत्व कितना बढ़ चुका है, यह तुम नहीं जानती?”

“जानती हूं. बी.ए. करके मुझे क्या मिला? कौन-सी नौकरी कर रही हूं. बी. टेक करके बेटी भी क्या कर लेगी. शादी करके बच्चे पैदा करेगी, उन्हें पाल-पोसकर बड़ा करेगी, घर संभालेगी और बैठी-बैठी मोटी होगी, बस. इसके अलावा लड़कियां क्या करती हैं, बताओ?”

“जो लड़कियां नौकरी कर रही हैं और ऊंचे-ऊंचे पदों पर बैठी हैं, वह भी किसी की बेटियां, पत्नियां और मां होंगी. उनके घरवाले अगर इसी तरह सोचते, तो आज कोई भी नारी घर के बाहर जाकर नौकरी नहीं कर रही होती. वह नौकरियां कर रही हैं और देश, समाज और परिवार के विकास में योगदान दे रही हैं.” केशव बाबू जोर देकर बोले.

“बस रहने दो. दो-चार औरतों के नौकरी करने से देश का विकास नहीं होता, न समाज का भला होता है. नौकरी करनेवाली स्त्रियों के घर बिगड़ जाते हैं. वह ठीक से अपने लड़कों की देखभाल नहीं कर पातीं. परिवार, समाज और देश के विकास और उन्नति के लिए लड़कों का सक्षम होना परम आवश्यक है. हमें बेटे की शिक्षा पर ध्यान देना चाहिए. वही हमारे बुढ़ापे का सहारा है.”

केशव बाबू ने कटाक्ष किया, “तभी तो हमारे सुपुत्र पढ़ाई में कुछ ज्यादा ही ध्यान दे रहे हैं. तीन-तीन डिग्रियां लिए बैठे हैं और नौकरी हाथ नहीं आ रही है. डिग्री लेकर चाटेगा?”

“आप तो पता नहीं क्यों बेटे के खिलाफ रहते हैं. देख लेना, एक दिन वहीं हमारा नाम रोशन करेगा. मुझे तो डर है, बेटी बाहर जाकर हमारी नाक न कटवा दे.”

“बेटा पता नहीं कब हमारा नाम रोशन करेगा, परन्तु तुम्हारी घटिया सोच के चलते मैं बेटी के जीवन को अन्धकारमय नहीं बना सकता. बेटे के लिए तुम हमेशा अपनी मनमानी करती रही, परन्तु बेटी के सम्बन्ध में तुम्हारी एक भी नहीं चलने

दूंगा. वह जहां तक पढ़ना चाहेगी, मैं पढ़ाऊंगा.” केशव बाबू उत्तेजना में उठकर खड़े हो गये.

“बेटी के ऊपर पैसा बरबाद करके एक दिन पछताओगे.”

“बेटे के ऊपर खर्चा करके भी मैं कौन-सा सुख भोग रहा हूं.”

केशव बाबू की बात पर पत्नी इस तरह चीखने-चिल्लाने लगी, जैसे पति से नहीं, किसी और से कह रही हो, “अरे देखो तो इस भले आदमी को. कैसी अनहोनी की बातें कर रहा है. बेटे से ज्यादा इसको बेटी की पड़ी है. अपने घर में आग लगाकर कोई हाथ सेंकता है. मैं तो भर पाई इस आदमी से...पता नहीं कैसे इतने दिनों तक झेलती रही. देख लेना, यह घर बरबाद करके रहेगा.” और वह झूठ-मूठ के टसुए बहाने लगी. ऊंची आवाज़ में चीखना-चिल्लाना और रोना-धोना, यही उसके सशक्त हथियार थे. ऊंची आवाज़ से वह अपने पति की आवाज़ को दबाती थी और आंसुओं से अपनी बात मनवाती थी. आज तक वह अपने इन्हीं दो हथियारों का अनधिकृत प्रयोग करती आ रही थी. परन्तु आज वह दोनों निरर्थक सिद्ध होनेवाले थे.

इस बार केशव बाबू पत्नी की आवाज़ से थोड़ा दबे, परन्तु उसके आंसुओं से पराजित नहीं हुए. उन्होंने ठान लिया था कि इस बार पत्नी की बात नहीं मानेंगे. वह बाहर जाने के लिए मुड़े, तभी उनको पत्नी के अलावा किसी और की सिसकियों की आवाज़ सुनाई पड़ी. उन्होंने ध्यान नहीं दिया था. उनकी बेटी अनिका वहीं पर खड़ी थी.

वह बेटी के पास गये, “तुम क्यों रो रही हो, बेटी?” उन्होंने पूछा.

अनिका की रुलाई और तेज़ी से फूट पड़ी. केशव बाबू ने किसी तरह उसे चुप कराया और बाहर के कमरे में लाकर पूछा, “अब बताओ तुम्हें क्या दुःख है?”

“पापा मेरी वज़ह से आपके और मम्मी के बीच झगड़ा हुआ, मैं आगे पढ़ाई नहीं करूंगी.” उसने हताश स्वर में कहा.

केशव बाबू एक पल के लिए हतप्रभ से खड़े रहे. फिर बेटी के सिर पर हाथ रखकर बोले, “बेटा, तुम पढ़ाई करोगी. यह तुम्हारे भविष्य का ही सवाल नहीं है, मेरे आत्मसम्मान का भी सवाल है. तुम समझ रही हो न! तुम्हें कुछ बनकर दिखाना है. तुम्हें कुछ बनाकर मैं दिखाना चाहता हूं कि बेटियां किसी से कम नहीं होती. बेटे ही नहीं, बेटियां भी मां-बाप का नाम रोशन करती है.”

अनिका समझ गयी. बहुत पहले ही समझ गयी थी. वह एक अच्छे-भले, सुसंस्कृत और आर्थिक रूप से संपन्न परिवार में पैदा हुई थी; परंतु इस छोटे से घर में उसकी अपनी सगी मां की सोच दकियानूसी और पुरातनपंथी थी. जब उसका बचपन जवान होने लगा था, तभी उसकी समझ में आ गया था कि मां की नज़रों में वह एक बोझ के समान थी. उसका बड़ा भाई मां की आंखों का तारा था. हर पल वह पक्षपात का शिकार होती थी. गलती न होने पर भी उसे झिड़कियां, डांट और कभी-कभी मार भी पड़ती थी, परंतु दूसरी तरफ़ भाई के द्वारा बड़ी-से-बड़ी ग़लती करने पर भी उसे माफ़ कर दिया जाता था. खान-पान, कपड़े-लते में भी भाई को वरीयता दी जाती थी. मां की हठधर्मी से इस घर का माहौल हर पल विषाक्त बना रहता था.

मां के अनुचित व्यवहार से न केवल वह दुःखी रहती थी, बल्कि केशव बाबू भी उदास और थके-थके से रहते थे. वह पापा का दर्द समझती थी, परंतु कुछ कर नहीं सकती थी. सभी दुःखों और कष्टों से निजात पाने के लिए वह किताबों की दुनिया में खो गयी. वह अपना ज़्यादातर समय पढ़ने में बिताती, ताकि मां की खिटखिट से छुटकारा मिल जाय और पिता का उदास और थका चेहरा देखकर उसकी उदासी और ज़्यादा न बढ़े.

पढ़ाई में उसकी एकाग्रता के कारण ही वह अच्छे नंबरों से पास होती रही थी.

केशव बाबू के लिए बेटी को उच्च शिक्षा दिलाना एक प्रतिष्ठा का प्रश्न बन गया था. उनके प्रोत्साहन से अनिका ने लगन से तैयारी की और उसका एक अच्छे कॉलेज में दाखिला हो गया. उन्होंने उसे हॉस्टल में डाल दिया, ताकि घर के माहौल से वह दूर रहकर मन से पढ़ाई कर सके. रोज़-रोज़ की चख-चख और लड़ाई-झगड़े से वह पढ़ाई में मन कैसे लगाती?

इस बीच पति-पत्नी के बीच कितने विवाद हुए, वाक्-युद्ध हुए, कितने लीटर आंसू बहे, कितनी धमकियां दी गईं; इन सबका बयान करना बेमानी है. बस इतना भर लिखना पर्याप्त है कि दोनों तरफ़ से तलवारें खिंचीं थीं, परंतु कत्तल नहीं हो रहे थे. यही गनीमत थी. यह तनाव घर में काफ़ी दिनों तब बना रहा, परंतु धीरे-धीरे ख़त्म हो गया.

अनिका और उसके पापा के बीच रोज़ फोन पर बातें होती थी. अनिका मां से भी बातें करती थी. पहले तो मां ऐंठी रहती थीं, परंतु धीरे-धीरे वह सामान्य हो

गयीं. ज़िंदगी की ऊंची-नीची डगर पर सब लोग हिचकोले खाते हुए यूंही आगे बढ़ रहे थे.

घर का माहौल कुछ दिनों से सहमा-सहमा और डरावना-सा था. केशव बाबू ने ज़्यादा इस तरफ़ ध्यान नहीं दिया. वह अपनी नित्य क्रियाओं में व्यस्त रहते. ऑफिस जाते और घर पर आकर पढ़ने में व्यस्त रहते. नीता वैसे भी उनसे खिंची-खिंची रहती थी, इसलिए वह उसके किसी प्रसंग में दख़ल नहीं देते थे.

दफ़्तर से आकर वह ड्राइंगरूम में बैठे ही थे कि नीता अपना तमतमाया हुआ चेहरा लेकर उनके सामने खड़ी हो गयी. लगभग चीखते हुए बोली, “आपको पता है, इस घर में क्या हो रहा है?”

केशव बाबू ने इस तरह सिर उठाकर पत्नी को देखा, जैसे कह रहे हों, ‘मुझे कैसे पता चलेगा. घर में तो तुम रहती हो.’ फिर उपेक्षित भाव से बोले, “बताओ.”

“विल्व एक सप्ताह से घर नहीं आया है.”

“अच्छा, मुझे तो वह कभी घर में नहीं दिखता. तुम्हें पता होगा, वह कहाँ होगा? न पता हो, फोन करके पूछ लो.”

“पूछा है, कहता है कि अपनी महिला मित्र के साथ रहने लगा है, लिव-इन-रिलेशनशिप में.”

केशव बाबू एक पल के लिए हतप्रभ रह गये. फिर एक व्यंग्यात्मक मुस्कान उनके चेहरे पर दौड़ गयी, “खुशी की बात है, उसने मां-बाप को शादी के झंझट से बचा लिया. सोचो, लाखों रुपये की बचत हो गयी. तुम बेटी की शादी का खर्च बचाना चाहती थी. तुम्हारे बेटे ने स्वयं की शादी का खर्चा बचा दिया.”

नीता धम् से सोफे के दूसरे किनारे पर गिर-सी पड़ी. वह केशव बाबू के पैरों की तरफ़ झुकती हुई बोली, “आपको मज़ाक़ सूझ रहा है और मेरी जान निकली जा रही है. वह न तो कोई नौकरी कर रहा है, न उसका एम.बी.ए. पूरा हुआ है. ऐसे में वह बर्बाद हो जाएगा. वह लड़की उसका खून चूस लेगी.”

केशव बाबू गंभीर हो गये. पत्नी के प्रति घृणा होते हुए भी उन्होंने सहानुभूति पूर्ण स्वर में कहा, “तुम चिंता मत करो, लड़के के सिर पर अभी प्रेम का भूत सवार है. ऐसे प्रेम में गंभीरता और स्थायित्व नहीं होता है. लिव-इन-रिलेशनशिप बंधनरहित होते हैं. अतएव इनमें एक-न-एक दिन खटास अवश्य आती है. चाहे शादी को लेकर, चाहे बच्चों को लेकर या फिर कमाई को लेकर या फिर उनके बीच

में कोई तीसरा आ जाता है. जो रिश्ते शारीरिक आकर्षण, और जोश-जवानी पर आधारित होते हैं, उनकी नियति और परिणति यही होती है. जहां परिवार और समाज नहीं होता, वहां उच्छृंखलता और निरंकुशता होती है. देख लेना, एक दिन विप्लव और उस लड़की का रिश्ता भी टूट जाएगा.”

“परंतु वह कुछ करना-धरता नहीं है. उसका भविष्य चौपट हो जाएगा.”

“वह तो होना ही है. जिस तरह की परवरिश और संस्कार तुमने उसको दिए हैं, उसमें उसका बिगड़ना आश्चर्यजनक नहीं है. न बिगड़ता तो आश्चर्य होता. अब हम कुछ नहीं कर सकते. टोकर खाकर अगर वह सुधर गया, तो समझो सुबह का भूला शाम को घर वापस आ गया. वरना...फिर उसका भगवान ही मालिक है.”

“परंतु उसका खर्चा कहां से चलेगा.”

“मुझे लगता है, वह लड़की कहीं-न-कहीं नौकरी अवश्य करती होगी. जब तक उसके मन में विप्लव के लिए प्रेम रहेगा, वह उसका खर्चा उठाती रहेगी. जिस दिन उसे लगा कि विप्लव उसके लिए बोझ है या कोई अन्य लड़का उसके जीवन में आ गया, वह उसे टोकर मार देगी. ”

नीता रोने लगी. केशव बाबू ने उसे चुप नहीं कराया. कोई फायदा नहीं था. वह नीता की नासमझी का परिणाम था, परंतु विप्लव के पतन के लिए वह अकेली दोषी नहीं थी. इसमें विप्लव का भी बहुत बड़ा हाथ था. कोई भी युवक नासमझ नहीं होता कि उसे अपने कर्मों के परिणामों का पता नहीं होता. प्यार उसने अपनी बुद्धि और विवेक से किया था और उसने कुछ सोच-समझकर अपनी प्रेमिका के साथ रहना स्वीकार किया होगा. पढ़ने में वह कमजोर था, तो इसमें उसकी नालायकी और कामचोरी थी.

हम जो कर्म करते हैं, उसके लिए स्वयं जिम्मेवार होते हैं. हम अपनी गलतियों के लिए किसी और को जिम्मेवार नहीं ठहरा सकते.

केशव बाबू के लिए यह चिंता का विषय था कि बेटा बिगड़ गया था, परंतु वह बहुत अधिक परेशान नहीं थे. पत्नी की हठधर्मी और मनमानी में उनका कोई हाथ नहीं था. उन्होंने तो हर कदम पर उसे रोकने और समझाने की कोशिश की, परंतु वह उल्टी खोपड़ी की औरत थी. हर सही बात उसे ग़लत लगती और हर ग़लत काम अच्छा. उसका दुष्परिणाम एक-न-एक दिन सबके सामने आना ही था.

कहां तो नीता की चिंता थी कि ज्यादा पढ़ाने से बेटी बिगड़ जाएगी, कहां बेटा बिगड़ गया. जिसे वंश आगे बढ़ाना था, खानदान का नाम रोशन करना था, वहीं घर के सारे चिराग बुझाकर खुद अंधेरे में गुम हो गया था.

अनिका के बी.टेक. का यह अंतिम वर्ष था. एक दिन उसने पापा को फोन किया, “पाप, एक खुश ख़बर है.”

“क्या बेटा! बेलो.” केशव बाबू ने उल्लास से पूछा.

“पाप मेरा सेलेक्शन हो गया है.” अनिका की आवाज़ खुशी से चहक रही थी.

केशव बाबू का हृदय खुशी से झूम उठा. शरीर में एक झुरझुरी-सी उठी. लगा जैसे तपती दुपहरी में पसीने से तरबतर शरीर के ऊपर किसी ने वर्षा की टंडी बूंदें टपका दी हों, वह हर्षित होते हुए बोले, “मुबारक हो बेटा, कहां हुआ है सेलेक्शन? लेकिन अभी तो तुम्हारी फाइनल की परीक्षाएं बाकी हैं.”

“हां, वो तो हैं, परंतु ये कैम्पस सेलेक्शन है. पिछले अंकों के आधार पर हुआ है. परीक्षा के बाद ही नियुक्ति पत्र मिलेगा. परंतु अभी एक शर्त है कि पहली पोस्टिंग मुंबई में होगी.”

“तो इसमें परेशानी क्या है? तुम हॉस्टल में रह चुकी हो. मुंबई में भी तुम्हें कोई परेशानी नहीं होगी.”

“हां, वह तो सही है. बस, मैं ये सोच रही थी कि आप अकेले हो जाएंगे.”

“नहीं, बेटा, पहले तुम अपने भविष्य की चिंता करो. वैसे भी एक दिन तुम हम सबको छोड़कर चली जाओगी.”

“नहीं, पापा, मैं आपको छोड़कर कभी नहीं जाऊंगी.”

केशव बाबू मन ही मन मुस्कराये, परंतु आंतरिक खुशी के बावजूद उनकी आंखों में आंसू छा गये. अपने को संभालकर बोले, “अच्छा ठीक है. तुम अपना ख्याल रखना.”

“ओ.के. पापा!”

“मम्मी को बताया?”

“बता दूं क्या?” अनिका ने पूछा.

“बता दो तो अच्छा रहेगा. तुम्हारी मम्मी हैं...अच्छी हैं या बुरी, सदा तुम्हारी मां रहेंगी. वैसे भी आजकल उनके व्यवहार में आश्चर्यजनक परिवर्तन हुआ है. मेरे साथ मीठा व्यवहार करती हैं. बेटे ने उनकी आशाओं और अपेक्षाओं पर जो चोट

की है, उससे उनका विश्वास डगमगा गया है. उनको अब कहीं कोई सहारा दिखाई नहीं देता.”

“ठीक है, मैं अभी फोन करती हूं.”

शाम को जब केशव बाबू घर पहुंचे, तो नीता ने मुस्कराते हुए उनका स्वागत किया. यह एक अच्छा संकेत था. केशव बाबू को अच्छा लगा. नीता ने कहा, “आपको मालूम है न!”

“क्या?” उन्होंने मन की खुशी को दबाते हुए पूछा.

“अनिका की नौकरी लग गयी है.”

“हैं!” वह आश्चर्यप्रकट करते हुए मुड़े, “मुझे तो नहीं बताया. तुम्हें कैसे पता चला?”

“अनिका ने स्वयं फोन करके बताया है. आपको नहीं बताया?”

“चलो कोई बात नहीं. तुमको बता दिया तो मुझे बता दिया.” वह सामान्य-सा दिखाने की चेष्टा करते हुए बोले.

बहुत दिनों बाद उनके घर में खुशियों ने अपने पंख फैलाये थे.

अनिका की परीक्षाएं समाप्त हो गयीं. उसे हॉस्टल खाली करना था. केशव बाबू उसे कार से स्वयं लेने गये थे. नीता भी आना चाहती थी, परंतु उन्होंने मना कर दिया.

लौटते समय रास्ते में केशव बाबू ने अनिका की पसंद की कुछ चीजें खरीदीं, उसे उपहार जो देना था. जान-पहचान वालों के लिए मिठाई के डिब्बे खरीदे और जब वह घर पहुंचे तो नीता उन्हें दरवाजे पर ही खड़ी मिली. कार के रुकते ही वह बाहर की तरफ लपकी और अनिका के कार से उतरते ही उसे अपने गले से लगा लिया. अनिका भी मां के गले से इस तरह लिपट गयी जैसे सालों से उनके ममत्व, प्रेम और स्नेह को तरस रही थी.

“मेरी बेटी, मेरी बेटी.” इसके बाद नीता का गला भर आया. उसकी आंखों में आंसू उमड़ आए. उन्हें लग रहा था, जैसे अपनी खोई हुई बेटी को पा लिया हो.

“मम्मी!” अनिका के भरिये हुए गले से निकला.

कई पलों तक मां-बेटी एक दूसरे के गले लगी रहीं. केशव बाबू के टोंकने पर वह दोनों अलग हुईं. “सारा प्यार बाहर ही उड़ेल दोगी, या घर के लिए भी बचाकर रखोगी तुम दोनों.”

नीता ने खिसियानी हंसी के साथ कहा, “आपको क्या पता, बेटी को इतने दिनों बाद पाकर कैसा लगता है”

“सच कह रही हो, मां के दिल को मैं कैसे समझ सकता हूं.”

अनिका का हाथ पकड़कर नीता अंदर ले आई, बोली, “बेटी, मैंने सदा तेरे साथ बुरा बर्ताव किया. तुझे पराया समझती रही. आज मुझे अपनी गलती का अहसास हो रहा है. मेरी समझ में नहीं आता कि कैसे एक मां अपनी जायी बेटी के साथ दुर्व्यवहार कर सकती है, उसे एक बोझ समझ सकती है. लगता है, मेरे ही संस्कारों में कोई कमी रह गयी थी.”

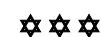
“मां, आप कैसी बातें कर रही हैं? मैंने तो कभी ऐसा नहीं समझा. मां हमेशा अपने बच्चों का भला चाहती है.”

भावतिरेक में नीता का गला भर आया. कुछ न कहकर उसने अनिका को अपने अंक में समेट लिया.

जिस दिन अनिका अपने प्रथम असाइनमेंट पर मुंबई जा रही थी, उस दिन फिर नीता की आंखों में आंसू भरे थे. उसे अपने अंक में समेटते हुए बोली, “बेटी, जाते-जाते मैं एक बात स्वीकार करती हूं कि जिसे मैं घर का चिराग समझती थी. वह जुगनू भी नहीं निकला और मैं जिसे कंकड़ समझकर टुकराती रही, वह हीरा निकला, बेटा, तुम्हीं मेरे घर का चिराग हो. आशा करती हूं कि अपने जीवन में कोई ऐसा कदम नहीं उठाओगी, जो हमें बेटे की तरह दुख दे जाए.”

अनिका मां का आशय समझ गयी. दृढ़ स्वर में बोली, “मम्मी, आप मेरी तरफ से निश्चित रहें. अव्वल तो ऐसा कुछ होगा नहीं, परंतु परिस्थितियों के अनुसार मनुष्य भी बदलता रहता है. अगर ऐसा कुछ हुआ तो आपके और पापा की सहमति और आशीर्वाद से ही ऐसा होगा. मैं अब दोनों को कभी दुःख नहीं दे सकती. आप पापा का ख्याल रखना.”

केशव बाबू स्वयं को बहुत दृढ़ समझते थे, परंतु बेटी से जुदा होते हुए उनकी आंखों में आंसुओं का समंदर लहरा रहा था.



डर

वह उदास थी, बहुत अधिक उदास। आसमान में चांद खिला था। उसकी दूधिया रोशनी चारों तरफ फैली थी। चांदनी रात का भीना-भीना वातावरण मन को अभिसारमय बना रहा था, परन्तु उसके मन में कोई आह्लाद, कोई खुशी व्याप्त नहीं हो रही थी। चांदनी रात का ठण्डक भरा अहसास भी उसके मन को ठंडा नहीं कर पा रहा था। उसके मन में कोई आग सुलग रही थी और वह उस आग में धीरे-धीरे तप रही थी। न वह आग को बुझाने में समर्थ थी, न अपने मन को किसी प्रकार से शान्त करने में सफल हो रही थी।

उसके मन में प्यार की आग थी।

मां ने आज उसे बुरी तरह से डांटा था। उसकी कोई ग़लती नहीं थी, परन्तु मां की नज़र में वह ग़लती कर रही थी। ये भी कोई ग़लती है, उसने सोचा। वह तो विवेक से मोबाइल पर बातें ही कर रही थी। वह उसका सहपाठी है और एक अच्छा दोस्त है। दोस्त से भी अधिक कुछ और...शायद प्रेमी। हां, वह उसका प्रेमी है। वह उसे प्यार करती है, तभी तो हर घड़ी उसी के बारे में सोचती रहती है, उससे मिलने के लिए बेचैन रहती है। उसका फोन आता है, तो कली की तरह खिल जाती है, भंवरो की तरह गुनगुनाती है, तितलियों की तरह उसका मन उड़ने के लिए बेताब हो जाता है और वह कामना करने लगती है कि काश, उसके पंख होते और वह उड़कर उसी पल विवेक के पास पहुंच जाती।

आजकल उसका मन पढ़ने में नहीं लगता था। किताब लेकर बस वह सोचती सी बैठी रह जाती थी। किताब के हर पन्ने पर उसे विवेक की तस्वीर दिखाई देती थी। मन उसके पास दौड़कर चला जाता। कमरे में केवल उसका तन किताब के साथ चिपका रहता था, परन्तु मन विवेक के पास होता। ऐसे में उसकी निगाहें पत्थर की

आंखों की तरह किताब पर टंगी रहतीं। न आंखों को कुछ दिखाई देता, न मन को कुछ समझ में आता। बड़ी विचित्र स्थिति थी उसकी। कहीं कोई आवाज़ होती तो उसे सुनाई न पड़ती। मां आवाज़ें लगाती हुई उसके पास आकर खड़ी हो जातीं, तब भी उसके कानों में जूं न रेंगती और वह अपने सपनों के संसार में अपने राजकुमार के साथ खोई-खोई बैठी रहती।

उसकी इस स्थिति से मां बहुत परेशान रहने लगी थीं। वह समझ गई थी कि बेटी को प्यार का रोग लग गया है और जब तक यह उसके शरीर को दीमक की तरह चाट नहीं जाएगा, वह सुधरनेवाली नहीं है, न कुछ समझने वाली है। प्यार में हर लड़के-लड़की की समझदारी काफूर की तरह उड़ जाती है, परन्तु उड़ते-उड़ते दूसरों की आंखों में धुएं की तरह कड़वाहट भर जाती है। अक्षिता का प्यार आजकल उसकी मां की आंखों को खटकने लगा था, परन्तु वह खुलकर बेटी से कुछ कह नहीं पाती थीं। अक्षिता के बारे में सोच-सोच कर वह एक अनजाने, अनचाहे डर से कांप-कांप जातीं। हर जवान बेटी की मां को यह डर सताता है।

अक्षिता नहीं जानती थी कि मां के मन में क्या था। उसे केवल अपने मन के बारे में पता था। वह अच्छी तरह जानती थी कि वह प्यार की अनजानी डगर पर चल पड़ी थी, परन्तु वह नहीं जानती थी कि यह डगर उसे कहां तक ले जाएगी। वह अभी नादान थी, उसके मन में उत्सुकताएं थीं, जिज्ञासाएं थी। इन्हीं उत्सुकताओं और जिज्ञासाओं को शांत करने के लिए वह विवेक से प्रेम कर बैठी थी।

उसका मन उसके वश में नहीं था। उसका मन तो विवेक के पास गिरवी हो चुका था।

आज अक्षिता की मां का धैर्य जवाब दे चुका था। अक्षिता के हालात ही ऐसे हो चुके थे कि हर मां-बाप को देखकर कष्ट होता। वह सुबह बन-ठनकर निकलती थी और देर रात को वापस आती थी। बहानों की कोई कमी उसके पास नहीं थी, परन्तु हर बेटी के मां-बाप को पता होता है कि उसकी बेटी कब झूठ बोलती है, कब सच! हर रोज़ अक्षिता का झूठ पकड़ा जाता। उसकी मां खीझकर रह जातीं, बोलतीं कुछ नहीं। पता नहीं क्यों डरती थीं? गनीमत थी कि पापा तक अभी बात नहीं पहुंची थी। मम्मी ने सारे राज़ अपने तक ही सीमित कर रखे थे।

आज कॉलेज बंद था। अक्षिता सुबह से ही अपने कमरे में बंद हो गयी थी और विवेक के साथ बातें कर रही थी। उसकी बातें लगातार चलती ही जा रही थीं। वह कमरे से निकल ही नहीं रही थी। पिताजी अक्षिता के कामों में दखल नहीं देते

थे, परन्तु मां की निगाह बेटी की हर हरकत पर होती है। सुबह से ही बेटी कमरे में बंद हो, तो मां को सबसे ज़्यादा चिंता होती है। मां को बेटी की हर बात का पता होता है। बिना देखे उन्हें पता था कि बंद कमरे में अक्षिता क्या कर रही थी। उसी के बारे में सोच-सोचकर मम्मी का पारा चढ़ता जा रहा था और जब सबकुछ बर्दाश्त के बाहर हो गया तो उन्होंने दोपहर के वक़्त अक्षिता के कमरे का दरवाजा खटखटा दिया, कुछ इस तेजी से कि जैसे कोई तूफ़ान आ गया हो। अक्षिता को बहुत बुरा लगा, परन्तु फोन बंद करके उसे दरवाजा खोलना ही पड़ा।

दरवाजे पर मां का तमतमाया हुआ चेहरा अपने पूरे अस्तित्व के साथ खड़ा था और दरवाजा खुलने के बाद उसे खा जानेवाली निगाहों से घूर रहा था। पहले तो अक्षिता सहम गयी, परन्तु फिर जी कड़ा करके कहा, “क्या है मम्मी, छुट्टी के दिन भी आराम नहीं करने देती।”

“बेटी, इतना भी आराम न करो, कि मां-बाप का जीना हराम हो जाय?”

“क्यों?” अक्षिता कुछ समझी नहीं, आंखों को झपकाकर मां की तरफ़ ध्यान से देखा। मां उसको देखकर आग-बबूला हो रही थीं।

“तुम अच्छी तरह समझती हो कि ‘क्यों’ का क्या मतलब है? बेटी, जिस तरह का तुम आराम कर रही हो, वह एक जवान बेटी के मां-बाप की नींद उड़ाने के लिए काफी है। बहुत दिनों से मैं देख रही हूँ, तुम जिस राह पर चल रही हो, वह तुम्हें किसी न किसी दिन बरबाद करके छोड़ेगी। तुम्हारी बरबादी हमारे लिए नरक के दरवाजे खोल देगी। मैं तुम्हें किस तरह समझाऊँ? मैं अपने दिल का दर्द किसी को बता नहीं सकती। तुम्हारे पापा को बताऊँ तो उनके दिल पर क्या गुजरेगी, क्या तुम अनुमान लगा सकती हो? उनका काम करना मुश्किल हो जाएगा। फिर किस तरह वह ऑफिस के काम में ध्यान देंगे, किस तरह घर संभालेंगे। बेटा अभी कमाने लायक नहीं हुआ है। तुम दोनों को अच्छी शिक्षा देने के लिए तुम्हारे पापा रात-दिन एक किए रहते हैं। अपनी मेहनत से उन्होंने हम लोगों को एक सम्मानजनक ज़िन्दगी प्रदान की है। परन्तु तुम जिस जंज़ाल में फंसी हो, उसके बारे में सोचकर मेरी रातों की नींद हराम होती जा रही है। तुम्हारे पापा को मैंने अभी कुछ नहीं बताया है, परन्तु एक दिन उन्हें भी तो पता चलना ही है। कितने दिन तक तुम्हारी हरकतें किसी से छिपी रह सकती हैं। पड़ोसियों के माध्यम से एक न एक दिन उन तक पहुंचनी ही हैं।”

मम्मी सांस लेने के लिए रुकीं और फिर बोलने लगी, “दिन भर मैं इसी चिंता में डूबी रहती हूँ, कि घर से बाहर जाकर पता नहीं तुम क्या कर रही होगी, किस

ग़लत काम को अंज़ाम दे रही होगी। जवान बेटी मां के लिए सबसे बड़ी चिंता का कारण होती है। तुम क्यों अपनी समझदारी से काम नहीं लेती, क्यों इस छोटी सी उमर में प्रेम के जंज़ाल में अपने को फंसा बैठी हो। अभी तुम्हारी पढ़ने की उमर है, उस तरफ़ ध्यान दो। मां-बाप की खुशियों और उनके सपनों की तरफ़ ध्यान दो। दुनिया में किसी का भी प्यार अमर नहीं होता। जिस क्षण हम जिससे प्यार करते हैं, वही हमें सबसे अधिक प्यारा, अटूट और अमिट लगता है, परन्तु अगले ही क्षण हमें दूसरे का प्यार अमर, अमिट और अटूट लगने लगता है। प्यार हमें बहुत भरमाता है, बेटी!”

मां का लंबा-चौड़ा व्याख्यान उसको अच्छा नहीं लगा। वह समझ गयी कि मां को उसके प्यार से सख़्त नाराज़गी है, परन्तु वह क्या कर सकती है? मां नाराज़ हैं, तो हुआ करें? वह अपने मन को किसी भी तरह विवेक से अलग नहीं कर सकती। कर ही नहीं सकती। विवेक ने पता नहीं उस पर कैसा जादू कर दिया है कि उसके अलावा न तो उसे कोई दूसरा लड़का अच्छा लगता है, न कोई वस्तु। आज उसकी समझ में आ रहा था कि प्यार और शिक्षा का आपस में बहुत बर है, परन्तु यह कमबख़्त प्यार भी तो उसी उमर में होता है, जो उमर पढ़ाई-लिखाई की होती है। ऐसे में कोई युवा अपने मन को कैसे काबू में रखे? अक्षिता के वश में कुछ नहीं था। मम्मी उसकी विवशता को नहीं समझ सकतीं, क्योंकि वह एक मां हैं, प्रेमिका नहीं।

मां बड़ी देर तक अपना व्याख्यान देती रहीं, और वह चुपचाप सुनती रही। ..अविचल, जैसे उसे कुछ समझ में नहीं आ रहा था।

अंत में मम्मी ने धमकी देते हुए कहा, “एक बात गांठ में बांध लो बेटी, अगर तुम अपनी हरकतों से बाज़ नहीं आई तो मैं तुम्हें घर पर बिठा दूंगी और अगले ही दिन किसी लूले-लंगड़े से शादी कर दूंगी। फिर मैं अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा का ख़याल नहीं करूंगी कि लोग क्या कहेंगे? तुम जिस तरह की बदनामी का कारण बन रही हो, उससे अच्छा तो यही होगा कि किसी की परवाह न करते हुए मैं तुम्हारी शादी ही करवा दूँ। तुम्हारी प्रेमलीला से यह कम कष्टकर होगा।”

मां की अंतिम बात से वह दुःखी भी थी और नाराज़ भी...और वह सारी कायनात से ख़फ़ा थी। इतनी अच्छी चांदनी रात उसकी आंखों में तीखी धूप सी चुभ रही थी। वह अपने कमरे की खिड़की पर खड़ी होकर बाहर की छिटकी हुई चांदनी देख रही थी। चांद धीरे-धीरे ऊपर चढ़ता जा रहा था और उसी के साथ उसका पारा भी चढ़ता जा रहा था। आखिर पुरानी पीढ़ी को युवाओं के प्यार-मोहब्बत से

क्यों इतनी नफरत होती है? क्या उन्होंने अपनी जवानी में कभी प्यार नहीं किया था? अवश्य किया होगा. अक्षिता अभी बीस साल की थी, परन्तु इतना तो समझती थी कि हर पुरुष और नारी को अपने जीवन में किसी न किसी से प्यार अवश्य होता है. यह अलग बात है कि जब उनके बच्चे जवानी के प्यार से मुब्तिला होते हैं, तो मां-बाप को अच्छा नहीं लगता.

प्रेम में मनुष्य को जेट की तपती दोपहरी भी शीतल लगती है, पहाड़ मैदान लगते हैं और रेगिस्तान उन्हें खिला हुआ बागीचा जैसा दिखता है. बारिश में भीगना अच्छा लगता है, तो सर्दी में गर्मी का अहसास होता है. आंखों में हजार रंग भरे होते हैं और दुनिया में सुन्दर रंगों के सिवा कुछ और नहीं दिखता, लेकिन जब विरह की छाया प्रेमियों और प्रेमिकाओं के ऊपर पड़ती है तो सारे रंग फीके पड़ जाते हैं, फूल भी कांटे लगने लगते हैं, चांदनी की शीतलता धूप की मानिन्द तपने लगती है, बारिश की बूंदें आग की चिन्गारियों में बदल जाती हैं और दो कदम चलना विरहियों के लिए भारी हो जाता है.

अक्षिता अभी प्रेम के रंगों डूबी थी और इसके अलावा दुनिया का और कोई रंग उसे अच्छा नहीं लगता था. मां की बातें उसे ज़हर बुझी लगती थीं. मां की डांट से उसका मन विद्रोही होने लगा था. मां की सतर्क निगाहों से उसे कोफ्त होने लगी थी. मां की बातों से उसे उबकाई सी आती और वह अपने कानों को बंद कर लेना चाहती थी. परन्तु मां की धमकी से वह डर भी गई थी, कहीं मां उसकी शादी ही न कर दें. विवेक के सिवा किसी और से शादी करने के बारे में वह सोच भी नहीं सकती थी. सोचकर ही उसका दिल दहल जाता था. फिर...फिर क्या करे वह कि विवेक सदा के लिए उसका हो जाय. वह चकराकर रह गयी है. उसकी सोचने-समझने की शक्ति क्षीण होती जा रही है.

उसकी समझ में नहीं आता, क्यों उसकी मां उसके प्रेम करने के इतना खिलाफ हैं. कॉलेज की अन्य लड़कियां भी तो लड़कों से प्रेम करती हैं, उनके साथ घूमती-फिरती हैं, सिगरेट पीती हैं और होटलों में जाती हैं. होटल के बंद कमरों में क्या करती हैं, यह क्या किसी से छिपा है? क्या उनकी मांएं भी उन्हें डांटती होंगी, अक्षिता सोचती है. वह तो केवल विवेक के साथ घूमती फिरती है, उसके साथ एकान्त में बैठती है, वह दोनों एक दूसरे को स्पर्श करते हैं, 'किस' करते हैं, बस...इसके सिवा और कुछ नहीं; परन्तु अब उसका मन भी अनजाना-अनोखा सुख प्राप्त करने के लिए ललकने लगा था.

वह बहुत कुछ करना चाहती है, जैसा कि दूसरी लड़कियां करती हैं. वह उनके अनुभव सुनती है, और उसका बदन सिहर कर रह जाता है. एक अनजानी अनुभूति से उसका मन खिल-खिल जाता है और उस अनजानी अनुभूति से प्रत्यक्ष रूप से गुजरने के लिए उसका हृदय धड़कने लगता है. विवेक ने कई बार इशारों-इशारों में उसे बताया कि वह उससे क्या चाहता था; परन्तु जब वह इसके लिए तन से तैयार होती तो उसका मन विद्रोह कर देता और वह पीछे हट जाती. विवेक खीझकर रह जाता और कई बार तो उसने उसे डांट भी दिया था, परन्तु वह भी क्या करे? सबकुछ चाहते हुए भी पता नहीं कौन सा डर उसके मन में बैठ जाता और वह ऐन मौके पर विवेक की पकड़ से दूर हो जाती.

परन्तु अब उसने मन में ठान लिया था कि वह स्वयं को विवेक के चरणों में समर्पित कर देगी. वह उसकी हो जाएगी और उसे पूरी तरह प्राप्त करके रहेगी. वह भी वह सबकुछ करेगी, जो दूसरी लड़कियां करती हैं. अगर उन लड़कियों पर उनके मां-बाप का कोई प्रतिबंध नहीं है, तो उसके ही ऊपर क्यों? मां को क्या पता चलेगा, कि उसने क्या किया है? वह अपने मन में कुछ भी सोचती रहें. अगर मां को पता चल भी गया कि उसने अपना कौमार्य गंवा दिया है तो वह क्या कर लेंगी? ऐसी स्थिति में मज़बूरन उन्हें उसकी शादी विवेक के साथ करनी पड़ेगी. यही तो अक्षिता चाहती थी.

विद्रोह मनुष्य को अक्सर पतन के कुएं में गिरा देता है, क्योंकि विद्रोह करते समय वह अपने विवेक का सहारा नहीं लेता. खासकर स्थापित मापदंडों और मूल्यों के विरुद्ध जब वह विद्रोह करता है, तो मनुष्य कुछ ऐसा कर जाता है, जो समाज को मान्य नहीं होता है. और उसे भी कुछ ऐसा हासिल नहीं होता कि उसका मन स्थायी खुशी प्राप्त कर सके या उसकी उपलब्धि पर वह गर्व कर सके.

समाज के सभी स्थापित मूल्य गलत नहीं होते कि हम सदा उनकी खिलाफ़त करते रहें.

प्रेम की डगर हमें ऐसे अंधे कुएं की तरफ़ ले जाती है, जिसमें बार-बार गिरने का मन करता है और उसमें गिरने के लिए हम सभी सामाजिक स्थापनाओं और मापदंडों के खिलाफ़ विद्रोह करते रहते हैं.

जवानी के प्यार में समझदारी और तार्किकता का नितांत अभाव होता है. यह मन से नहीं आंखों को दिखाई देनेवाले सौन्दर्य और यौन आकर्षण से उत्पन्न होता है. इसीलिए इसकी परिणति सदैव शारीरिक मिलन पर जाकर होती है. अवैध शारीरिक मिलन हमें किसी न किसी परेशानी में अवश्य डालते हैं.

रात भर की अनिद्रा के बाद जब अक्षिता कॉलेज में विवेक से मिली तो वह समझ गया कि अक्षिता के साथ कोई अनहोनी हुई है। वह जानता था कि उसे कुछ पूछने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। अक्षिता स्वयं ही सब कुछ उसे बता देगी। यही हुआ, अक्षिता उसे एकान्त में ले जाकर बोली-

“मुझे डर लग रहा है?”

“किस बात का डर?” विवेक ने उसकी गर्दन में हाथ डालकर उसके सिर को सीधा करते हुए उसकी गमगीन नम आंखों में झांककर देखा...अक्षिता सिहर गयी। उसके सीने से लगती हुई बोली- “कहीं हमारा प्यार अधूरा न रह जाए।”

“अधूरा से तुम्हारा क्या मतलब?” उसने अक्षिता को अपनी तरफ खींचा। वह अक्षिता की मनोस्थिति को अच्छी तरह समझ गया था। लड़कियां जब दुःखी होती हैं या किसी चीज से डरती हैं, तो बहुत जल्दी अपने आपको लड़कों को समर्पित कर देती हैं। इसी पल का वह कितने दिनों से इंतज़ार कर रहा था।

“यहीं कि हम दोनों अलग न हो जाएं?”

विवेक को अक्षिता के डर का पता चल गया। वह मन ही मन मुस्कराया। बोला, “ये तो होना ही है। यह लगभग सभी प्रेमी-प्रेमिकाओं के साथ होता है। तुम स्वयं देख लो, हमारे समाज या देश में प्रेम-विवाहों का प्रतिशत कितना है। लगभग नगण्य; परन्तु प्रेम शत-प्रतिशत स्त्री-पुरुष करते हैं।”

“तो फिर अपना प्यार पाने के लिए हम क्या करें?” अक्षिता भोली बनकर पूछ रही थी। परन्तु वह भोली नहीं थी। यह तो उसने कल ही तय कर लिया था कि उसे क्या करना था। उसे अपनी मां से बदला लेना था। कुछ ऐसा करके, जिससे मां का डर सच में बदल जाए।

“कुछ नहीं पगली!” विवेक ने उसकी भावनाओं को अपने वश में करते हुए कहा, “जवानी का प्यार यौन-सुख भोगने के लिए होता है, शादी करने के लिए नहीं। इसका अंत यही है कि जिस सुख से हम दोनों अभी तक वंचित हैं, उसे जल्द से जल्द प्राप्त कर लें। फिर हमारे लिए दुःख का कोई कारण नहीं बचता। आजकल सारे लड़के-लड़कियां यही कर रहे हैं। निगाहें मिलते ही वह एक दूसरे के कपड़े उतारने लगते हैं। सब कुछ सुपरसोनिक गति से हो रहा है। किसी के पास प्रतीक्षा करने का समय नहीं है। तुम कुछ ज़्यादा ही धरेलू किस्म की लड़की हो, इसीलिए खुल नहीं पा रही हो, परन्तु वही सुख प्राप्त करने के लिए बेचैन भी हो। इसीलिए दुखी रहती हो। चिन्ता छोड़कर यौन-सुख लूटो, फिर देखना किस तरह तुम्हारे चेहरे पर रौनक चमकती है और सारी लड़कियों की तरह चहकती हुई घूमोगी।”

अक्षिता ने मार्मिक भाव से विवेक की आंखों में देखा, जैसे कह रही हो- चाहती तो मैं भी यही सब हूँ, परन्तु एक डर का भाव जो मेरे हृदय में बैठा हुआ है, मुझे स्वच्छंद और आज़ाद होने से रोक रहा है। तुम्हारी मोहक बातों से मेरा डर काफ़ी हद तक दूर हो चुका है। यौन-सुख प्राप्त करने की तीव्र भावना मेरे अन्दर घुमड़ने लगी है। डर को दबाकर मैं अपनी दबी भावनाओं की पूर्ति करना चाहती हूँ।

सोचते-सोचते वह पूरी ताकत से विवेक के शरीर से चिपट गयी, कुछ इस भाव से कि जो चाहे करो मेरे साथ, परन्तु जल्दी करो। अब मैं पीछे हटनेवाली नहीं हूँ। अब नहीं तो कभी नहीं। आज अगर उसने सुख नहीं लूटा, तो फिर सुखों के सारे द्वार उसके लिए सदा के लिए बंद हो जाएंगे।

विवेक यही तो चाहता था। कितने दिनों से अक्षिता के अक्षत यौवन और कौमार्य का सुख लूटना चाहता था, परन्तु वह खुल ही नहीं पा रही थी। पारम्परिक मर्यादा और नैतिकता का सख्त आवरण उसने ओढ़ रखा था। पारिवारिक संस्कार उसे आगे बढ़ने से रोक रहे थे, परन्तु यौन-सुख की कामना ने उसके सारे आवरण उड़ा दिये थे, संस्कारों के बंधनों को तोड़ दिया था और अब वह विवेक के हाथों पूरे अविवेक के साथ कठपुतली बनकर नाचने के लिए तैयार हो गयी थी।

अक्षिता ने विद्रोह किया और खुलकर किया। विद्रोह में जब उसके तन के कपड़े खुले तो सारे अंग भी खुल गये और उसने होटल के अंधेरे कमरे में जो खेल खेला, वह उसे अच्छा तो लगा, परन्तु खेल समाप्त होने के बाद वह ऐसी ग्लानि से भर उठी कि उसका अंग-अंग कांप गया...क्या उसने सही किया है। क्या मां ने उसे इसी ‘काम’ से दूर रहने के लिए कहा था, क्या इसी के लिए वह मना करती रहती थीं?

वह बिस्तर पर बैठी यौन-सुख की अद्भुत अनुभूति के साथ ग्लानि और आत्मग्लानि की मिली-जुली अनुभूति के साथ विचारों में निमग्न बैठी थी कि उसे पता नहीं चला, कब बाथरूम का दरवाजा खोलकर एक अन्य लड़का उसके बिस्तर के सामने आ खड़ा हुआ था। वह उसे पहचानती थी। वह विवेक का दोस्त रंजन था। अक्षिता संज्ञाशून्य-सी बैठी की बैठी रह गयी, पूरी नंगी की नंगी। दहशत और डर के कारण वह अपना नंगापन तक भूल गयी और एकटक रंजन को ताकती बैठी रह गयी थी। तभी विवेक उछलकर बिस्तर से बाहर हो गया।

“रंजन जल्दी कर! अभी लोहा गर्म है. वह सदमे की सी स्थिति में है, विरोध नहीं करेगी.” कहकर वह बाथरूम में घुस गया. इधर रंजन ने चीते की तरह उसके ऊपर छलांग लगा ली. अक्षिता बचने-भागने की स्थिति में नहीं थी. रंजन ने उसे मौका ही नहीं दिया और एक चतुर चीते की तरह उसके बदन को नोचकर खाना शुरू कर दिया.

सब कुछ खत्म हो गया. अक्षिता को यौन-सुख तो प्राप्त हुआ, परन्तु किस कीमत पर! उसने अपना कौमार्य खोया ही, परन्तु साथ ही अपनी मर्यादा भी खो दी, अस्मिता की ध्वजियां उड़ा दीं, नैतिकता को तार-तार कर दिया. जो कुछ उसके साथ हुआ था, क्या वह बलात्कार नहीं था? हालांकि विवेक के सामने उसने स्वयं को पूरे होशोहवाश में समर्पित किया था, परन्तु रंजन ने तो उसके शरीर को उसकी मर्जी के बगैर भोगा था? इसमें विवेक के साथ उसकी साजिश थी. तो क्या दोनों उसके बलात्कार के दोषी नहीं थे?

तरह-तरह के विचार उसके दिमाग में घुमड़ रहे थे.

उसकी मां का रौद्र रूप उसकी आंखों के सामने गरजता-बरसता, लानत-मलामत करता उपस्थित हो गया. उसने आंखें मिलमिला कर देखा, परन्तु मां का चेहरा अदृश्य नहीं हुआ. वह बेतरह डर गयी. यह क्या कर दिया उसने. बिना शादी-ब्याह के उसने अपना तन एक पर-पुरुष को सौंप दिया. दूसरे ने उसके तन को लूट लिया था. एक को वह प्यार करती थी, परन्तु उसके साथ किसी बंधन में नहीं बंधी थी. दूसरे के साथ उसका कोई भावनात्मक लगाव नहीं था. दोनों ने उसको भोगा था, तो क्या यह अपराध नहीं था? क्या यह ग़लत नहीं था? क्या होगा इसका परिणाम?

अक्षिता विगडैल लड़की नहीं थी. वह एक कोमल दिल की, निश्छल, घरेलू और सीधी-सादी लड़की थी. बहुत आधुनिक भी नहीं थी, परन्तु कॉलेज के स्वतंत्र वातावरण और सहेलियों के खुले विचारों के कारण प्रेम में पड़ गयी थी. खुले वातावरण की चकाचौंध रोशनी में उसकी आंखें मुंद गई थीं. प्रेम से प्राप्त होनेवाले सुखों के बारे में उसने सोचा था, परन्तु इसके दुष्परिणामों की तरफ़ उसका ध्यान नहीं गया था.

उसे लग रहा था कि उसने जो वासना का खेल विवेक और रंजन के साथ होटल के बंद कमरे में खेला है, मां ने उसे प्रत्यक्ष देखा है और अभी तक उसे देख रही हैं. मां की आंखें आग उगल रही हैं और वह उस आग में झुलसती जा रही है. मां के क्रोध की आग से वह कैसे बच सकती थी?

वह लस्त-पस्त थी, परन्तु किसी तरह अपने को संभाला. विवेक बाथरूम में था और रंजन अभी तक नंग-धड़ंग बिस्तर पर लेटा अलौकिक सुख के अनुभव से गुजर रहा था. उसने झटपट कपड़े पहने और कमरे का दरवाजा खोल दिया. उसके हाथ-पांव कांप रहे थे. दरवाजा खुलने पर रंजन चौंका, “क्या हुआ, कहां जा रही हो?” तब तक विवेक भी बाथरूम से बाहर आ गया था.

उसने रंजन की बात का जवाब नहीं दिया. विवेक की तरफ़ देखा तक नहीं. उन दोनों को संभवतः अंदाज़ नहीं था कि इतना सब होने के बाद वह अकेले बाहर निकल जाएगी. उनकी लापरवाही का फ़ायदा उठाकर अक्षिता ने किसी तरह अपने कपड़े पहने और तेज़ी से बाहर निकल गयी. वह दोनों हक्के-बक्के अंदर रह गये.

गैलरी में आते ही उसने राहत की एक लंबी सांस ली, परन्तु तभी उसे सामने से एक बैरा आता हुआ दिखाई दिया. वह हल्के से ठिठकी और फिर इधर-उधर ताकने लगी, जैसे वह कोई चोरी कर रही थी.

बैरा उसे लगातार देखे जा रहा था, यह वह महसूस कर रही थी. उसने फिर मुंह घुमाकर बैरे की तरफ़ देखा. बैरे की निगाहों में उसे वासना के कीड़े उड़ते हुए दिखाई दे रहे थे. उसे लगा कि वह पूरी तरह से नंगी है और उसे नंगा देखकर बैरे की आंखों में एक भूख सी जाग गयी थी, वैसी ही भूख जैसी विवेक की आंखों में उसके कपड़े उतारते समय जागी थी. वह फिर से कांप गयी.

उसे लगा कि बैरा उसके नंगे बदन को अपने बदन से लपेटने ही वाला है. उसने अपने बदन को दोनों हाथों से छिपाने का प्रयास किया. इस स्थिति में वह बड़ी ही हास्यास्पद लग रही थी, परन्तु उसे इसका भान नहीं था. बैरा उसके बिल्कुल करीब आकर खड़ा हो गया. अब वह उसे धर-दबोचेगा. ‘नहीं...!’ वह जोर से चीखी, और बेतहाशा होटल की सीढ़ियों की तरफ़ भागी. उसे लगा, बैरा पीछे से कह रहा था, ‘मैडम, अभी तो मेरी बारी है. कहां भागी जा रही हो?’

परन्तु बैरे ने कुछ नहीं कहा था. वह बस एक भेदभरी मुस्कान से उसकी सुन्दर पीठ और गोल नितंबों को देखे जा रहा था.

अक्षिता को लगातार यही अहसास हो रहा था जैसे वह नंगी दौड़ रही थी और उसके पीछे-पीछे लोगों का हुजूम उसको पकड़ने के लिए दौड़ रहा था. सीढ़ियां उतरकर किस तरह वह लॉबी में पहुंची थी, कैसे उसने अपने इर्द-गिर्द लोगों को खड़े देखा था. लॉबी में बैठे सभी उसको नंगा देखकर पकड़ने के लिए उठ खड़े हुए थे. इस बार उसकी चीख उसके गले में ही फंसकर रह गयी थी. वह और तेज़ी से दौड़ने लगी थी.

उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि किस प्रकार लड़कियां होटलों में बार-बार आती हैं. कितनी साहसी होती हैं ऐसी लड़कियां जो हर प्रकार के मर्दों की निगाहों को झेल लेती हैं. अक्षिता ने आज पहली बार इतना बड़ा कदम उठाया था और आज पहली बार ही उसका दिल भय से हिल रहा था. वह पूरे कपड़े पहने हुए थी, परन्तु चेतन और अवचेतन, दोनों ही अवस्थाओं में स्वयं को नंगा महसूस कर रही थी. उसकी मनःस्थिति बहुत खराब थी.

होटल से बाहर आकर उसे थोड़ी राहत मिली. खुली हवा में उसने एक लंबी सांस ली. फिर भी घबराहट कम नहीं हुई. उसने इधर-उधर देखा. चारों तरफ़ शोर था, लोग आ-जा रहे थे. लोगों की भीड़ उसे एक विशाल अजगर के समान लग रही थी, परन्तु यह अजगर अपनी ही चाल में चलता जा रहा था. उसे अक्षिता के नंगे शरीर से कोई लेना-देना नहीं था.

सड़क पर चलते हुए लोग एक दूसरे से बेफिक्र थे, किसी को किसी की परवाह नहीं थी. यह दुनिया ऐसी ही है. यहां किसी को किसी से कुछ लेना-देना नहीं होता. हम केवल अपने स्वार्थ के लिए एक-दूसरे से जुड़ते हैं, स्वार्थ के लिए जीते-मरते हैं, और उसी के लिए जोड़-तोड़ करते-रहते हैं. जब हमारा स्वार्थ पूरा हो जाता है, तो हम एक-दूसरे से अलग हो जाते हैं.

प्यार भी तो एक स्वार्थ है, प्यार का सुख भोगने के लिए ही तो हम एक दूसरे से जुड़ते हैं और जब प्यार के चरम को पा लेते हैं, तो हमें उससे एक विरक्ति सी हो जाती है. उसी विरक्ति के कारण हमारा प्यार मरने लगता है. जब तक सौन्दर्य का आकर्षण रहता है, तब तक प्यार का भी आकर्षण बना रहता है, नहीं तो वह मर जाता है. इतिहास गवाह है, मरते दम तक एक ही स्त्री-पुरुष को प्यार करनेवाले अपवाद की श्रेणी में आते हैं.

अक्षिता बदहवाश थी, बदहाल थी. उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि उसने अच्छा किया था या गलत...परन्तु उसके मन में एक डर बैठ गया था. क्या यह डर उसके मन में उसकी मां की सतर्क निगाहों और उनकी डांट की वज़ह से आया था? वह कह नहीं सकती थी, परन्तु वह बुरी तरह डर गयी थी. उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि अपने मन के इस डर को वह कैसे दूर करे.

जो कुछ उसने किया था, सोच-समझकर किया था. हालांकि रंजन के साथ होनेवाली क्रिया में न तो उसकी सहमति थी न सहयोग...वह तो पूरी तरह से उसके साथ बलात्कार था. तो क्या वह इसी कारण से डर रही थी. नहीं...उसे लग रहा

था कि केवल विवेक और रंजन ने ही उसे नंगा नहीं देखा है, केवल उन्होंने ही उसे नहीं भोगा है; बल्कि होटल से लेकर घर के रास्ते तक जितने भी पुरुष उसके आस-पास से गुजरे हैं, उन सभी ने उसे नंगा किया है और उसे जी-भर के भोगा है. वह टूट गयी है. उसका शरीर संज्ञाशून्य हो गया है. उसे लगता है कि उसके बदन के इर्द-गिर्द अनगिनत सांप-बिच्छू लिपटे हुए हैं, जिन्हें वह चाहकर भी अपने बदन से हटा नहीं सकती. हटाने का प्रयास करती है तो और ढेर सारे सांप-बिच्छू उसके बदन से लिपटकर उसे डसने लगते हैं.

अक्षिता को पता नहीं था कि किस प्रकार वह घर पहुंची थी.

अक्षिता ने लाख कोशिश की कि उसकी मनःस्थिति से कोई अवगत न हो सके. घर पहुंचते ही वह अपने कमरे में बंद हो चुकी थी और बाथरूम में जाकर मल-मलकर नहाई थी, जैसे किसी गंदी चीज को अपने बदन से अलग कर रही थी, परन्तु जो कुछ गंदा था, वह उसके मन के अंदर था. उसे कैसे दूर कर सकती थी? वह किसी भी साबुन या पानी से नहीं धोया जा सकता था. नहा-धोकर और साफ-सुथरे कपड़े पहनकर अक्षिता ने सोचा था कि उसके तन-मन की गंदगी के बारे में किसी को पता नहीं चलेगा, परन्तु उसे पता नहीं था कि मां-बाप की निगाहें अपने बच्चों के प्रति इतनी सतर्क रहती हैं कि वह उनके हाव-भाव से उनके मन का पता लगा लेते हैं.

मम्मी समझ गयी कि अक्षिता के साथ वह सबकुछ हो चुका था, जिससे वह अभी तक डर रही थी. आज अक्षिता अपना अक्षत कुंवारापन गंवाकर आई थी. उनके मन में ही नहीं, तन में भी आग लग गयी, परन्तु उन्होंने अक्षिता से कुछ नहीं कहा. कुछ कहतीं, तो बात उठती और बात उठती तो घर के एकमात्र पुरुष तक भी पहुंचती. वह पुरुष इतना सीधा था कि उसे अपनी पत्नी के ऊपर अथाह विश्वास था. वह उसे अगाध प्रेम भी करता था. वह जानता था कि उसकी पत्नी के होते हुए उसके घर में कुछ ग़लत नहीं हो सकता था, इसीलिए निश्चिंत होकर वह केवल अपने काम में ध्यान देता था और घर की सारी जिम्मेदारी उसने पत्नी को सौंप रखी थी. यहां तक कि बच्चों की भी...लड़का तो यूं भी बाहर रहकर पढ़ रहा था. घर में केवल बेटी थी, मां के होते हुए कोई बाप बेटी के कामों में क्यों दखल दे?

मम्मी चुप रही, तो अक्षिता को और अधिक डर लगा. जब मां-बाप अपने बच्चों को किसी काम से वर्जित हैं, तो बच्चे विद्रोह करके उसी कार्य को करते हैं, परन्तु जब उन्हें किसी काम को करने से नहीं रोका जाता है, तो उनके मन में यह

डर बैठ जाता है कि उसके करने पर पता नहीं क्या बुरा हो जाएगा. यह एक ऐसी मानसिकता है, ऐसा मनोविज्ञान है, जिसे समझना बहुत कठिन है. वर्जनाओं को तोड़ने में ही मनुष्य को अधिक सुख की अनुभूति होती है और ऐसा करते हुए वह स्वयं को दूसरों के मुकाबले अति चतुर समझता है.

सारा दिन मां-बेटी के बीच अबोला रहा. शाम भी वैसे ही बीत गयी और रात का खाना भी सबने चुपचाप खाया. डाइनिंग टेबल पर बस मम्मी और पापा के बीच बातें हुई. पापा बहुत कम बोलते थे, अक्षिता से तो बहुत कम. अक्षिता बार-बार मां की ओर देखती, परन्तु मम्मी की आंखें पता नहीं कहां गुम थीं कि अक्षिता की आंखों से टकराती ही न थीं. अक्षिता को मम्मी की आंखों के भाव पता नहीं चल रहे थे.

दूसरे दिन भी मम्मी कुछ नहीं बोलीं. चुपचाप अपने काम को करती रहीं, अक्षिता की तरफ़ देखा भी नहीं तो अक्षिता के दिल को धक्का लगा. मम्मी के मन में क्या चल रहा है, वह समझ नहीं पा रही थी. मम्मी आगे क्या करेंगी, क्या उसकी ग़लती की ऐसी सज़ा देंगी कि कभी उससे बात नहीं करेंगी? इतना तो वह समझ गयी थी कि उसने कल जो किया है, वह मम्मी से छिपा नहीं रह गया है. परन्तु वह उससे बोलती क्यों नहीं, उसे डांटती क्यों नहीं? उसे डांटती तो उसके मन से अपरोधबोध कम हो जाता. परन्तु नहीं, मम्मी ने जैसे ठान रखा था कि अक्षिता अपने अपराध के बोझ तले स्वयं पिसती रहेगी, घुटती रहेगी और घुट-घुटकर सारी ज़िन्दगी जिएगी. वह उसे क्षमा नहीं करेंगी.

परन्तु अक्षिता घुट-घुटकर जीना नहीं चाहती थी, वह मरना भी नहीं चाहती थी. उसने ग़लती की थी, अपराध किया था, मम्मी की भावनाओं को ठेस पहुंचाई थी. वह भी क्या करती. वह आधुनिकता के चमकदार रंगों में डूब गयी थी. सारे लड़के-लड़कियां डूब जाते हैं, इसमें कोई अनोखी बात नहीं थी. आजकल सभी युवा यहीं करते हैं, परन्तु मम्मी की दयनीय स्थिति, उनका रुआंसा चेहरा, थका-थका सा शरीर, जैसे महीनों की बीमार हों, उससे देखा नहीं जा रहा था. मम्मी को देखकर लग रहा था जैसे अक्षिता के कृत्य को उन्होंने इतनी गंभीरता से अपने दिल पर लिया है कि वह उससे उबर नहीं पा रही हैं. बेटी के प्रति मां की अत्यधिक चिंता के कारण ऐसी स्थिति उत्पन्न होती है.

अक्षिता और ज़्यादा दुःखी और उदास हो गयी थी. कलवाली मनःस्थिति से तो उसने छुटकारा पा लिया था, परन्तु अब मां की स्थिति देखकर उसका हृदय चकनाचूर हुआ जा रहा था. वह जानती थी कि मां को सब कुछ अपने मन में सहते रहने की मजबूरी थी. वह बेटी की करतूत पापा को नहीं बता सकती थीं. मम्मी

की स्थिति देखकर ऐसा लग रहा था, जैसे अक्षिता ने नहीं, मम्मी ने ही वह अक्षम्य अपराध किया था.

अक्षिता करे तो क्या करे? कैसे अपनी मम्मी का विश्वास फिर से प्राप्त करे और एक अच्छी बेटी बनकर दिखाए. इस बीच विवेक के कितने फोन आए, परन्तु उसने उसका फोन रिसीव नहीं किया. फोन को उसने बंद ही कर दिया था. सबकुछ उसी के कारण हुआ था.

कॉलेज जाने का समय हो गया था. मम्मी ने बिना कुछ कहे उसके लिए डाइनिंग टेबल पर नाश्ता लगा दिया था. उसे रुलाई आने लगी. एक परिवार के लिए यह बड़ी ख़तरनाक स्थिति होती है, जब अपने ही अपनों से बोलना बंद कर दें. यह मृत्यु से भी भयानक होता है कि हम साथ रहते हुए भी न तो किसी से बात कर सकते हैं, न प्यार कर सकते हैं. अक्षिता के दिमाग में कई तरह के विचार घुमड़ रहे थे...ऐसी स्थिति में वह इस घर में कैसे रह पाएगी. घर के लोग ही अगर उसके दुश्मन हो जाएंगे तो उसके लिए कहां जगह बचेगी? क्या विवेक उसे सहारा देगा? हुंह, वह तो अभी पढ़ाई कर रहा है. वह स्वयं पढ़ाई कर रही है. दोनों की स्थिति ऐसी नहीं है कि घर से भागकर शादी कर लें. भागकर शादी कर भी लेंगे, तो गुजारा कैसे करेंगे? कहां से कमाकर लाएंगे? क्या मज़दूरी करेंगे, सोचकर ही अक्षिता की रूह कांप गयी.

अक्षिता कॉलेज जाने के लिए तैयार तो हो गई थी, परन्तु उसका जाने का मन नहीं कर रहा था. मम्मी की बेरुखी उसके दिल को चीरे दे रही थी. नाश्ता देखकर भी उसे भूख नहीं लगी. उसने किचन की तरफ़ देखा. मम्मी कुछ खटर-पटर कर रही थीं. पापा तो सुबह आठ बजे ही ऑफिस चले जाते हैं. तब तक वह सोती ही रहती है. आज भी पापा के ऑफिस जाने के बाद वह कमरे से बाहर निकली थी. पहले मम्मी उसे उठा दिया करती थी, परन्तु आज उन्होंने यह भी नहीं किया. वह जानती थी कि मम्मी उसे उठाने के लिए नहीं आएंगी. वह स्वयं उठकर बाहर आ गई थी. बाहर आकर भी उसे रेगिस्तान-सा सन्नाटा घर के अंदर पसरा हुआ मिला था.

नाश्ता वैसे ही मेज पर पड़ा रहा. उसने अपने दिल को कड़ा किया. उसे ही कोई न कोई कदम उठाना होगा. चाहे मम्मी उसे मारे, चाहे काटें, अपने अपराध की सज़ा भुगतने के लिए उसने अपने मन को तैयार कर लिया. वह धीरे से उठी और सहमते-सहमते किचन के दरवाजे तक गयी. उसने देखा, मम्मी वाश-बेसिन के पास खड़ी रो रही थीं. मम्मी को रोता देखकर जैसे किसी ने उसका

कलेजा चीर दिया था. वह भी रो पड़ी और दौड़कर मम्मी के गले से लग गयी. “मम्मी!” उसके गले से ऐसी आवाज़ निकली, जैसी बाज़ के पंजे में फंसी किसी मासूम चिड़िया की हो सकती है. वह धाड़ मारकर रो पड़ी, और रोते-रोते बोली, “मम्मी, मुझे बहुत बड़ी ग़लती हो गयी है.”

मम्मी ने कुछ नहीं कहा. बस अपना आंसुओं से भरा चेहरा घुमाया और बेटी को कसकर अपने सीने से चिपका लिया. हर मां अपनी बेटी के सामने मज़बूर होती है. मम्मी के मुंह से कोई आवाज़ नहीं निकली, परन्तु उनके बंधन में सुरक्षा का जो अहसास था, उससे अक्षिता का दिल अनोखे सुख में डूब गया.

“मम्मी, मैं भटक गयी थी, परन्तु भटकने के बाद मुझे अहसास हो गया है कि जिस सुख के लिए मैं रात-दिन तड़पती थी, वह सुख स्थायी नहीं है. स्थायी सुख तो घर-परिवार, मां-बाप, भाई-बहन और पति-पत्नी के बीच होता है. जवानी के प्यार का सुख क्षणिक होता है, परन्तु परिवार का सुख अटूट और अमिट है. युवा प्रेम में असुरक्षा है तो परिवार के प्यार में सुख के साथ-साथ सुरक्षा भी.”

मां फिर भी कुछ नहीं बोलीं.

अक्षिता मां के सीने में और जोर से अपना सिर गड़ाती हुई बोली, “मम्मी, आप मुझे बोलिए, मुझे डांटिए. आपकी चुप्पी मुझे मार डालेगी. आप कुछ नहीं बोलेंगी तो मैं समझूंगी कि मैंने अक्षम्य अपराध किया है.”

मम्मी ने अक्षिता का सिर जोर से अपने सीने से दबा लिया, “नहीं मेरी बेटी, दुनिया का कोई भी अपराध अक्षम्य नहीं होता है. बस हम अपने मन को समझा नहीं पाते, इसीलिए जल्दी किसी को क्षमा नहीं प्रदान करते. अपराधी को अगर अपने अपराध का अहसास हो जाए, तो प्रत्येक अपराध क्षम्य हो जाता है, बशर्ते कि उसके अपराध से किसी अन्य व्यक्ति को दुःख और तकलीफ़ न पहुंचे.”

“मैंने भी तो आपको बहुत दुःख पहुंचाया है. आपके समझाने के बावजूद जिद्द में आकर ऐसा अपराध कर डाला, जिसे एक कुंवारी लड़की को करते समय लाख बार सोचना पड़ता है, समाज और परिवार के साथ-साथ स्वयं की सुरक्षा और मर्यादा का ख़याल करना पड़ता है.”

“हां, लेकिन आजकल के लड़के-लड़कियां आधुनिकता की जिस चमक में खोए हैं, ऐसे मूल्य उनके लिए कोई महत्व नहीं रखते. प्यार उनके लिए रेस्तरां में खाना खाने जैसा है, इसीलिए मेरी बेटी, मैं डरती थी कि तुम भी इस धारा में बह जाओगी. मेरी चिंता वाज़िब भी थी, इसीलिए मैं तुम्हें रोकती थी, डांटती थी. परन्तु मनुष्य जिस

चीज़ से डरता है, वह उसके जीवन में अवश्य घटती है. मैं डरती थी कि प्यार के चक्कर में तुम अपना कुंवारापन न गंवा बैठो, और वही हो गया. न मैं तुम्हें डांटती, न फटकारती और चुप रहती तो संभवतः यह नहीं होता. परन्तु होनी को कौन टाल सकता है?”

“मम्मी, मैंने विवेक से प्यार किया था, परन्तु इस हद तक जाने के बारे में कभी नहीं सोचा था. आपकी डांट खाने के बाद ही मेरे मन ने विद्रोह किया था.”

“बेटी, अगर मैं तुम्हें नहीं डांटती, तब भी प्यार का आकर्षण इतना तीव्र होता है कि लड़के-लड़कियां इसके प्रवाह में बह ही जाते हैं. बहुत कम लोग इससे बच पाते हैं, परन्तु जो लोग एक ग़लती के बाद समझ जाते हैं, वह बाद में होनेवाली बहुत सी कठिनाइयों और परेशानियों से बच निकलते हैं. परन्तु दूसरी तरफ़ यह बात भी सच है कि वर्जनाओं से बच्चों को दूर रखना ही उनको उनके प्रति आकर्षित करना है. यहीं पर मां-बाप अक्सर भूल कर जाते हैं. उन्हें होश तब आता है, जब बच्चे वर्जनाओं को तोड़कर बहुत दूर निकल जाते हैं. अगर मां-बाप बच्चों के साथ मिल-बैठकर एक दोस्त की तरह समस्या का समाधान करने की कोशिश करें, तो सकारात्मक परिणाम निकलते हैं.”

“हां, मम्मी, मैंने भी तो भूल की. आपकी बात समझने की कोशिश नहीं की.”

“हम दोनों ने भूल की. मैंने तुम्हें प्यार से नहीं समझाया और तुमने जोश में आकर ग़लत कदम उठा लिया; परन्तु अब हम दोनों को अपनी भूल का अहसास हो चुका है. मुझे विश्वास है, अब तुम जीवन में सही मार्ग पर चलोगी. मैं तुम्हारे प्यार के खिलाफ़ नहीं हूं, परन्तु प्यार करने की सही उम्र शिक्षा के बाद जीवन में स्थापित हो जाने के बाद होती है. पढ़-लिखकर तुम कुछ बन जाओगी, तो मुझे तुम्हारी इच्छाओं और भावनाओं को समझने में कोई हर्ज़ नहीं होगा.”

“मैं एक अच्छी बेटी बनकर दिखाऊंगी.”

अक्षिता उस दिन कॉलेज नहीं गयी. मम्मी ने भी मना कर दिया. कॉलेज जाने के लिए न तो उसका तन तैयार था, न मन. जिस मानसिक और शारीरिक कष्ट के दौर से वह गुजरी थी, उसके कारण इसके मन में दहशत भर चुकी थी. मां के सामने सच्चाई स्वीकार कर लेने के बाद दोनों के मन का मैल अवश्य धुल चुका था, परन्तु अक्षिता के मन में अब एक-दूसरे प्रकार का भय समा चुका था.

वह कई दिन तक कॉलेज नहीं गयी. एक अन्य प्रकार का भय उसके मन के अंदर समा गया था...विवेक का डर...उसका सामना कैसे करेगी?

अक्षिता ने जिस अंधेरी कोठरी में जाने-अनजाने कदम रखा था, उसका अंधेरा पता नहीं कब खत्म होगा. उसके अंदर अभी तक रोशनी की कोई किरण आती हुई नहीं दिख थी.

परन्तु एक न एक दिन उसे कॉलेज जाना ही था. विवेक से उसका सामना होगा ही. वह क्या इतनी आसानी से एक खूबसूरत चिड़िया का शिकार करना छोड़ देगा? अब तक तो उसने न जाने कितने फंदे बनाकर तैयार कर लिए होंगे; ताकि जैसे ही अक्षिता उसके दायरे में आए, उसे अपने फंदे में फिर से फंसा सके.

भय में भी इस धरती का हर प्राणी आगे बढ़ता रहता है. अक्षिता भी अनंत समय तक घर पर बैठी नहीं रह सकती थी. एक दिन तो उसे कॉलेज जाना ही था. उसने मन को कड़ा किया...डर को पहचाना और उसे दूर करने के लिए मां से सलाह ली. मम्मी ने उसे धैर्य से हर बात समझाई. अब अक्षिता हर हालात का डटकर मुकाबला करने के लिए तैयार थी.

अक्षिता जिस दिन कॉलेज पहुंची, तमाम सारे लड़के-लड़कियों ने उसे घेर लिया. तरह-तरह के सवाल करने लगे. उनके सवालों का एक ही अर्थ था, “कॉलेज क्यों नहीं आ रही थी?” सबसे आसान बहाना बीमारी का था, उसने बता दिया. सभी संतुष्ट हो गए, परन्तु उसे विवेक का भी सामना करना था. वह ताक लगाए बैठा था. बाज़ हमेशा चिड़िया की ताक में रहता है, कि जैसे ही उसकी जड़ में आए, वह उसका शिकार कर ले.

विवेक प्रतिदिन उसका इंतजार करता था. बेसब्री से उसे फोन भी करता था, परन्तु अक्षिता ने कभी उसका फोन नहीं उठाया; लेकिन आज उसको विवेक का सामना करना ही था. उसके मन में डर की हल्की छाया थी, परन्तु उसके साथ मां का विश्वास था. मां के विश्वास के सामने उसके मन का डर दब गया था.

विवेक ने थोड़ा तलखी से कहा, “इतने दिन कॉलेज क्यों नहीं आई?” अक्षिता ने उसकी तरफ एक बार देखकर उपेक्षा से मुंह घुमा लिया...स्साला, हरामी कहीं का. क्या वह नहीं जानता कि वह इतने दिनों से कॉलेज क्यों नहीं आ रही थी. प्यार के नाम पर जिस तरह उसने उसे लूटा था, और अपने दोस्त से उसके शरीर को नुचवाया था, उसके बाद क्या वह उस व्यक्ति से प्यार करने का ढोंग कर सकती थी, उस पर विश्वास कर सकती थी? प्यार और विश्वास की तो उसने धज्जियां उड़ा

दी थीं. यह लड़के अपने-आपको समझते क्या हैं कि लड़कियों को प्यार के नाम पर बेवकूफ बनाते रहेंगे, उन्हें लूटते रहेंगे और वह बेजान गुड़िया की तरह कभी प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं करेंगी. कभी अपने शोषण के खिलाफ आवाज़ नहीं उठाएंगी.

“क्यों, बात क्यों नहीं कर रही हो?” अक्षिता को चुप देख कर विवेक ने पीछे से उसका दायां हाथ पकड़ लिया. हाथ पकड़ना था कि जैसे बिजली-सी चमक गयी. अक्षिता पलटी और उसने उसी दाएं हाथ से विवेक के बाएं गाल पर तड़ाक से तमाचा जड़ दिया. विवेक तिलमिलाकर रह गया और उसकी आंखों में भयमिश्रित आश्चर्य के बादल घुमड़ने लगे. उसे विश्वास नहीं था कि अक्षिता ऐसा भी कर सकती थी.

बहुत सारे लोग वहां उपस्थित थे. सभी हतप्रभ थे और उनकी आंखों में प्रश्नचिह्न था...क्या हुआ?

“अगर तुममें जरा भी आत्मसम्मान है तो आज के बाद मेरा पीछा मत करना!” अक्षिता ने घृणा से कहा और वहां से जाने के लिए लोगों का घेरा तोड़कर बढ़ने लगी. विवेक भी बड़ा ढीठ और निर्लज्ज था. तमाचा खाने के बाद भी उसकी अकड़ और घमंड नहीं गया था. विवेक उन लड़कों में से था, जो इतने निर्लज्ज होते हैं कि भरी महफिल में जूता खाने के बाद भी शर्म से उनके सिर नीचे नहीं होते. वह अक्षिता को ललकार कर बोला— “जा तो रही हो, लेकिन याद रखना, इस बेइज्जती का बदला तुम्हें चुकाना पड़ेगा. मेरे पास ऐसा हथियार है कि कहीं मुंह दिखाने के काबिल नहीं रहोगी.” उसने अकड़ते हुए कहा था.

अक्षिता फिर पलटकर उसके सामने आ गयी और एक पल विवेक के अकड़ते शरीर और चेहरे की कुटिल मुस्कराहट को देखती रही. उसके मुंह में घृणा की लार भरने लगी थी. उसने कुछ सोचा, फिर अपने मुंह के अंदर का सारा थूक जीभ में लपेटकर उसके मुंह पर थूक दिया. विवेक अपने चेहरे को घुमाता कि अक्षिता ने एक और थपड़ उसके गाल पर जड़ते हुए कहा—

“हां, जानती हूं, तुम क्या करोगे? लेकिन जो कुछ तुमने मेरे साथ किया है, उससे अधिक नहीं कर सकते, समझे, कुत्ते! तुम क्या समझते हो कि मेरी फोटो खींचकर या वीडियो बनाकर और उसका भय दिखाकर मुझे ब्लैकमेल करते रहोगे और मैं तुम्हारे सामने अपना सुंदर शरीर परोसती रहूंगी. अगर तुमने ऐसा सोचा है, और ऐसी कोई योजना तुम्हारे मन में है, तो यह भ्रम अपने दिमाग से निकाल दो. अब मुझे न तुमसे न तुम्हारी कुटिल चाल से कोई भय है. तुम एक बार करके तो देखो, फिर तुम्हें पता चलेगा कि तुम कॉलेज पढ़ने के लिए आते हो या जेल की हवा खाते हो. बदनामी तो

दोनों तरफ़ से मेरी होगी ही, लेकिन जब बदनामी होनी ही है, तो मैं तुम्हें किसी दूसरी लड़की की अस्मत् से खेलने के लिए स्वतंत्र कैसे छोड़ दूंगी. अपराध तो तुमने किया है, जेल तुम जाओगे, मैं नहीं, समझे, मि. विवेक.”

विवेक की आंखों में एक भय की छाया उतर आई थी. अक्षिता हंसी, “देखा, जेल जाने के नाम पर कैसे तुम्हारी सिट्टी-पिट्टी गुम हो गयी. दरअसल, लड़कियों को बदनाम करने का भय दिखाकर तुम उन्हें लूटते रहते हो; परंतु उससे बड़ा भय लड़कों के अंदर होता है. लड़कियां अगर लड़कों के इस डर को पहचान लें, तो फिर वे लड़कियों का शारीरिक शोषण कभी नहीं कर सकते.”

उसके चुप होने के पहले ही विवेक वहां से खिसकने लगा. अक्षिता ने उसकी पीठ पर कहा, “जाओ अपना काला मुंह लेकर यहां से, हिजड़ा कहीं का. प्यार करने चला था.”

अक्षिता भी मुड़कर चली गयी. उसके मन में अब कोई डर नहीं था.



दोराहा

आयुषी ने उदास मन से अपने बेडरूम की एक-एक चीज़ को देखा. पलंग, अलमारी, ड्रेसिंग टेबल, साइड टेबल, इधर-उधर बिखरे पड़े कपड़े...और फिर दीवारों पर जाकर उसकी निगाह ठहर गयी. सबकुछ शांत उदासी में डूबा हुआ नज़र आ रहा था. हर चीज़ जैसे किसी गहरी वेदना से गुजर रही थी या यह उसके मन का अवसाद था जो ऐसा अनुभव कर रही थी.

कमरे में एक अटूट सन्नाटा बिखरा हुआ था. यह सन्नाटा उसे डरा नहीं रहा था, परन्तु उसके मन में अवसाद पैदा कर रहा था. जितना वह सोचती, उतना ही उसका मन और ज़्यादा गहरे अवसाद से भर जाता.

उस कमरे की ही नहीं, पूरे फ्लैट की हर चीज़ पर उसका निशान था. उसने पूरी चाहत से उस घर को सजाया था, अपने लिए, अपने प्रियतम के लिए. कितने सुन्दर सपने तब उसकी आंखों में तैरा करते थे. उन सपनों को साकार करने के लिए उसने इतना बड़ा क़दम उठाया था कि बिना शादी के वह प्रतीक के साथ पत्नी की तरह रहने के लिए तैयार हो गयी थी. यह आजकल का फैशन था, जिसके प्रति युवा वर्ग सम्मोहित था. घर-परिवार, परम्परा और रीति-रिवाजों का यहां कोई समावेश नहीं था. एक दूसरे के साथ रहने के लिए युवक-युवती को किसी की अनुमति की आवश्यकता नहीं होती है. कोई प्रतिबंध और अनुबंध उनके बीच नहीं होता. बस मन की सहमति होती है और देह का समर्पण...देह की चाहत और समर्पण की ऐसे रिश्तों में अहम् भूमिका होती है.

परन्तु आज आयुषी उदास थी. उसका सारा उत्साह और उल्लास जैसे मर गया था. वह समझ नहीं पा रही थी कि ऐसा क्यों और कैसे हुआ? उसने तो पूरी निष्ठा से प्रतीक को प्यार किया था, अपना तन-मन सौंपा था, परन्तु उसके मन में आयुषी के लिए कोई प्यार था ही नहीं. उसका प्यार मात्र एक दिखावा था. वह

बस उसकी देह को भोगना चाहता था, तभी तो उसने प्रेम का ढोंग रचा था और उसको अपने फंदे में फांसकर न केवल उसके शरीर का उपभोग किया, बल्कि उसकी कमाई पर भी ऐश की। आज वह उसकी चालबाजियों को समझ रही थी, परन्तु अब समझने से भी क्या फायदा? प्रतीक ने उसका फायदा उठाया और वह इसे उसका प्रेम समझती रही। प्रेम में लुटना शायद इसी को कहते हैं।

दोनों ने साथ-साथ एमबीए किया था। तभी उन दोनों की आपस में नजदीकियां बढ़ी थीं। आकर्षण को प्रेम की परिभाषा में बदलते देर नहीं लगी। यहीं प्रेम बहुत जल्दी देह की चाहत में बदल गया। आज के युग में युवाओं को किसी चीज़ के लिए इंतज़ार करने की आदत नहीं है। प्रत्येक चीज़ को वह 'फास्ट फूड' की तरह प्राप्त कर लेना चाहते हैं। प्रेम भी ऐसी चीज़ों में शामिल हो गया है। इसीलिए वह शादी के पहले ही सारे 'प्रेम सुख' प्राप्त कर लेते हैं या उसको प्राप्त करने के लिए वह परम्पराओं और समाज द्वारा तय की गई नैतिकता और मर्यादा की सीमा रेखा को लांघकर अपने मूल्यों पर जीवन जीना आरंभ कर देते हैं। 'लिव-इन-रिलेशनशिप' इन्हीं आधुनिक मूल्यों और मान्यताओं की देन है, जिसे समाज का एक वर्ग अनैतिक उच्छृंखलता का नाम देता है।

आयुषी और प्रतीक के साथ भी यहीं हुआ था। प्रतीक उसे चाहत भरी निगाहों से देखता रहता था और वह उसे देखकर मुस्कराती थी। फिर दोनों एक दूसरे के नज़दीक आए। हाय-हैलो के बाद बातचीत शुरू हुई और जल्दी ही प्रतीक ने कहा था, "आयुषी, क्या तुम मेरे साथ बाहर चलना पसंद करोगी?"

"कहां?" उसने अपने होंठों को शरारत से दबाते हुए कहा। उसकी आंखों में चमक थी और उसकी भौंहें जैसे नृत्य कर रही थीं।

प्रतीक ने कहा, "जहां तुम कहो,"

"तुम्हारी कोई इच्छा नहीं?"

"है तो, परन्तु तुम्हारी सहमति के बिना कुछ नहीं हो सकता।"

"तो चलो," उसने इटलाते हुए कहा। आजकल के प्रेम में कोई संकोच नहीं होता। यह महीनों और सालों साल की देखा-देखी का खेल नहीं है। अब इतनी फुरसत युवाओं के पास नहीं है। एक ही दिन में उनके बीच प्रेम का आदान-प्रदान हो गया, वायदे कर लिये गये, भविष्य के सपनों में मुहर लगा दी गयी। सब कुछ जैसे स्टॉम्प पेपर में लिखकर होता है, उसी तरह उन्होंने आमने-सामने बैठकर अपने जीवन की कहानी को लिख-पढ़ लिया।

उन दोनों का प्यार बहुत तेजी से परवान चढ़ा। एक कहावत है कि बाढ़ जितनी तेज़ी से चढ़ती है, उतनी ही तेज़ी से उतर भी जाती है। क्या प्यार के मामलों में भी ऐसा होता है? कहा नहीं जा सकता। परन्तु सत्य तो यही है कि सम्बन्ध जब धीरे-धीरे बनते हैं, तब उनमें आस्था और विश्वास की गहरी नींव पड़ती है। आनन-फानन में शारीरिक आकर्षण के वशीभूत होकर जो सम्बन्ध परवान चढ़ते हैं, उनमें स्थायित्व नहीं होता। यह संबंध आइसक्रीम की तरह जल्दी ही पिघल जाते हैं। उस समय आयुषी इस बात को नहीं समझ पाई थी, या वह समझना नहीं चाहती थी। प्रतीक ने अपनी लच्छेदार बातों से उसे मोहित कर लिया था। और वह उसके लिए कुछ भी करने को तैयार हो गई थी। उसने यह भी नहीं सोचा कि वह अपने माता-पिता की इकलौती संतान थी। उसका कोई भाई भी नहीं था। वह बिना शादी-ब्याह के किसी और के साथ रहने लगेगी तो उसके मम्मी-पापा का क्या हाल होगा, कैसे वह अपने जीवन के अन्तिम दिन बितायेंगे। उस वक़्त उसने सोचने का प्रयत्न नहीं किया, और बाद में भी काफी समय तक, जबतक वह प्रतीक के प्रेम के रंगों में रंगी रही, उसे सोचने की फुरसत नहीं मिली। प्यार में लोग उस व्यक्ति के लिए जो कुछ दिन पहले ही उनके जीवन में आता है, अपने घर-परिवार का त्याग कर देते हैं। जिनकी छत्रछाया में पलकर वह जवानी की देहलीज तक पहुंचते हैं, वह उनके लिए गौण हो जाते हैं।

उन दोनों के बीच एक दूसरे को पाने की चाहत इतनी तीव्र थी कि उन्होंने तय कर लिया था कि नौकरी मिलते ही एक साथ रहना प्रारंभ कर देंगे। इसलिए प्रयत्न करके दोनों ने एक ही कम्पनी में नौकरी हासिल कर ली, और बिना आगा-पीछा सोचे साथ रहने लगे। पराए शहर में कौन देखता है। घर-परिवार से दूर, अपना अलग संसार बसाकर उन दोनों ने जैसे जीवन की सारी खुशियां प्राप्त कर ली थीं। बंधनों से आज़ाद हो गए थे।

जिस दिन दोनों ने एक साथ रहना तय किया, उसी दिन प्रतीक ने कहा, "देखो, आयुषी हम दोनों साथ-साथ रहने तो जा रहे हैं, परन्तु ध्यान रखना बाद में कोई परेशानी न हो।"

"कैसी परेशानी...?" आयुषी ने शंकित होकर पूछा।

"देखो तुम समझदार हो, अगर हम लोग एक एफिडेविट बनवा लें तो हम दोनों के लिए अच्छा रहेगा।"

"कैसा एफिडेविट?" आयुषी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था।

“यहीं कि तुम कभी मेरे ऊपर शादी करने का दबाव नहीं बनाओगी और कभी बच्चा नहीं चाहोगी.”

आयुषी चिन्ता में पड़ गयी. शादी की मांग करना तो बेवकूफी होगी, परन्तु बच्चा क्यों नहीं चाहेंगे. जब स्त्री-पुरुष शारीरिक सम्बन्ध बनायेंगे तो क्या बच्चा पैदा होने की संभावना नहीं होगी. अगर दोनों बच्चा नहीं पैदा करेंगे, तो क्या केवल देहसुख के लिए दोनों साथ रहने जा रहे हैं? क्या जीवन भर देहसुख के सहारे कोई व्यक्ति जिन्दा रह सकता है. उसे बच्चा नहीं चाहिए? पुरुष भले ही बिना बच्चों के रह ले, परन्तु कोई स्त्री कैसे रह सकती है? वह तो ममता की देवी है, वह एक बांझ औरत की तरह पूरा जीवन कैसे गुजार सकती है? मातृत्व उसका गुण है.

“प्रतीक, यह कैसे हो सकता है? बिना शादी के तो हम साथ-साथ रह सकते हैं, पर बिना बच्चे के कैसे जीवन गुजरेगा.”

प्रतीक ने उसे मनाने की कोशिश करते हुए कहा, “देखो, हम दोनों अभी बच्चे की जिम्मेदारी नहीं उठा सकते और एफिडेविट बनवाने में हम दोनों की सुरक्षा है, वरना तुमने देखा ही है, कुछ दिन साथ-साथ रहने के बाद लड़कियां शादी के लिए जोर देने लगती हैं. लड़का नहीं मानता है तो परिवार और रिश्तेदारों के दबाव में आकर लड़कियां लड़के के ऊपर बलात्कार का मुकदमा कायम करवा देती हैं.”

आयुषी के मन में शीशे की तरह छन्न से कुछ टूट गया. प्रतीक इतनी अधिक सावधानी क्यों बरत रहा था? क्या किसी सोची-समझी साजिश के तहत उसे अपने जाल में फंसा रहा था, ताकि उसका उपभोग करने के बाद वह साफ-साफ बचकर निकल जाये और उसके खिलाफ कोई कार्रवाई भी न की जा सके.

उसने कठोर शब्दों में कहा, “प्रतीक, प्रेम सदा विश्वास की नींव पर टिका होता है. अगर हम दोनों को एक दूसरे पर विश्वास नहीं है, तो इसका मतलब है, हम एक दूसरे को प्यार नहीं करते? एफिडेविट हमारे बीच प्यार पैदा नहीं कर सकता. इससे कटुता ही बढ़ेगी. अतएव मैं इससे सहमत नहीं हूँ. अगर तुम चाहो तो इस संबंध को यही खत्म कर देते हैं.”

“नहीं, नहीं,” उसने जल्दी से आयुषी को अपनी बांहों में भर लिया. उसे लगा अगर उसने ज्यादा दबाव बनाया तो आयुषी उसके चंगुल से निकल जाएगी. उसने मुस्कराकर कहा, “चलो कोई बात नहीं, तुमको मेरे ऊपर विश्वास है तो मैं भी तुम्हारे ऊपर विश्वास करता हूँ. लेकिन ध्यान रखना, बाद में कोई गड़बड़ी न हो.”

आयुषी के मन में एक गांठ-सी पड़ गयी, परन्तु उन दोनों का प्यार नया-नया था, इसलिए उसने ज्यादा ध्यान नहीं दिया.

किराये का फ्लैट लेते समय सिक्क्यूरीटी डिपॉजिट और अग्रिम किराया आयुषी ने भरा था. प्रतीक बोला था, “आयुषी, अभी तुम डिपॉजिट और किराया भर दो. मुझे हर महीने घर पैसे भेजने पड़ते हैं. मेरे पास हैं नहीं. बाद में लौटा दूंगा.” आयुषी को एक बार कुछ अजीब-सा तो लगा था, प्रतीक उसका फायदा तो नहीं उठा रहा था; परन्तु उसके अन्दर प्यार का ज्वार इतना तीव्र था कि विवेक की सारी लकीरें एक ही लहर में मिट गयीं.

बाद में आयुषी भूल ही गयी कि प्रतीक ने पैसे लौटाने की बात कही थी.

आयुषी ने घर में खाना बनाने के सारे साधन जुटा लिये थे. प्रतीक ने मना किया था, परन्तु वह नहीं मानी. स्वयं ही जाकर बर्तन-भाड़े लाई, गैस का प्रबंध किया और झाड़ू-पोंछा और खाना बनाने के लिए एक महरी रख ली. परन्तु घर में खाना कम ही बनता था. प्रतीक के कहने पर लगभग रोज़ ही किसी न किसी रेस्त्रां से खाना आता था. वह दोनों आउटिंग भी करते थे और इस सबका खर्चा आयुषी को उठाना पड़ता था. प्रतीक के पास पैसे न खर्च करने का कोई न कोई खूबसूरत बहाना हमेशा तैयार रहता था.

कुछ दिन तो सतरंगी सपनों में डूबते-उतराते बीत गये. चारों तरफ़ प्यार ही प्यार बिखरा था. दुनिया इतनी खूबसूरत होती है, यह आयुषी ने प्रतीक को प्यार करके ही जाना. दुनिया में प्यार के अलावा भी और कुछ होता है, जीवन में परेशानियों और कठिनाइयों के दरिया भी लहराते हैं, जो अपनी भयावहता से हमें डराते हैं, यह तब आयुषी को भान नहीं हुआ था. उसे पता नहीं था कि दुनिया वहीं नहीं है, जो दो जवान जिस्मों के बीच होती है. इसके अतिरिक्त भी दुनिया के और रंग होते हैं. जीवन में कठिनाइयां हैं, परेशानियां हैं, जिनसे मनुष्य को दो-चार होना पड़ता है. प्रेम की भावुक दुनिया में सबकुछ अच्छा लगता है, परन्तु जीवन की कठिनाइयां प्यार के रंगों को इस तरह बिखेर देती हैं, जिनसे व्यक्ति जल्दी नहीं उबर पाता.

आयुषी के प्यार के रंग तब फीके पड़ने लगे थे, जब उसने देखा कि घर को सजाने-संवारने में प्रतीक हमेशा अपना हाथ खींच लेता. यहां तक कि खाने-पीने की चीज़ों में भी कंजूसी करता, सबकुछ आयुषी को ही करना पड़ता. आरंभ में उसने ध्यान नहीं दिया. सोचा, प्रतीक उसी का तो है. उसका जो कुछ है, आयुषी का है, और आयुषी का सबकुछ प्रतीक का है, परन्तु बात वास्तव में ऐसी नहीं थी. प्रतीक अपने कपड़े-लत्ते भी आयुषी के ही पैसे से ही खरीदकर लाता था.

जब भी उसे कुछ खरीदना होता, वह आयुषी से कहता, “डार्लिंग, आज कुछ खरीदारी कर लें.”

“क्या करोगे, सबकुछ तो है घर में?”

“तुम देख रही हो, मेरी घड़ी बहुत पुरानी हो गयी है. बाजार में एक नई घड़ी आई है, मुझे बहुत पसंद है. अगर तुम कहो.” घड़ी के अतिरिक्त कुछ और भी खरीदना होता, तब भी ऐसे ही कहता.

“मेरे कहने का क्या मतलब, तुम खरीद लो.”

“लेकिन तुम जानती हो. मेरे पास पैसे नहीं हैं. घर भेज दिये.”

फिर वह उसे अपनी बांहों में लपेट लेता और उसके सुनहरे बालों को सूंघने लगता. उसकी गर्म सांसें आयुषी के बदन में मधुर तरंगें भरने लगतीं. वह मदहोश होकर पिघल जाती. उसके सीने पर हल्के से मुक्का मारती हुई बोलती, “ठीक है, चलो.”

इसी तरह वह उससे अपने उपयोग की सारी चीजें खरीदवाता रहता. जब पैसे की बात आती तो कहता कि उसने उस महीने घर भेज दिये. कभी कहता कि जमा कर रहा है, बाद में काम आयेंगे.

वह प्रेमभरी बातों से उसे इस तरह लुभाता था कि आयुषी की सोच के सारे दरवाजे बंद हो जाते. वह यह न समझ पाती कि प्रतीक अपना पैसा क्यों खर्च नहीं करना चाहता था. वह उसके पैसे से भी मौज़ कर रहा था, और उसकी देह से भी. साथ-साथ रहने की यह कैसी मज़बूरी थी कि रहने, खाने, पहनने, ओढ़ने का सारा खर्च केवल आयुषी उठाये, क्या प्रतीक की कोई जिम्मेदारी नहीं बनती थी. वह सोचती, परन्तु प्रतीक उसे ज़्यादा सोचने का मौका नहीं देता. ऐसे मौकों पर वह उसके ऊपर प्यार के फूलों की अतिरिक्त बरसात करने लगता और आयुषी की सोच पर लगाम लग जाती.

आयुषी ने अपने पैसों से अपना घर-संसार बसा लिया था और सुख-स्वप्नों में जीने लगी थी. उसके घर में एक परिवार के लिए सारी सुविधाएं थीं. उसे किसी चीज़ की कमी नहीं थी. बस कमी थी तो प्रतीक के आचरण और व्यवहार में, जो अब उसे खलने लगा था. उसे प्रतीक के मन में खोट नज़र आने लगी थी. पूरे घर को आयुषी ने सजाया-संवारा था. प्रतीक ने अपनी कमाई का एक पैसा घर में तो दूर आयुषी के ऊपर भी खर्च नहीं किया था. शगुन के नाम पर भी कोई गहना उसके लिए नहीं खरीदा था. उसे कोई ड्रेस तक लाकर नहीं दी थी. कई बार उसकी इच्छा

होती कि प्रतीक उसे खरीदकर कुछ दे, जो उसके प्यार की निशानी के तौर पर अपने पास संजोकर रखे, परन्तु हर बार उसकी इच्छा पर प्रतीक की कंजूसी और काइयांपन की मार पड़ जाती.

आयुषी उसे लेकर बाज़ार जाती. कोई चीज़ उसे पसंद आती तो वह प्रतीक का मुंह देखती कि वह उसको खरीदने के लिए कहेगा, परन्तु प्रतीक बिलकुल निरपेक्ष भाव से दूसरी तरफ़ देखने लगता, जैसे आयुषी उसके साथ ही नहीं है. वह मन मारकर कहती, “प्रतीक देखो जरा, यह जीन्स कितनी अच्छी है. ले लूं.”

वह चौंकाता सा कहता, “हां, हां, अच्छी है, ले लो, पैसे लाई हो न!” वह पहले ही हाथ झाड़ लेता.

आयुषी के दिल में कुछ कचोट सी होती और उसके चेहरे से बहारों के फूल मुरझा जाते. वह आंधी में अपने आपको संभालने का प्रयत्न करती. फिर भी उसके अंदर बहुत कुछ टूट जाता और यह कोई पहली बार नहीं होता था. उसके साथ बहुत बार यह हो चुका था, जब प्रतीक ने उसके प्रति उदासीनता का भाव दिखाया था, जब घर के लिए या उसके लिए कुछ खरीदने की बात आती थी. लेकिन जब उसे अपने लिए कुछ खरीदना होता, तब वह बड़े प्यार से आयुषी को बातों में लुभाता, उससे मीठी-मीठी बातें करता और बातों ही बातों में उससे अपने लिए कुछ खरीदने के लिए कहता. आयुषी का दिल बहुत बड़ा था. वह उसकी बातों से खुश हो जाती. तब उसे लगता दुनिया में प्रतीक से ज़्यादा प्यार करनेवाला पुरुष उसे नहीं मिल सकता था. वह रीझ जाती और खुशी-खुशी प्रतीक के लिए उसकी मनचाही चीज़ खरीद देती.

धीरे-धीरे आयुषी ने महसूस किया कि उसके बैंक में महीने के अंत में एक रुपया भी नहीं बचता था. जो उसे मिलता था, घर के खर्चों में ही ख़त्म हो जाता था. ऐसे तो अपने जीवन में वह कुछ जोड़ नहीं पाएगी. प्रतीक के कहने पर उसने एक कार भी खरीद ली थी, उसकी किस्त उसे ही भरनी पड़ती थी, जबकि गाड़ी का इस्तेमाल ज़्यादातर प्रतीक ही करता था. दोनों साथ-साथ ऑफिस अवश्य जाते थे, परन्तु इसके अतिरिक्त प्रतीक जब-तब अपने दोस्तों से मिलने कार से ही जाता था. गाड़ी वह इस्तेमाल करता था और पेट्रोल आयुषी को भरवाना पड़ता था.

इन हालातों में प्यार का नशा बहुत देर तक नहीं रहता. आयुषी ने एक दिन कुछ तल्ख़ी से कहा, “प्रतीक, मैं देख रही हूं, घर के सारे खर्च मैं वहन करती हूं. तुम अपने सारे पैसे बचा रहे हो, आखिर किसके लिए? इस घर की जिम्मेदारी मेरी अकेले की तो नहीं है. तुम्हारा कोई फ़र्ज़ नहीं बनता है क्या?”

प्रतीक ने आश्चर्य का भाव प्रकट करते हुए कहा, “इससे क्या फर्क पड़ता है. हम दोनों एक हैं, इसमें हमारा-तुम्हारा का भाव कहां से आ गया? मेरा पैसा अगर बच रहा है, तो वह हमारे ही काम आएगा एक दिन.” फिर वह मुंह चुराकर दूसरी तरफ देखने लगा.

आयुषी को बुरा लगा, बोली, “मेरी तरफ देखकर बात करो. वह दिन कब आएगा, जब तुम्हारा पैसा हमारे काम आएगा? क्या उस दिन, जब तुम उसे लेकर भाग जाओगे.”

यह बहुत कड़ी बात थी. आयुषी को भी अचंभा हुआ कि वह कैसे इतनी कड़ी बात कह गयी, परन्तु कभी-कभी मनुष्य बेबसी और लाचारी में कड़वी सच्चाई बयान कर जाता है.

“यह तुम कैसे कहती हो कि मैं तुम्हें छोड़कर भाग जाऊंगा.”

आयुषी की तलखी बरकरार रही, “इसमें क्या शक है. मुझे तो ऐसे ही आसार दिखाई पड़ रहे हैं. साफ लग रहा है कि तुम मेरे साथ खेल खेल रहे हो. प्यार का नाटक करके मेरे शरीर से खेल रहे हो और मेरे पैसे से मौज़ कर रहे हो. एक दिन जब तुम्हें लगेगा कि न मेरे हाथ में कुछ बचा है, न शरीर में, तुम बाज़ की तरह उड़कर अपने पेड़ पर बैठ जाओगे और मैं सूखी हड्डियां लिए इधर-उधर मारी-मारी फिरती रहूंगी.”

प्रतीक ऐसे चुप बैठा रहा, जैसे किसी ने उसके गाल पर इतना तेज़ तमाचा जड़ दिया था. उसका पूरा चेहरा सुन्न हो गया था. उसकी समझ में कुछ नहीं आया कि वह आयुषी से क्या कहे, कैसे उसे समझाए? वह चुप बैठा रहा तो आयुषी को अपनी बेबसी पर रोना आ गया. औरत जीवन में बहुत से कठिन क़दम उठा लेती है, परिवार और समाज से बगावत कर लेती है, परन्तु पुरुष की बेरुखी और उपेक्षा उसके मन को चीर देती है, हृदय को घायल कर देती है. इस मामले में वह इतनी कमज़ोर होती है कि उसकी इसी कमज़ोरी का फायदा पुरुष उठाते रहते हैं. औरत कितनी भी सक्षम हो जाए, कितनी भी आज़ादी प्राप्त कर ले, परन्तु हर क़दम पर उसे पुरुष के ऊपर ही निर्भर रहना पड़ता है. बिना शादी के वह एक पुरुष के साथ रहती है, परन्तु उसे आज़ादी कहां प्राप्त होती है. उसकी आज़ादी केवल उसके मन की भावना है, परन्तु लिव-इन-रिलेशनशिप में भी तो घाटे में स्त्री ही रहती है. पुरुष ही उसका फ़ायदा उठाता है. शादी के बाद पुरुष के साथ रहने में स्त्री का पक्ष ज़्यादा मजबूत होता है. उसके कुछ अधिकार होते हैं, परिवार और समाज उसका साथ देता

है, परन्तु लिव-इन-रिलेशनशिप में कोई उसका साथ देनेवाला नहीं होता है, कानून भी नहीं. पुरुष बिना किसी प्रतिबद्धता, ज़िम्मेदारी और बंधन के उसको अपने फ़ायदे के लिए अपने साथ रखता है और जब उसे वह भार स्वरूप लगने लगती है, वह बिना किसी आधार के स्त्री को त्याग देता है.

आयुषी को लगने लगा था...किसी दिन उसका भी यही हथ्र होनेवाला है. प्रतीक उसका फ़ायदा उठा रहा है. जब उसका मन भर जाएगा, वह उसे त्याग देगा और वह डाल से टूटे पत्ते की तरह हवा में उड़ती हुई न जाने कहां गिरेगी. उसे लगता, वह अकेली हो गयी है, परन्तु इस अकेलेपन में भी वह अपने मन को दृढ़ करती. उसे किसी भी हालत में कमज़ोर नहीं होना है. उसने अपने जीवन में जो यह क़दम उठाया है, अपनी मर्ज़ी से उठाया है. इसके सही-गलत परिणाम की वही ज़िम्मेदार है. अतः हर हाल में उसे हारना नहीं है. प्रतीक अगर उसे छोड़ भी देता है, तो वह रोयेगी नहीं...जीवन में हर किसी को जाना होता है.

ऐसे में उसे अपनी मम्मी और पापा की बहुत याद आती. वह उनकी इकलौती बेटी थी. उन्होंने अपनी बेटी से कितनी उम्मीदें लगा रखी थीं और उसने अपने मम्मी-पापा की हसरतों को मिट्टी में मिला दिया था. कितनी हसरत से उसे पढ़ाया था. उनकी बड़ी इच्छा थी कि बेटी अच्छी नौकरी करे, विदेश जाए, और फिर उसकी शादी अच्छे घर-घर में कर दी जाए. जब उसे मम्मी-पापा की याद आती और उनके जीवन के बारे में सोचती, उनके त्याग को याद करती तो वह अपराधबोध से ग्रस्त हो जाती, फिर उस रात उसे नींद न आती. वह चाहती कि प्रतीक उसको मनाये, उसके दुःख के बारे में पूछे, परन्तु प्रतीक उसे न मनाता. उस रात वह उसकी तरफ़ ध्यान भी न देता. चुपचाप सो जाता. आयुषी के मन में कुछ टूट जाता. इस तरह न जाने कितनी बार आयुषी के मन में कितना कुछ टूटा था. अब वह अन्दर से बिल्कुल खोखली हो चुकी थी. न उसका मन साबुत था, न तन. वह खंडित हो चुकी थी. प्यार क्या इतना तकलीफ़देह होता है? वह सोचती. अगर होता है तो क्यों लोग प्यार के पीछे दीवाने होते हैं.

आयुषी अपने विचारों में लीन करवट बदलकर आंसू बहाती रहती और प्रतीक एक संवेदनहीन व्यक्ति की तरह दूसरी करवट लेटा रहता. उसके खरटे आयुषी के मन में हथोड़े की तरह चोट करते. वह चाहता तो आयुषी को मनाकर सम्बन्धों को सामान्य बना सकता था, क्योंकि उसके कारण ही दोनों के बीच खटपट होती थी, परन्तु वह अपनी तरफ से आयुषी के मन को सांत्वना देने का कोई प्रयास न करता.

जब उसे ज़रूरत होती, तब आयुषी को मना लेता, परन्तु जब आयुषी दुःखी होती, तब वह एक ऐसे व्यक्ति की तरह व्यवहार करता जैसे उसका दुःख उसकी प्रेयषी का दुःख था और उसे अकेले आयुषी को ही झेलना था।

छोटी-छोटी तल्लियाँ उनके बीच उभरकर सामने आने लगी थीं। आयुषी का मन टूटने लगा था, हृदय बिखर रहा था, फिर भी वह अपने को किसी तरह संभाले थी। उसने जिस संबल को पकड़ा था, अभी भी उसे विश्वास था कि वह टूटेगा नहीं। स्त्रियाँ जल्दी किसी पर विश्वास नहीं करतीं, परन्तु जब करती हैं तो अटूट करती हैं। यही स्थिति आयुषी की थी। परन्तु यह बात उसकी समझ से परे थी कि जिस पुरुष को उसने बिना किसी प्रतिबद्धता के अपना तन-मन सौंपा था, वहीं उसके साथ दगा कर सकता था, उसके विश्वास को तोड़ सकता था।

उनके बीच-बीच थोड़ी-बहुत खटपट होती रहती थी, परन्तु प्रतीक के व्यवहार में कोई सुधार नहीं आया। वह चाहता तो अपने व्यवहार में परिवर्तन लाकर संबन्धों को बिखरने से बचा सकता था। वह अभी भी अपने पैसों को दांत से पकड़कर रखता था। आयुषी को बहुत दुःख होता।

अंततः उसने मन ही मन ठान लिया कि अब वह भी घर का कोई सामान नहीं लाएगी। नतीज़ा ये हुआ कि घर में रोज़ कोई न कोई चीज़ कम होने लगी। मसलन, बाथरूम में साबुन नहीं है, प्रतीक का शेविंग क्रीम ख़त्म हो गया, डियो नहीं है। आयुषी दुःखी थी, मन मारकर रहती थी, तय करती थी कि घर के लिए कुछ नहीं करेगी, परन्तु खाने-पीने के सामान में कोई कमी नहीं रखती थी। बस, प्रतीक की इस्तेमाल वाली चीज़ों की तरफ़ उसने ध्यान देना बंद कर दिया था।

जब प्रतीक को उसकी चीज़ें नहीं मिली तो वह एक दिन आयुषी पर भड़क गया, “ये क्या, बाथरूम में साबुन नहीं है, मेरी शेविंग क्रीम ख़त्म हो गयी और तुम्हें ख़्याल ही नहीं।”

आयुषी ने भी पलटकर जवाब दिया, “मैं क्यों ख़्याल करूं. ये सामान तुम इस्तेमाल करते हो, तुम ख़रीदकर लाओ. आखिर तुम भी कमाते हो.”

“ये क्या कह रही हो तुम?” प्रतीक के स्वर में नरमी आ गयी।

“वही कह रही हूँ, जो सच है. तुम पुरुष हो, कमा रहे हो. अगर मेरे साथ शादी करते तो मेरे भरण-पोषण की ज़िम्मेदारी तुम्हारी होती, परन्तु यहां तो उल्टा हो रहा है. तुम प्रेम के नाम पर मेरा शोषण कर रहे हो, मानसिक और आर्थिक दोनों स्तर पर. यह कहां की इंसाफी है कि साथ रहने के नाम पर तुम मेरा उपभोग

करो, और मेरे पैसे से सुख भी भोगो. अपने स्तर पर कोई ज़िम्मेदारी क्यों नहीं उठाते. आज दो साल के करीब होने जा रहे हैं. तुमने एक भी पैसा इस घर के लिए तो छोड़ो, खाने-पीने के लिए भी खर्चा नहीं किया. तुम अकेले रहते तो क्या खाते पीते नहीं. शादी करते तो क्या घर-परिवार का खर्चा नहीं उठाते? आखिर कहां गया तुम्हारा पैसा? कहते हो, बाद में काम आयेगा. तो जाओ, आज घर में सामान नहीं है, लेकर आओ. मेरे पास भी पैसे नहीं हैं.”

“क्या हो गया है तुम्हें? ऐसी तो नहीं थी.” प्रतीक ने अविश्वास का भाव प्रदर्शित करते हुए कहा।

“सच कह रहे हो, मैं ऐसी कभी नहीं थी, परन्तु तुमने मुझे ऐसा बना दिया है.” आयुषी ने कहा. उसका हृदय फिर अंदर ही अंदर रोने लगा, परन्तु प्रतीक के लिए जैसे कुछ हुआ ही नहीं था. वह दूसरे कमरे में जाकर लैपटॉप पर कुछ करने लगा. करेगा क्या, फेसबुक पर फर्जी अनजान दोस्तों से चैटिंग कर रहा होगा.

आयुषी और प्रतीक को लगभग बराबर तनख़्वाह मिलती थी. आयुषी की पूरी तनख़्वाह खर्च हो जाती और प्रतीक अपनी सारी तनख़्वाह बैंक में जमा करके रखता था या क्या करता था, आयुषी ने कभी नहीं पूछा. वह इतनी भोली थी कि उसने यह तक नहीं पूछा था कि वह कहां का रहनेवाला था, उसके घर-परिवार में कौन-कौन था, जबकि उसने अपने बारे में पहली ही मुलाकात में सबकुछ बता दिया था.

उनके बीच जब मनमुटाव बढ़ने लगा, तो एक दिन आयुषी ने पूछा, “प्रतीक, तुमने अपने घर के बारे में कभी कुछ नहीं बताया. तुम कहां के रहनेवाले हो, तुम्हारे मम्मी-पापा क्या करते हैं? घर में और कौन-कौन हैं?”

प्रतीक ने एक अजीब सी मुद्रा में उसको देखा, “क्यों इसकी क्या ज़रूरत पड़ गयी?”

“अरे, कमाल करते हो, हम दोनों साथ-साथ रहते हैं तो क्या एक दूसरे के बारे में नहीं जान सकते.” आयुषी ने सहज भाव से कहा.

“यह काम तो तुम्हें पहले ही करना चाहिए था. अब क्या मेरे परिवार के पास कोई शिकायत भेजनी है? या उनके ख़िलाफ़ थाने में रिपोर्ट लिखवानी है.” प्रतीक ने दिल को जलानेवाली बात कही.

आयुषी का हृदय तड़क गया. प्रतीक इस तरह की बातें क्यों कर रहा था? क्या उसके मन में पहले से ही खोट थी. वह आयुषी को दिल से प्यार करता ही नहीं था. वह तो उसकी सुन्दरता का पान करना चाहता था और उसके पैसे से मौज़

उड़ाना चाहता था. आयुषी के मन में अब इस बात को लेकर कोई संदेह नहीं रह गया था. उसके चरित्र की पतें धीरे-धीरे खुलने लगी थीं. साथ रहने पर ही मनुष्य की असलियत खुलती है और लोग एक दूसरे के बारे में अच्छी तरह जान पाते हैं.

“इसके लिए केवल तुम्हीं काफी हो, तुम्हारे घरवालों को फंसाने की ज़रूरत नहीं है.” आयुषी ने कड़वाहट के साथ कहा, “लेकिन तुम्हारी बातों से तुम्हारा असली चरित्र उजागर हो रहा है. काश, मैं तुम्हें पहले पहचान पाती.”

“पहचान भी जाती तो क्या कर लेती?” उसने भी कड़वाहट के साथ कहा.

“मैं अभी भी कुछ नहीं करना चाहती. लेकिन तुम्हारे व्यवहार से लगता है कि तुम इस सम्बन्ध को आगे बढ़ाने के इच्छुक नहीं हो. जान-बूझकर बातों में तल्खी लाने की कोशिश करते हो. अगर ऐसी बात है तो बता दो, मैं तुम्हें स्वतंत्र कर दूंगी.”

“मुझे स्वतंत्र करने के लिए तुम्हारी आज्ञा की ज़रूरत नहीं है. मैं जो चाहे कर सकता हूँ.”

“सच, लिव-इन-रिलेशनशिप का यहीं तो फायदा है, कोई जिम्मेदारी, कोई बंधन नहीं. इसका सबसे बड़ा फायदा तो तुम लड़कों को ही होता है. हम लड़कियां तो बेवकूफ होती हैं, जो तुम्हारी मीठी-मीठी, चिकनी-चुपड़ी बातों में आ जाती हैं. तुम्हारे बनावटी प्यार को नहीं पहचान पातीं और उसी का खामियाजा हमें पूरी ज़िन्दगी भुगतना पड़ता है.”

इसी तरह की छोटी-छोटी बातें उनके बीच बड़ी बातें बन जातीं. आयुषी बहुत उदास रहने लगी थी. ऑफिस में उसकी एक घनिष्ट सहेली थी, शिवांगी. उसने आयुषी की उदासी भांप ली और एक दिन लंच के दौरान पूछ ही लिया, “क्या बात है, आयुषी, आजकल तुम्हारे चेहरे की प्रफुल्लता और चमक गायब होती जा रही है. तुम्हारे और प्रतीक के बीच में कुछ गड़बड़ है क्या?”

आयुषी एक पल तो शिवांगी का चेहरा देखती रह गयी. उसके हृदय में कुछ पिघलने लगा. लगा कि वह रो पड़ेगी, परन्तु वह ऐसा नहीं कर सकती थी. क्या कहेगी शिवांगी. वह उसकी हर बात जानती थी. उसके संबंधों के बारे में जानती थी. उसने ही एक बार उसे सलाह दी थी कि जितनी जल्दी हो सके, शादी कर लो, परन्तु वह प्रतीक के प्यार में ऐसी रंगी थी कि भावी जीवन की तकलीफों और दुःखों का वह अनुमान ही नहीं लगा पाई थी. आज अगर अपने संबंधों में आई कड़वाहट का जिक्र वह शिवांगी से करती है, तो उसके सामने वह हंसी का पात्र बनेगी.

“लगता है, कुछ गंभीर मसला है. मुझे अगर तुम सच्ची दोस्त मानती हो तो अपने मन की बात कह सकती हो.” शिवांगी ने ज़ोर देकर कहा.

आयुषी टूट गयी. भीगे स्वर में कहा, “लगता है, मैं गलत थी. मुझे तुम्हारी सलाह पहले ही मान लेनी चाहिए थी.”

“फिर भी क्या हुआ है, क्या तुम कुछ बता सकती हो?”

आयुषी ने धीरे-धीरे सबकुछ बताया, कुछ भी नहीं छिपाया. सुनकर शिवांगी एक पल के लिए सन्न रह गयी. फिर बोली, “मैंने तो तुम्हें पहले ही सलाह दी थी. खैर, ये तो एक दिन होना ही था. अब से तुम संभल जाओ. प्रतीक यह कंपनी छोड़ने के चक्कर में है. वैसे तो वह किसी को अपनी बातें नहीं बताता है, परन्तु उसके एक खास मित्र ने यह खुलासा कर दिया है. वह बंगलौर की किसी कंपनी में जॉब के लिए कोशिश कर रहा है. तुम समझ सकती हो.”

“मुझे भी यही शक था. उसके व्यवहार से लग रहा था कि अब इस संबंध से उसका मन उचट गया है और छूट भागने की कोशिश कर रहा है.”

“फिर क्या करोगी तुम?”

“कुछ नहीं...” शिवांगी को आश्चर्य हुआ, “क्या मतलब? तुम उसके खिलाफ कुछ नहीं करोगी. उसने तुम्हारा शोषण किया है.”

“नहीं शिवांगी, उसने मेरा कोई शोषण नहीं किया है. हम दोनों ने जो कुछ किया, उसमें मेरी सहमति थी. अब हमारे कर्मों का परिणाम जो भी हो, मैं उसे भुगतने के लिए तैयार हूँ.”

शिवांगी आश्चर्य से उसे देख रही थी, “तुम विचित्र हो, क्या तुम अपने को संभाल लोगी.”

“हां, मैं अपने को संभाल लूंगी.” आयुषी ने आत्मविश्वास से कहा.

“तुम्हें कभी मेरी ज़रूरत पड़े, बताना. मैं तुम्हारा भला चाहती हूँ.”

“ठीक है, शिवांगी. मुझे यह बातें बताने के लिए धन्यवाद. मैं अपना ख्याल रखूंगी.”

आयुषी के पापा सरकारी अधिकारी थे. बहुत ज़्यादा जिम्मेदारियां नहीं थीं. आयुषी को पढ़ाने-लिखाने में जो खर्च हुआ, वह उनकी तनख्वाह और बचत से पूरा हो गया. लेकिन उनके पास बहुत ज्यादा धन-दौलत नहीं थी. उसकी उन्हें आवश्यकता भी नहीं थी. बेटी स्वयं कमा रही थी, उन्हें कोई चिन्ता नहीं थी.

इसी बीच आयुषी की मम्मी का फोन आया कि उसे गाल ब्लाडर में पथरी हो गयी है, आपरेशन करवाना पड़ेगा. उन्होंने पैसे की मांग नहीं की थी, बस आने के

लिए कहा था; परन्तु आयुषी ने सोचा- ऐसे मौके पर अगर कुछ पैसे भेज सके तो पापा को कुछ राहत मिल सकेगी.

उसके खाते में पैसे नहीं थे. तनख्वाह मिलने में समय था. उसने प्रतीक से कहा, “मुझे कुछ पैसों की ज़रूरत है.”

प्रतीक का मुंह आश्चर्य से खुला रह गया, “तुम और पैसे? क्या तुम्हारे पास नहीं हैं?”

“नहीं हैं, तभी तो मांग रही हूँ.” उसने असहाय भाव से कहा, “मम्मी का आपरेशन होना है, उन्हें देने हैं.”

“क्या तुम घर जा रही हो?”

“सोच रही हूँ, इसी बहाने घर हो आऊंगी. एक साल से ऊपर हो गया. घर नहीं गयी.”

“मेरे पास तो नहीं हैं.” प्रतीक ने सपाट स्वर में कहा, “कल ही घर भिजवा दिये हैं.”

आयुषी समझ गयी, प्रतीक साफ़ झूठ बोल रहा था. पूछा, “आखिर ऐसे बड़े-बड़े झूठ तुम कैसे बोल लेते हो. कभी कहते हो, पैसे बचा रहे हो, कभी कहते हो घर भेज दिये. आखिर सारे पैसे तो तुम घर नहीं भेजते होगे. इस घर में एक कौड़ी भी तुम खर्च नहीं करते. तुम्हारे व्यक्तिगत खर्च से लेकर खाने-पीने तक का खर्चा मैं उठा रही हूँ. तुम्हें इस बात की शर्म नहीं आती कि मेरे टुकड़ों पर मौज़ कर रहे हो.”

“यह तुम्हारी ज़रूरत है, जो मेरे साथ रह रही हो.” उसने ऐंठ से कहा, जैसे हर लड़की की यह मज़बूरी होती है कि वह लड़के के साथ रहते हुए उसका सारा खर्च वहन करे. आयुषी कुछ और कहने की सोच ही रही थी कि प्रतीक ने उसके सामने ही कार की चाबी उठाई और उसको बिना कुछ बताये बाहर चला गया. उनके बीच जब भी कोई इस तरह की बात होती तो वह या तो लैपटॉप लेकर बैठ जाता या कार लेकर कहीं चला जाता.

प्रतीक बाहर चला गया तो वह काफी देर तक गुमसुम बैठी रही. वह घर की एक-एक चीज़ को देख रही थी. उसे अपने जीवन की पिछली बातें याद आ रही थीं. प्रतीक के व्यवहार में आए परिवर्तन को वह समझ नहीं पा रही थी. इतना तो वह देख ही रही थी कि अब वह उसके साथ नहीं रहना चाहता था, इसीलिए वह बात-बात में कटुता घोलने का यत्न करता था. वह जान-बूझकर सम्बन्ध खराब करने

पर तुला हुआ था; ताकि उसे अलग होने का बहाना मिल जाए. संभवतः वह किसी दूसरी लड़की के चक्कर में था या उसके घरवालों ने उसकी कहीं शादी तय कर दी थी.

अगर ऐसी कोई बात थी, तो वह उससे साफ़-साफ़ कह सकता था. आयुषी इतनी दुष्ट नहीं थी कि वह बदले की भावना के चलते उसके खिलाफ़ कोई कार्रवाई करती. कार्रवाई करने से भी क्या फ़ायदा? उसको सजा हो जाएगी, जेल चला जाएगा, परन्तु वह आयुषी का तो तब भी नहीं हो सकता था. जब उसके प्यार और समर्पण से वह उसका नहीं हुआ, तो कानून के द्वारा उसको हासिल करके क्या लाभ? मन से वह उसका कभी नहीं हो सकता और वह भी तो उसे फिर पहले जैसा प्यार नहीं कर सकती थी. ऐसे सम्बन्धों को तोड़ देना ही बेहतर होता है.

पैसे जुटाने के लिए वह क्या करे? घर का कोई सामान बेच दे, परन्तु उससे कितने पैसे जुटेंगे. उसने काफ़ी विचार किया. वह अगर अपने घर जाती है, तो आने-जाने में दस-बीस हजार खर्च हो जाएंगे. अतएव वह खुद तो नहीं गयी, परन्तु ऑफिस की एक मित्र से पैसे लेकर पापा के खाते में पचास हजार रुपये डलवा दिये.

आयुषी और प्रतीक के बीच के मधुर संबन्ध कटुता की पराकाष्ठा पर पहुंच चुके थे. इसका ज़िम्मेदार कौन था, यह उन दोनों की समझ में नहीं आ रहा था. शायद परिस्थितियां ज़िम्मेदार थीं, परन्तु ऐसा नहीं होता. सबकुछ परिस्थितियों पर निर्भर नहीं रहता. मनुष्य स्वयं परिस्थितियों का निर्माता होता है. वह चाहे तो उन्हें अपने अनुसार बदल सकता है. आयुषी और प्रतीक के बीच की स्थितियां भी बदल सकती थीं, अगर उन दोनों में से कोई एक अपने को बदल लेता. प्रतीक अपने को बदलने को तैयार नहीं था और आयुषी अपने को बदल रही थी. उसका बदलना स्वाभाविक था, क्योंकि उसका शोषण हो रहा था. ऐसी स्थिति में पहले जैसे मधुर सम्बन्धों की अपेक्षा करना दोनों के लिए बेमानी था.

प्रतीक का अपने घरवालों से पूरा सम्पर्क था. वह साल-छह महीने में अपने घर आता-जाता था, परन्तु आयुषी इन दो सालों में केवल एक बार घर गई थी. फोन पर बात होती थी, परन्तु घर जाने के नाम पर बहाना बना देती थी कि अभी नई नौकरी है, काम ज़्यादा है, छुट्टी नहीं मिल पाएगी. उसने घर में यह भी बता रखा था कि शायद कम्पनी की तरफ़ से उसे अमेरिका भेज दिया जाय. मां बहुत इच्छुक थीं कि आयुषी की शादी हो जाये, परन्तु आयुषी ने बहाना बना दिया था कि अमेरिका से लौटने के बाद ही शादी के बारे में कुछ सोचेगी. वास्तविकता तो यह थी कि वह शादी की सोच से बहुत आगे निकल चुकी थी.

इसी खटपट के दौरान प्रतीक एक सप्ताह की छुट्टी लेकर अपने घर चला गया. तब आयुषी ने भी चुपके से छुट्टी ली और मां-बाप के घर हो आई. इतने दिनों बाद मां की गोद में सिर रखकर लेटने में उसे जो सुख की अनुभूति हुई, वह उसे प्रतीक की गोद में लेटकर भी कभी नहीं हुई थी. पापा के साथ बैठकर पुरानी यादों को ताज़ा करके वह फिर से अपने बचपन में पहुंच गयी. उसे लगा, परिवार के सुख से बढ़कर कोई सुख नहीं होता. लड़के-लड़कियां अपने प्रेम और शारीरिक सुख के लिए घर-परिवार और मां-बाप से दूर भागते हैं, परन्तु वास्तविक सुख का आनन्द कहां उठा पाते हैं. जो सुख जिम्मेदारियों के साथ जीने में है, वह स्वछंदता में कहां? जहां स्वछंदता होती है, वहां सम्बन्धों में बिखराव होता है. प्रेम में बंधन न हो तो उसमें गर्माहट नहीं होती.

मम्मी-पापा के साथ बिताये गए सुखद पलों को अपने मन में समेटकर आयुषी वापस मुंबई आ गयी. प्रतीक तब तक नहीं आया था. उसने फोन किया तो फोन बंद मिला. आयुषी को थोड़ी चिन्ता हुई. एक हफ्ते में उन दोनों के बीच फोन पर कोई बात नहीं हुई थी. दो साल बाद मम्मी-पापा का प्यार और स्नेह मिला तो वह प्रतीक को बिलकुल भूल ही गई. प्रतीक के प्रति उसका यह विस्मरण अस्वाभाविक नहीं था. इसमें उसके दुराचरण का बहुत बड़ा हाथ था.

प्रतीक दूसरे दिन सुबह तक भी नहीं पहुंचा था. घर बड़ा सूना लग रहा था. आयुषी का मन उदास हो गया. इस घर में वह उसके साथ दो साल रही थी. प्रतीक कैसा भी था, कपटी और कंजूस; परन्तु आयुषी ने उसे प्यार किया था, उसको अपना तन सौंपा था. वह उसका सर्वस्व था, इसी भावना के तहत उसे अपनाया था और चाहती थी कि जीवन के अन्तिम क्षण तक उसकी ही होकर रहे; परन्तु शायद प्रतीक के मन में कुछ और था. उसने केवल प्रतीक का ऊपरी प्रेम देखा था, उसके अंतर्मन को नहीं पढ़ पाई थी, इसीलिए आज दोराहे पर खड़ी थी- आगे जाए कि पीछे, उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था.

बड़े उदास मन से वह अपने घर की एक-एक चीज़ को हसरत भरी निगाहों से देखती रही. आज से पहले इतना सूनापन उसे कभी नहीं लगा था. प्रतीक पहले भी अपने घर गया था, परन्तु तब उसे सूनेपन का अहसास नहीं हुआ था. आज कुछ तो अप्रत्याशित घटित होनेवाला था. क्या था वह? यह उसके अनुमान से परे था. उदास और खाली मन से वह ऑफिस जाने के लिए तैयार होने लगी. प्रतीक का फोन अभी तक बंद था.

आयुषी जब दफ़्तर पहुंची तो वहां के माहौल में भी खुशी की लहरें नहीं थी. एक अजीब सा मनहूस सन्नाटा वहां पसरा हुआ था. उसने साफ़ देखा कि उसके सहकर्मियों के चेहरों पर सहमी-सी ख़ामोशी छाई हुई थी. उसने मुस्कराकर सबका अभिवादन किया, परन्तु किसी के चेहरे पर उसे देखकर मुस्कराहट नहीं आयी. तमाम अच्छे-बुरे ख़याल उसके मन में एक साथ गुजर गये, परन्तु उसकी समझ में नहीं आया कि दफ़्तर में छाई मनहूसियत और सहकर्मियों के चेहरे की उदासी का क्या कारण था. उसे देखकर सब एकदम से चुप क्यों हो गये थे?

वह अपने केबिन में जाकर बैठी ही थी कि शिवांगी आ गयी. दोनों एक दूसरे के काफी निकट थीं और आपस में काफी अंतरंग बातें भी कर लेती थीं. उसने मुस्कराकर कहा, “आओ, आओ, शिवांगी कैसी हो?”

शिवांगी ने अपने बारे में कुछ न बताते हुए उसी से पूछा, “तुम बताओ, तुम कैसी हो? प्रतीक नहीं आया तुम्हारे साथ?” उसका स्वर गंभीर था. वह आयुषी के चेहरों के भाव पढ़ने का प्रयास कर रही थी.

आयुषी के हृदय पर जैसे किसी ने एक बड़ा पत्थर रख दिया था. वह एक पल सकते-की-सी हालत में बैठी रही. फिर बोली, “पता नहीं, क्यों नहीं आया? उसका फोन भी बंद है.”

शिवांगी के चेहरे पर हैरत के भाव तैर गए. आंखें फैलाकर बोली, “तो तुम्हें नहीं मालूम?”

“क्या?” आयुषी ने धड़कते दिल से पूछा.

“प्रतीक ने यह कम्पनी छोड़ दी है.” शिवांगी ने बिना किसी हिचक के बता दिया. इसमें छिपाने के लिए कुछ था भी नहीं. देर-सवेर उसे पता चलना ही था.

“क्या?” आयुषी को विश्वास नहीं हो रहा था.

“हां, पिछले हफ्ते ही उसका ई-मेल से रिजिग्नेशन लेटर आया था. लिखा था कि पारिवारिक कारणों से वह यह नौकरी आगे नहीं कर सकता था.”

“ओह!” आयुषी के मुंह से बस इतना ही निकला. इस बार दूसरा बड़ा पत्थर उसके सिर के ऊपर बम की तरह फटा था. शिवांगी आगे कह रही थी, “मैं जानती थी, एक दिन यही होना था. प्रतीक जैसे चतुर और तेजतर्रार लड़के प्रेम-सम्बन्धों में अपना जीवन बरबाद नहीं करते. इनके लिए यह सम्बन्ध बस टाइम पास की तरह होते हैं. ये पूरी तरह से भौतिकवादी होते हैं. प्रेम उनके लिए बस क्षणिक ज़रूरत की तरह होता है, जिम्मेदारी की तरह नहीं. उनकी ज़रूरत पूरी हो गयी, बस चलते बने, जैसे किसी रेस्तरां में खाना खाकर मुंह पोंछते हुए चले जाते हैं.

शिवांगी जीवन की बहुत कड़वी सच्चाई बयान कर रही थी, परन्तु आयुषी कुछ सुन रही थी, कुछ नहीं. उसके कान ही नहीं, दिमाग भी सुन्न हो गया था. चेहरे पर तरह-तरह के भाव आ रहे थे, परन्तु वह कुछ सोच-समझ नहीं पा रही थी. शिवांगी उसकी मनःस्थिति समझ रही थी, अतः वह थोड़ी देर के लिए चुप हो गयी. फिर उठकर बाहर चली गयी. बॉस के पास जाकर उनको पूरी स्थिति से अवगत कराया. उनसे एक दिन की छुट्टी ली और फिर आयुषी को उसके केविन से लेकर बाहर आ गयी. उसने कार भी चाभी मांगी, तो आयुषी ने चुपचाप उसे दे दी. फिर शिवांगी उसकी कार में आयुषी को बिठाकर उसके घर पहुंची. पूरे रास्ते आयुषी कुछ नहीं बोली थी, परन्तु वह सामान्य ढंग से चल फिर रही थी.

शाम तक आयुषी पूरी तरह से सामान्य हो गयी थी. शिवांगी ने उसे समझाते हुए कहा, “आयुषी, तुम समझदार हो. मनुष्य का जीवन बहुत सारी कटुताओं से भरा होता है, फिर भी हम जीवन के प्रति मोह नहीं छोड़ते. हर बाधा को पार करते हुए सुख की तलाश करते रहते हैं. यही जीवन है. तुम्हारे जीवन का यह अंत नहीं है. यह समझ लो, प्रतीक तुम्हारा नहीं था. आधुनिक जीवन में लिव-इन-रिलेशनशिप एक सच्चाई हो सकती है, परन्तु यह अटल सच्चाई नहीं है. यह सम्बन्ध केवल शारीरिक ज़रूरतों पर आधारित होते हैं, जैसे विवाहपूर्व या विवाहेतर सम्बन्ध, और जो सम्बन्ध केवल ज़रूरत पर आधारित होते हैं, वह स्थायी नहीं होते. ज़रूरत पूरी होने पर ये अपने आप टूट जाते हैं या उनमें इतनी कटुता समा जाती है कि वह स्वमेव टूट जाते हैं. कई बार इनका बहुत दुःखद अंत होता है, जैसे किसी की हत्या या तरह-तरह के आरोप और प्रत्यारोप, फिर थाना और कोर्ट कचहरी...यही इनकी सच्चाई है. भारतीय जीवन में वहीं सम्बन्ध टिकाऊ और शाश्वत होते हैं, जिनमें प्रतिबद्धता, पारिवारिक और सामाजिक बंधन के साथ जिम्मेदारियां होती हैं. शादी एक ऐसा ही रिश्ता है, इसीलिए वह जीवन भर चलता है. हां, दाम्पत्य और वैवाहिक जीवन में भी मतभेद होते हैं, परन्तु उनका हम समाधान ढूँढ़ लेते हैं. तुमने देखा होगा, पश्चिम में भी, जहां लिव-इन-रिलेशनशिप बहुत आम है, वहां भी स्त्री और पुरुष एक समय के बाद शादी के बंधन में बंध जाते हैं. क्या तुम समझ रही हो, मैं क्या कहना चाहती हूं.”

“हां, मैं समझ रही हूं.” आयुषी के चेहरे पर पहली बार हल्की मुस्कराहट आई थी, “इस बात को मैं बहुत पहले समझ गयी थी. प्रतीक नौकरी छोड़कर न जाता, तब भी इस सम्बन्ध को टूटना ही था. वह इसके प्रति गंभीर नहीं था.”

“अच्छा हुआ, तुम पहले ही इस बात को समझ गयी थी. अब तुम जल्दी ही संभल जाओगी. जब हमें किसी से प्यार होता है तो वह हमें इतना प्रिय लगता है कि उसकी चाहत में हम होश खो देते हैं, परन्तु प्यार का नशा टूटते ही होश-हवाश ठिकाने आ जाते हैं. मैं समझती हूं, तुम्हारे जीवन में भी सब जल्दी ठीक हो जाएगा.”

“मैं अब पूरी तरह से होश में आ गयी हूं शिवांगी.” आयुषी ने उसके हाथ पकड़कर कहा, “मैं पहले भी कमज़ोर नहीं थी, अब भी कमज़ोर नहीं पड़ूंगी. अब शाम हो गयी है, तुम अपने घर जा सकती हो.”

“क्या तुम अकेले रह लोगी, कोई दिक्कत हो तो रात में रुक जाती हूं. मैं अपने पति को फोन कर दूंगी.”

“नहीं, तुम चिन्ता मत करो. मैं ठीक हूं.” उसने मुस्कराकर कहा.

शिवांगी के जाने के बाद उसने अपने पूरे घर को घूम-घूमकर देखा, एक-एक चीज़ को देखा, हाथ लगाकर देखा. यह उसका घर था, उसके सुख-सपनों का घर, जिसे कितने अरमानों से उसने सजाया-संवारा था. भले ही किराए का फ्लैट था, परन्तु उसके अंदर की हर चीज़ में उसकी जान बसी हुई थी. प्यार के लिए उसने अपना सबकुछ कुर्बान कर दिया था, अपना तन-मन और रुपया-पैसा. यह सब लुटाने के बाद उसे ज्ञान मिला था कि जवानी का प्यार और बिना शादी के किसी के साथ पति-पत्नी की तरह रहना बिल्कुल उस यात्री की तरह होता है, जो अपने सहायात्री का साथ केवल अपने गंतव्य तक देता है और सभी यात्रियों का गंतव्य एक नहीं होता. अगर एक हो भी तो भी हर यात्री एक ही मुकाम पर नहीं जाते. गंतव्य पर भी उनके मुकाम अलग-अलग होते हैं.

आज आयुषी का प्यार मर गया था. उसे उसका अंतिम संस्कार करना था.

वह सोच रही थी...रुपया-पैसा तो वह फिर से जोड़ लेगी, परन्तु क्या टूटा हुआ मन वह जोड़ पाएगी. हां, जोड़ लेगी. वही तो कहती है कि वह कमज़ोर नहीं है. पहले भी नहीं थी, अब भी नहीं है. आदमी मर जाता है, उसके परिजन उसके दाह-संस्कार के बाद अपने-अपने काम में जुट जाते हैं. जानेवाले को भूल जाते हैं, विगत को बिसराकर लोग आगे बढ़ते रहते हैं. प्यार तो एक भावना है. उसके मरने के बाद वह दुबारा अपना जीवन क्यों नहीं नए सिरे से शुरू कर सकती है. आयुषी को भी यही करना था. उसे आगे बढ़ना था.

उसने अपनी इच्छा से बिना मां-बाप की मर्जी के प्रतीक के साथ रहना मंजूर किया था. अब उसके परिणाम भी उसे ही भुगतने थे, बिना कमज़ोर हुए. प्रतीक

उसकी कमज़ोरी अवश्य था, क्योंकि वह उसे दिल से प्यार करती थी. अब उस कमज़ोरी को दूर कर उसे आगे बढ़ना है. अब वह किसी दोराहे पर अपने मन में कोई द्विविधा लेकर नहीं खड़ी रहेगी. उसके मन के सारे संशय दूर हो चुके थे. आज उसकी समझ में आ रहा था कि लिव-इन-रिलेशनशिप एक ऐसा दोराहा होता है, जहां पर आकर युवक या युवती न तो आगे जा सकते हैं, न पीछे. उनका जीवन अंधेरी गलियों में भटककर रह जाता है. ऐसा कोई भी सम्बन्ध आज तक जीवन की पूर्णता तक नहीं पहुंचा है. जीवन के कुछ वर्षों के बाद ही उसका अंत हो जाता है.

घर में बहुत सारी चीज़ें थी, उसकी और प्रतीक की. और ऐसी भी बहुत सारी चीज़ें थीं जो उन दोनों के कॉमन प्रयोग में आती थीं. यह सारी चीज़ें आयुषी ने बड़े प्यार से अपने पैसों से खरीदी थीं. इनमें प्रतीक का एक पैसा नहीं लगा था, फिर भी वह प्रतीक से सम्बन्धित चीज़ों से छुटकारा पाना चाहती थी. उनका अंतिम संस्कार करना चाहती थी. उन चीज़ों से उसे नफ़रत हो गयी थी. उन चीज़ों को उसने छोट-छोटकर अलग रखना शुरू किया, कपड़े, कास्मेटिक्स, फोटो आदि. उसने वह फोटो भी छोटकर अलग कर दिये, जिनमें वह खुद प्रतीक के साथ थी. वह प्रतीक से जुड़ी हुई कोई भी चीज़ अपने घर में नहीं रखना चाहती थी. यह घर उसका बनाया हुआ था, उसी का रहेगा. किसी और की यहां यादें भी नहीं रह सकती थीं. यादें मनुष्य को भावुक बनाती हैं. वह भावुक होकर फिर से अपने जीवन में विष नहीं घोलना चाहती थी.

जब उसे यकीन हो गया कि प्रतीक से जुड़ी हुई कोई चीज़ अब घर में नहीं बची है, सबको उसने छोटकर अलग कर दिया है, तो उसने छांटी हुई चीज़ों को एक चद्दर में बांधा. सोचा, इनको ले जाकर कहीं आग लगा देगी. उसने घड़ी पर नज़र डाली. रात के ग्यारह बज गये थे. चीज़ों को छांटते-छांटते उसे समय का ख़याल नहीं रहा. खाने-पीने की बात भी उसके दिमाग से निकल गयी थी. उसे भूख नहीं लग रही थी, जबकि उसने पूरे दिन में कुछ भी नहीं खाया था.

रात में ही इन चीज़ों को किसी सुनसान जगह में जलाना होगा, आज ही. वह कल तक इंतज़ार नहीं कर सकती थी. रात में वह इन चीज़ों के साथ इस घर में नहीं रह सकती. उसने माचिस ली. घर में केरोसीन या पेट्रोल नहीं था, गाड़ी में था, परन्तु उससे निकालना संभव नहीं था. आधुनिक कारों में पाइप डालकर पेट्रोल नहीं निकाल सकते हैं. बिना केरोसीन या पेट्रोल के इन चीज़ों को ठीक से नहीं जलाया जा सकता था. वह इन चीज़ों को जलाने के लिए वहां सारी रात नहीं

बैठ सकती थी, फिर...फिर उसके मन में एक ख़याल आया. अगर इन चीज़ों को वह जला नहीं सकती थी, तो जलसमाधि दे ही सकती थी. इस तरह भी तो मृत व्यक्तियों का अंतिम संस्कार किया जाता है.

उसने सामान को बाहर निकालकर गाड़ी में डाला. उसका मन पूरी तरह शांत था. उसे क्या करना है, यह उसके दिमाग में पूरी तरह स्पष्ट था. उसके मन में कोई उलझन नहीं थी, वह विचलित भी नहीं थी. वह डर भी नहीं रही थी. मृत व्यक्ति से क्या डरना? यह तो मृत व्यक्ति की निर्जीव वस्तुएं थीं.

गाड़ी चलाकर वह पॉम बीच रोड पर पहुंची. नेरुल गांव का बड़ा तालाब दाहिनी तरफ़ था. वह यू टर्न लेकर तालाब की तरफ़ आ गयी. एक किनारे गाड़ी रोककर अंदर बैठे-बैठे ही बाहर का ज़ायज़ा लिया. घूमनेवाले लोग अब कम हो गये थे, परन्तु गाड़ियों का आवागमन बदस्तूर जारी था. उसने गाड़ी को सड़क के बिल्कुल किनारे रोका था, उसके बाद नीची ज़मीन थी, जहां पेड़ थे, पैदल चलनेवालों के लिए रास्ता था जो तालाब का नज़ारा लेने के लिए वहां टहलते थे.

सन्नाटा देखकर उसने गट्टर को गाड़ी से नीचे तालाब की तरफ़ धकेल दिया, वह लुढ़ककर नीचे की ज़मीन पर गिर गया. फिर आयुषी धीरे से नीचे उतरी. अपने दाएं-बाएं देखकर वह भी नीचे उतर गयी और लात से ही सरकाकर गट्टर को तालाब के बिल्कुल किनारे तक ले गयी. आसपास छोटे-बड़े पत्थर पड़े थे. उसने ढूंढकर एक भारी पत्थर निकाला और उसे गट्टर के साथ बांध दिया, फिर जिधर पानी काफ़ी गहरा लग रहा था, उस तरफ गट्टर को खींचकर ले आई. उसने एक बार फिर अपने आसपास का ज़ायज़ा लिया और फिर बिना किसी हिचक के गट्टर को जोर से लात मारकर तालाब में गिरा दिया. हल्की खल्ल की आवाज़ हुई और फिर सबकुछ शांत. उसने नीचे की तरफ देखा, कहीं कुछ दिखाई नहीं दे रहा था. बिजली की रोशनी में पानी हिलता हुआ दिखाई दे रहा था, परन्तु गट्टर कहीं नज़र नहीं आ रहा था. शायद पानी में डूब गया हो. नहीं डूबा होगा, तो थोड़ी देर में डूब जाएगा. पत्थर का वज़न काफ़ी था. कपड़ों में भी पानी सोखेगा तो वह भारी हो जाएंगे, फिर वह पानी के धरातल में कहीं जाकर गुम हो जाएंगे, उसके प्रतीक की तरह, जिसका आज उसने अंतिम संस्कार किया था.

यह सब करने के बाद वह शांत भाव से खड़ी कुछ देर तक तालाब के पानी में बिजली की रोशनी की लहराती हुई परछाइयों को देखती रही, तभी उसके फोन की घंटी बजी. इतनी रात को कौन हो सकता है, उसने तत्काल फोन की स्क्रीन

देखी- उसके दिल में धमाका-सा हुआ...प्रतीक! उसने फोन से उसका नंबर मिटाया ही नहीं था. लेकिन उसका फोन...? इतनी रात को...? अब किसलिए? सबकुछ खत्म हो गया. अपने मन को काबू में रखते हुए उसने सबसे पहले कॉल को रिजेक्ट किया, फिर फोन से उसका नंबर मिटाकर फोन बंद कर दिया. अब उसके मन को पूर्ण शांति मिली थी.

वह आराम से चढ़कर सड़क पर आ गयी. उसके सामने सीधी सड़क थी, जो उसके घर की तरफ जाती थी. आगे कोई दोराहा नहीं था, कोई मोड़ नहीं था.

वह कार में बैठी और गाड़ी का इंजन स्टार्ट कर दिया. उसकी आंखों के सामने सबकुछ साफ-साफ दिख रहा था. दोराहे की धुंध छंट गयी थी.

उसने गाड़ी गियर में डाली और एक्सीलेटर पर पैर दबा दिया.



गांव में एक दिन

लगभग बीस साल बाद गांव आया था. जबसे पिताजी नहीं रहे, गांव आना लगभग समाप्त हो चुका था. साल दो साल में किसी शादी-ब्याह में घंटे-दो घंटे के लिए गांव या उसके आस-पास के क्षेत्र में रिश्तेदारियों में आना-जाना होता रहता था, परन्तु इस प्रकार का आना न आने के बराबर होता था. उस दौरान न तो किसी से ज़्यादा घुलकर बातें हो पाती थीं, न किसी को जानने का मौका मिलता था. गांव के बारे में छिटपुट जानकारीयां मिलती रहती थीं, परन्तु उससे गांव में होनेवाले परिवर्तनों के बारे में सही तरीके से जानकारी नहीं मिल पाती थी.

गांव में मेरा कोई सगा-संबंधी नहीं था. खानदान के लोग थे, परन्तु उनसे केवल शादी-ब्याह के अवसर पर औपचारिक तौर पर मिलना हो पाता था. वहां अगर कोई खास था, तो मेरा एक दोस्त था, जो मेरे साथ इलाहाबाद में पढ़ता था. बी. ए. तक की शिक्षा पूरी करने के बाद उसने नौकरी नहीं की थी. गांव में आकर बस गया था. उसके पास अच्छी-खासी पुश्तैनी खेती की ज़मीन थी. उसी को आधुनिक तरीके से विकसित कर वह खेती कर रहा था और अच्छी कमाई कर रहा था. उसने अपनी खेती को फार्म हाउस में बदल दिया था. छटे-छमासे राजेन्द्र ही मुझे फोन करता था और जब भी फोन करता, गांव आने के लिए ज़रूर कहता. मैं भी 'हां, आऊंगा' कहकर फिर से प्रशासनिक और पारिवारिक कार्यों में व्यस्त हो जाता. बात आई-गई हो जाती.

गांव जाने का कोई विशेष कारण मेरे पास नहीं था, इसीलिए बीस साल तक मैं गांव नहीं जा सका, परन्तु इस बार कुछ ऐसा संयोग बना कि मेरी तैनाती मेरे गृह ग्राम से केवल 100 किलोमीटर की दूरी पर हो गई. अब मेरे पास कोई बहाना नहीं बचा था कि मैं अपने मित्र के आग्रह को टाल सकता, अतएव एक शनिवार

को अपनी गाड़ी से गांव के लिए रवाना हो गया. बच्चों से कहा, परन्तु वह गांव की धूल-धक्कड़ खाने के लिए तैयार नहीं हुए. बीबी ने भी मना कर दिया. आधुनिक सभ्यता की चकाचौंध ने नई पीढ़ी को ग्रामीण अंचल से बहुत दूर कर दिया है या उनके मन में गांवों के बारे में ऐसी भ्रांतियां हैं, जो किसी भी तर्क और प्रमाण से दूर नहीं की जा सकती हैं.

सुबह के ग्यारह बजे मैं अपने मित्र के फार्म हाउस पर पहुंच गया था. उसने बड़ी खुशदिली और गर्मजोशी से मेरा स्वागत किया. गले मिलते हुए पूछा, “भाभी और बच्चों को नहीं लाए?”

मैंने संकोच करते हुए कहा, “क्या बताऊं दोस्त, आजकल के बच्चे गांवों की तरफ नहीं अमेरिका की तरफ भागते हैं. उनकी आंखों में भौतिकता की चमक है और वह भारत में रहते हुए भी यहां की सभ्यता और संस्कृति को हेय दृष्टि से देखते हैं.”

“हां, अब तो गांवों के भी बहुत सारे लड़के दुबई, कुवैत, बहरीन और अन्य कई अरब देशों में जाकर काम कर रहे हैं. ढेरों रुपया भेजते हैं. उनके घरों में समृद्धता आ गई है, परन्तु रिश्तों में बहुत दूरियां हो गयी हैं. गांव में पक्के मकान हैं, परन्तु गलियां सूनी हैं. एक-दूसरे से मिलना-जुलना कम होता है. किसी के पास समय ही नहीं है कि एक दूसरे के पास जाकर गप्प-शप्प मार सके.”

“लगता है, शहर ने गांवों में अपने पैर पसार लिये हैं. गांवों में आई समृद्धता के कारण अपनापन समाप्त हो गया है.”

“यही एक कारण नहीं है. मैं तो गांव में रहता हूं, मुझे पता है. यहां एक दूसरे से दूरियों के अन्य कारण भी हैं. समृद्धता के साथ यहां अपराधों ने भी जन्म ले लिया है. एक जमाना था, पारिवारिक झगड़ों के अलावा किसी प्रकार के झगड़े यहां नहीं होते थे, परन्तु अब तो बेवज़ह भी यहां झगड़े, लड़ाइयां होती हैं. तुम्हें पता नहीं होगा, इस गांव में कई हत्यायें भी हो चुकी हैं. मार-पीट तो आए दिन होती रहती है.”

“अच्छा,” मैंने आश्चर्य व्यक्त किया. यह मेरे लिए अफ़सोसजनक भी था कि गांव के लोगों के बीच भाईचारा खत्म हो चुका था. नई पीढ़ी परम्पराओं, नैतिकता, संस्कारों, मर्यादा और सदाचरण से दूर होती जा रही थी. इसीलिए अपराध पनप रहे थे.

“गांवों में होनेवाली घटनाओं के बारे में रात में बात करेंगे.” मैंने मित्र से कहा.

चाय-पानी के बाद मैंने गांव घूमने का मन बनाया. मित्र भी साथ हो लिया. हम दोनों उसके फार्म हाउस से निकलकर दक्षिण दिशा में चले, जिधर मेरे बचपन और जवानी के दिनों तक एक लंबा-चौड़ा ऊसर का मैदान हुआ करता था. हमारा इंटर कॉलेज इसी दिशा में था और गांव के बच्चे जब टोली बनाकर स्कूल-कॉलेज के लिए निकलते थे तो इस मैदान में हम लोगों की दौड़ लगा करती थी. इसी क्रिया को हम लोग स्कूल से लौटते समय भी दोहराते थे.

मुझे उस दिशा में दूर-दूर तक कहीं ऊसर का मैदान नज़र नहीं आया. चारों तरफ खेतों की लंबी-लंबी कतारें थीं, जिनमें धान की फसल लहलहा रही थी. वह कुआर का महीना था और कुवारी धान की फसल पक चुकी थी, अगहनी धानों में अभी तक फूल नहीं आए थे, परन्तु फ़िज़ा में कच्चे-पक्के धानों की मनमोहक सुगन्ध बिखरी हुई थी. हल्की-हल्की पुरवाई भी मन को आह्लादित कर रही थी. आसमान साफ़ था, इसलिए धूप थोड़ी तीखी थी, परन्तु पुरवाई की टंडक से धूप उतनी कष्टदायक नहीं लग रही थी.

मैंने प्रश्नवाचक भाव से मित्र की तरफ देखा, और पूछा, “मित्र वह ऊसर कहां चला गया?”

“वह तो कभी का टुकड़ों में बंटकर लोगों के कब्जे में आकर खेतों में तब्दील हो गया. कुछ ज़मीन सरकार ने गरीबों को आबंटित कर दी और कुछ ज़मीन दबंगों ने अपने कब्जे में कर ली. इस तरह ऊसर और चरागाह खत्म हो गये. जैसे-जैसे जनसंख्या बढ़ती रही, मकानों की आवश्यकता भी बढ़ती रही. गांव के किनारे के खेतों में मकान बन गये. ऊसर और खाली मैदान, जहां कभी जानवर चरा करते थे, खेतों में बदल गये. आज कहीं भी एक इंच ज़मीन खाली नहीं मिलेगी, सब तरफ़ खेत ही खेत हैं.”

सच में देश तरक्की कर रहा है. जनसंख्या बढ़ रही है, नए-नए मकान बन रहे हैं, ऊसर ज़मीन उपजाऊ ज़मीन में बदल रही है, पेड़ कट रहे हैं. आदमी को पेड़ों की टंडी छांव की ज़रूरत नहीं है, वह गमलों में लगे फूल-पौधों को देखकर खुश हो रहा है. प्राकृतिक हवा के बजाय पंखों की हवा से ताजगी अनुभव कर रहा है, या वातानुकूलित कमरों की टंडक से दिल में तरावट महसूस कर रहा है. जीवन कितना बदल गया है, सचमुच देश ने बहुत तरक्की की है. मैंने एक अफ़सोस की सांस ली और बागे बढ़ गया.

मित्र मेरे पीछे-पीछे आता हुआ कह रहा था, “ऊसर के बीच में जो रास्ता था, वह पक्की सड़क बन गया है, उस पर अब हम फरटि से गाड़ियां दौड़ाते हुए गांव से कस्बे दस मिनट में पहुंच जाते हैं.”

हम दोनों सड़क पर पहुंच गये थे. मित्र ने बताया, सड़क अभी तीन साल पहले ही बनी थी, परन्तु वह इस कदर टूट चुकी थी कि लगता था उसे बने हुए दस-बीस साल हो गये हैं, जबकि उससे कोई भारी वाहन नहीं गुजरता था. केवल मोटर साइकिलें और कभी-कभी छोटी गाड़ियां गुजरती थीं. परन्तु सड़क में जगह-जगह गड्ढे थे और उसके कंकड़-पत्थर उछलकर इधर-उधर बिखर गये थे.

हम लोग उसी सड़क से पैदल चलते हुए पश्चिम की दिशा में नहर की तरफ बढ़े. मुझे याद है, बरसात के दिलों में यह रास्ता पानी और कीचड़ से भर जाता था, तब हम लोग नहर के रास्ते घूमकर अपने इंटर कॉलेज जाते थे, जो उस रास्ते से लगभग दूनी दूरी पर पड़ता था, परन्तु इसके अलावा और कोई रास्ता नहीं था. अब सड़क बनने से सुविधा हो गयी थी. बरसात के पानी-कीचड़ से लोगों को निजात मिल गयी थी.

नहर की पुलिया पर खड़े होकर मैंने दोनों दिशाओं में देखा. नहर का जो स्वरूप मेरी आंखों में बसा हुआ था, वह कहीं नज़र नहीं आ रहा था. नहर के अंदर दोनों किनारों पर ऊंची-ऊंची घास और पतवार उगी हुई थी. नहर की तली में मिट्टी की ऊंची परत जमी हुई थी, जैसे वहां बाहर से मिट्टी लाकर डाली गयी हो. नहर की तलहटी में भी लंबी-घनी घास उगी हुई थी, जैसे बरसों से उस पर पानी का बहाव नहीं हुआ था.

“क्या नहर में पानी नहीं आता आजकल?” मैंने मित्र से पूछा.

वह दुःखी स्वर में बोला, “आजकल की छोड़ो, मुझे तो यह भी याद नहीं कि नहर में कितने वर्ष से पानी नहीं आया है. बरसात में भी इसमें पानी नहीं बहता है.”

“फिर सिंचाई का काम?”

“लोगों ने अब ट्यूबवेल लगवा लिये हैं, पम्पसेट गड़वा लिये हैं, काम चल जाता है.”

अफसोस की फिर एक लंबी सांस...मैं राज्य सरकार में अधिकारी था और मुझे अच्छी तरह पता था कि राज्य में सिंचाई मंत्री थे, सिंचाई विभाग था, उसमें सचिव स्तर से लेकर अन्य सैकड़ों अधिकारी और हजारों कर्मचारी थे. पूरा महकमा काम कर रहा था, परन्तु नहर विभाग इस तरह उपेक्षित कैसे था, यह समझ में नहीं आ रहा था. अधिकारी और मंत्री कर क्या रहे थे?

मेरे बचपन में नहर में लगभग बारहों महीने पानी आता था. इसी से गांव के खेतों की सिंचाई होती थी. कुछ खेतों की सिंचाई तालाब के पानी से होती थी, या रहट या पुराही से, परन्तु 90 प्रतिशत सिंचाई नहर के पानी से होती थी और अब नहर में पानी ही नहीं आता था.

इस नहर की पुलिया के नीचे पानी झरने की तरह गिरता था. पानी आने की दिशा में ज़मीन ऊंची थी. इस पुलिया के बाद नहर की सतह नीची हो गयी थी, अतः पानी आने की दिशा में एक पक्की दीवार बना दी गयी थी, उसके बीच में पानी निकलने के लिए कटाव था, जहां से नहर का पानी झरने की शक्ति में नीचे गिरता था. उसका मधुर संगीत हर आने-जाने वाले को कुछ देर के लिए वहां रोक लेता था. मैं जब बचपन में इस दिशा में जानवर चराने के लिए आता था तो पुलिया पर बैठकर कल-कल की आवाज के साथ पानी को गिरते हुए देखता रहता. जब नहर में पानी नहीं आता था, तब पुलिया के नीचे की खाली जगह में, जहां झरना गिरने के कारण गड़बा बन गया था, कई प्रकार की मछलियां इकट्ठा हो जाती थीं. लोग उन्हें पकड़ने के लिए आते थे. मैं भी कभी-कभी वहां मछली पकड़ने के लिए उतर जाता था. परन्तु इस दुःसाहस के मुझे गंभीर परिणाम भुगतने पड़ते थे. मेरे बाबा मेरे किसी तालाब या नदी-नाले में उतरने के सख्त खिलाफ थे और अगर उन्हें पता चल जाता था कि मैंने ऐसी कोई हिमाकत की थी तो जमकर मेरी टुकाई होती थी.

अब तो नहर में पानी भी नहीं था. मैं न तो झरने के संगीत का मजा उठा सकता था, न नहर की पुलिया के नीचे इकट्ठा हुई मछलियों के दर्शन कर सकता था.

सूरज सिर पर आ गया था. धूप अब और तीखी हो गयी थी और बदन को चुभने लगी थी. मैं चुपचाप खड़ा मुर्दा नहर को देख रहा था और मेरे मन में बचपन के सुनहरे दिनों की यादें एक-एक कर आती जा रही थीं. बचपन की यादों से निकलने का मन नहीं हो रहा था, परन्तु तभी मित्र ने टोंक दिया, “आओ, अब चलें. दोपहर के खाने का समय हो रहा है. नहा-धोकर खाना खाकर कुछ देर आराम करेंगे. धूप कम होने पर बाकी गांव का भ्रमण करेंगे.”

हम दोनों फार्म हाउस पर लौट आए. मित्र के फार्म हाउस पर रसोई बनाने की व्यवस्था थी, परन्तु वहां खाना विशेष अवसरों पर ही बनता था. आज उसके घर से खाना बनकर आया था.

नहाने के लिए मित्र ने पम्पसेट चालू कर दिया. पाइप से बर्फ सा सफेद पानी तेजी से निकलकर टंकी में गिरने लगा. साफ-सुथरा पानी देखकर एक बारगी तो

गांव में एक दिन :: 65

मेरा मन भी नहाने का हुआ, परन्तु मैं सुबह नहा-धोकर घर से चला था, इसलिए केवल हाथ-मुंह धोया. मित्र ने वहीं स्नान किया और फिर हम लोगों ने खाना खाया.

मन थोड़ा-थोड़ा उदास था. गांव की दुर्दशा पर दुःख हो रहा था. आखिर देश के कर्णधार इस देश को कहां ले जा रहे थे. विकास के नाम पर प्राकृतिक धरोहरों का विनाश करते जा रहे थे. गांव और शहर प्रकृति की सुन्दरता को निगलते जा रहे थे, और हम बेखबर थे.

तीसरे पहर मैं अपने मित्र के साथ गांव घूमने के लिए निकला. गांव की गलियां पक्की हो गयी थीं, कहीं-कहीं खड़जा लगा था, पक्की नालियां बन गयी थीं. अब कहीं कच्चे मकान नज़र नहीं आते थे. गांव में सम्पन्नता ने पैर पसार लिये थे, परन्तु किस कीमत पर...गलियां सूनी थीं. घरों के बाहर लोग दिखाई नहीं पड़ रहे थे.

मैंने पूछा, “गांव में इतना सन्नाटा क्यों है?”

मित्र ने धीमे स्वर में कहा, “मैंने बताया था न, गांव में अब भाईचारे जैसी कोई बात नहीं रह गयी है. लोग वैमनस्यता की छांव में दिन बिताने के लिए मज़बूर हैं. युवाओं में अपराध की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है, लड़कियों से सरेआम छेड़खानी होने लगी है. मोबाइल और टी.वी. ने गांव की संस्कृति में सेक्स, बलात्कार और लूटपाट का ज़हर घोल दिया है.”

“तो क्या अब लोग आपस में मिलते-जुलते नहीं हैं?”

“नहीं, बस आमने-सामने पड़ गये तो दुआ-सलाम कर ली, वरना हर आदमी अपने खेत और घर के बीच कैद होकर रह गया है. अब किसी के घर के सामने महफिलें, चौपालें नहीं लगतीं, देश-विदेश की बातें नहीं होती. राजनीति के चर्चे नहीं होते. लोग अपने में सिमटकर रह गये हैं. पता नहीं कौन सा रोग इस गांव को लग गया है कि भाईचारा और प्यार मोहब्बत ख़त्म हो गया है.”

हम दोनों चलते जा रहे थे, और बातें करते जा रहे थे. गलियों में चलते हुए इक्का-दुक्का आदमी-युवा और बूढ़े मिल जाते थे, परन्तु कोई भी मुझे पहचान नहीं पा रहा था. युवा मुझे इसलिए नहीं पहचानते थे कि उन्होंने मुझे कभी देखा नहीं था और बूढ़े इसलिए नहीं पहचान पा रहे थे कि मैं बीस साल बाद गांव में आया था और इन बीस सालों में न केवल मुझमें परिवर्तन आ गया था, बल्कि गांव के लोग भी बदल गये थे. बुढ़ापे के असर ने उन्हें जर्जर कर दिया था. मेरे भी आधे से अधिक बाल सफेद हो गये थे, शरीर मोटा और कुछ हद तक थुलथुल हो गया था. गाल भरे हुए

थे और सफाचट मूंछें ने पूरी शक्ति ही बदल दी थी. मित्र से मैं पूछता जा रहा था और पहचान कर बड़े-बूढ़ों को नमस्कार करता जा रहा था.

नाम बताने पर बुजुर्ग मुझे पहचान जाते थे, क्योंकि उन्हें मेरे बारे में पता था और वह जानते थे कि मैं शहर में सरकारी अधिकारी था.

परन्तु दुआ-सलाम के बावजूद किसी व्यक्ति ने मुझे अपने घर पर बुलाकर चाय-पानी के लिए नहीं पूछा, जबकि कई व्यक्ति तो अपने घर के सामने ही मिले थे. उन्होंने औपचारिक बातें की, हाल-चाल पूछे और बस...कहीं से भी मुझे किसी के व्यवहार में आत्मीयता नहीं लगी. समय के साथ लोगों में शारीरिक परिवर्तन ही नहीं होते, स्वभावगत और व्यवहारगत परिवर्तन भी होते हैं. यह आज मुझे गांव आकर पता चल रहा था.

गावों में जनसंख्या बढ़ गयी थी, पुराने कच्चे मकान पक्के हो गये थे. नए मकान बनते जा रहे थे, परन्तु लोगों के दिल खाली होते जा रहे थे. जब लोगों के घरों में सम्पन्नता आती है, तो दिलों के बीच दूरियां भर जाती हैं.

गांव के उत्तर-पूर्वी किनारे पर एक बड़ा तालाब था, जिसे उसकी विशालता के कारण बीस सागर कहा जाता था. इसे झील नहीं कहा जा सकता था, परन्तु तालाब काफी बड़ा था और इसमें पूरे साल पानी नहीं सूखता था. कितनी भी गर्मी पड़ती थी, परन्तु तलहटी में पानी ज़रूर बचा रह जाता था. इस तालाब में जाड़े के दिनों में सरवन नाम के साइबेरियन पंछी आते थे. वह जाड़ा आरंभ होते ही आ जाते थे और गर्मी का अहसास होते ही चले जाते थे. रात दिन उनकी चहचहाहट से पूरा गांव गुंजायमान रहता था. पंछी पूरे तालाब की शोभा थे.

गांव का चक्कर लगाकर जब हम उत्तरी दिशा में पहुंचे तो मेरा दिल धक् से रह गया. तालाब की जगह पर ऊंची-ऊंची टेकरियां थीं, जैसे वहां मिट्टी का भराव किया गया था. तालाब के दक्षिणी और पश्चिमी किनारों पर लोगों ने अपने मकान बना लिये थे, जिससे तालाब का अस्तित्व सिमटकर आधे से कम रह गया था. आधे तालाब में भी मिट्टी भर गयी थी और उसमें पानी का नामोनिशान तक नहीं था. केवल आभास सा होता था कि किसी जमाने में वहां कोई तालाब हुआ करता था. ऐसा कैसे हुआ?

मैंने मित्र की तरफ देखा और पूछा, “क्यों भाई, इस तालाब को क्या हो गया?”

वह व्यंग्यात्मक हंसी हंसकर बोला, “होना क्या था, जब धरती पर पाप बढ़ेंगे तो तालाब क्या नदी, सागर सभी सूख जायेंगे.”

“परन्तु अपने गांव के इस तालाब के सूखने का क्या कारण है?”

“इसके कुछ कारण तो मनुष्यों द्वारा उत्पन्न किये गये हैं और कुछ आस्था और विश्वास से जुड़े हुए हैं.”

“वह कैसे?” मेरी जिज्ञासा बढ़ने लगी थी.

“लगभग दस साल पहले की बात है. उस वर्ष अतिवर्षा के कारण चारों तरफ बाढ़ की स्थिति पैदा हो गई थी. चारों तरफ पानी ही पानी नज़र आता था. खेत, खलिहान, नदी, नाले, तालाब और कुएं सब पानी से लबालब भर गये थे. पता ही नहीं चलता था कि कहां तालाब है, कहां नाला है और कहां कुआं है? उसी वर्ष इस तालाब में मछलियों की भरमार हो गयी. तुम्हें याद है, इस तालाब में गांव के लोगों को छोड़कर कभी कोई मछली नहीं मारता था, वह भी ज़्यादातर कांटा लगाकर. जाल तो शायद ही कोई डालता था. परन्तु उस वर्ष विनाश की देवी ने ग्राम प्रधान के मन में लालच भर दिया और उसने लोगों के मना करने के बावजूद तालाब की मछलियां बेच दीं.”

“फिर...?”

“फिर क्या? वही हुआ जो होना था. मछेरों ने बड़े-बड़े जाल डालकर बेरहमी से मछलियों का शिकार किया. शिकार करने के कारण पंछी भी उड़ गये. कई दिनों तक मछलियों का शिकार होता रहा और बेचारे पंछी उड़कर आते, आसमान के कई चक्कर लगाते, परन्तु तालाब में बड़े-बड़े जाल तथा शिकारियों को देखकर निराश लौट जाते और एक दिन ऐसा गये कि दुबारा लौटकर नहीं आये. आज तक नहीं आये. हम लोग तो उस पक्षी के दर्शन को तरस गये.”

“वह तो होना ही था. मनुष्य के लोभ और क्रूरता से पशु-पक्षी ही नहीं प्रकृति का भी विनाश होता है, परन्तु यह तो बताया नहीं कि तालाब कैसे सूखा?”

“पता नहीं यह किसका अभिशाप था कि उस साल के बाद न तो तालाब में पानी भरा, न पंछी लौटकर आये. अगले साल बारिश में पानी तो तालाब में आया, परन्तु उसके साथ ही इतनी ज़्यादा मिट्टी बहकर आई कि तालाब की तलछटी में गाद भर गयी, सतह ऊंची हो गयी. पानी कहां टिकता?”

इतने बड़े और गहरे तालाब के सूख जाने के जो भी आस्था, विश्वास और अभिशाप के कारण रहे हों, परन्तु यह सच था कि मनुष्य के अतिक्रमण और विकास की गतिविधियों से इसका विनाश हुआ था. मुझे याद है, मेरे बचपन में भी तालाब के किनारों पर जिन लोगों के घर थे, वह अपने घर का कूड़ा-कचरा और मिट्टी तालाब के किनारे डालते रहते थे, जिससे तालाब सिकुड़ता जा रहा था. उन दिनों भी कई लोगों ने तालाब को पाटकर अपने घरों के सहन बढ़ा लिये थे और कई लोगों ने उनमें दीवारें भी खड़ी कर दी थीं, जो बाद में कमरों में तब्दील हो गयीं.

मेरे बचपन के दिनों में गांव के आधे से ज़्यादा मकान कच्चे थे और गर्मियों में उनकी मरम्मत के लिए गीली मिट्टी के साथ-साथ घरों के अंदर ज़मीन को समतल बनाने के लिए तालाब से मिट्टी के बड़े-बड़े ढेले उखाड़कर निकाले जाते थे. कच्चे मकान की दीवारें भी तालाब की मिट्टी से बनती थीं. इसके अतिरिक्त कुछ संपन्न लोग तालाब की मिट्टी से ईंटें बनवाकर वहीं भट्टे लगवाते थे. इस तरह हर साल तालाब की तलहटी से मिट्टी निकाले जाते रहने के कारण उसकी गहराई बनी रहती थी. परन्तु जब से पक्के मकान बन गये, लोगों ने तालाब से मिट्टी निकालनी बंद कर दी. नतीज़ा यह हुआ कि प्रत्येक वर्ष बरसात के पानी के साथ तालाब में मिट्टी भरती रही और तालाब गायब होता रहा. इसमें दोष किसको दें?

मैंने मित्र से पूछा, “मनरेगा के तहत सरकार की तरफ से तालाबों को खुदवाकर पक्का करवाने का अभियान चलाया जा रहा है. क्या इस तालाब को सरपंच ने नहीं खुदवाया?”

मित्र बड़ी जोर से हंसा, “यार, तुम भी शहर जाकर घनचक्कर बन गए हो. तुमको नहीं मालूम कि सभी सरकारी योजनाएं केवल अधिकारियों और कार्यकर्ताओं की जेबें भरने के लिए चलाई जाती हैं. इस तालाब की खुदाई करके गहरा करने के लिए पता है कितने रुपये खर्च किए गये हैं.”

“कितने...?” मैंने उत्सुकता से जिज्ञासा प्रकट की.

“पूरे पांच लाख...”

“तो फिर यह गहरा क्यों नहीं हुआ?”

“कैसे होता? दस-पांच मज़दूरों ने कुछ दिन काम किया. काम क्या किया, काम के नाम पर तालाब के किनारे की थोड़ी बहुत मिट्टी काटकर बगल में डाल दी. क़ाग़जों में सैकड़ों मज़दूरों के नाम दर्ज़ किये गये. उनके नाम से बैंक में फ़र्जी खाते खुलवाकर

सरपंच और अधिकारियों ने सारा पैसा हड़प कर लिया. उधर पैसा गायब हुआ, इधर अगली बरसात में तालाब की मिट्टी फिर से बहकर तालाब में आ गयी.”

प्रशासन की लूट-खसोट तो हर व्यक्ति जानता है. मैं मित्र से क्या बयान करता. चुप रह गया.

चूँकि मैंने अपने बचपन के सुनहरे दिन गांव में गुजारे थे और तब प्रकृति की सुनहरी छटा के साथ मैंने दौड़ते-भागते, उछलते-कूदते अपना बचपन वहां गुजारा था, मुझे गांव की बरबादी पर अधिक दुःख हो रहा था. जब बरबादी क्रमिक रूप से आती है, तो किसी को विनाश की गति का पता नहीं चलता और वह दुःखी नहीं होता. परन्तु मैंने अचानक गांव की बरबादी को बीस साल बाद देखा था, तो मुझे विनाश के लक्षण साफ-साफ दिखे थे, इसलिए मुझे अति दुःख हुआ था. गांववाले इससे बेखबर थे.

रात को जब हम दोनों मित्र खाना खाकर लेटे, तो मित्र ने गांव की दो-चार ऐसी अनहोनी बातें बताईं, जिन्हें सुनकर मुझे भी अत्यन्त दुःख हुआ. यह मेरे लिए कल्पनातीत नहीं था कि गांव में हत्या जैसे जघन्य अपराध की घटनाएं भी हो चुकी थीं.

दुनिया के प्रत्येक कोने में प्रेम-मोहब्बत, दुराचार, व्यभिचार, अपहरण, बलात्कार और शारीरिक शोषण की घटनाएं होती रहती हैं. इनके कारण हत्याएं भी होती हैं, परन्तु जहां तक मैं जानता हूं, मेरा गांव हत्या जैसी जघन्य घटनाओं से अछूता था. किसी बुजुर्ग ने भी ऐसी किसी घटना का जिक्र कभी नहीं किया था. मैं गांव में लगभग 22 साल की उम्र तक रहा था और मेरी जानकारी में ऐसी कोई घटना मेरे गांव में कभी नहीं हुई थी, परन्तु लगभग पन्द्रह साल पहले इस गांव में हत्या की पहली घटना हुई थी.

मित्र ने बताया कि इसकी शुरुआत बेचारे महेश की मृत्यु से हुई. वह बेचारा गरीब आदमी था, शक्ल-सूरत का बहुत साधारण और रंग बिलकुल आबनूस की तरह काला, परन्तु सौभाग्य या उसके दुर्भाग्य से उसकी बीवी खूब गोरी-चिट्ठी और खूबसूरत थी. उसकी जाति में ऐसी सुंदर लड़कियां दुर्लभ थीं. कहते हैं, उसकी बीवी ही उसका दुर्भाग्य अपने साथ लेकर आई थी. वह सुंदर ही नहीं स्वभाव की चंचल भी थी. महेश गोविंद सिंह का खेतिहर मजदूर था. बीवी भी उसके साथ ठाकुर के खेतों में काम करती थी. गांव का यह अलिखित काला इतिहास है कि गरीब औरतों का सदा दबंगों द्वारा यौन-शोषण किया जाता रहा है. बहलाने-फुसलाने, लालच से

लेकर डराने-धमकाने तक के हथकंडे अपनाए जाते हैं, और कोई भी गरीब की जवान लड़की या बहू बिना शोषण के नहीं बचती.

महेश की बहू गोविंद सिंह के जाल में फंस गयी. यही नहीं, वह इतनी खूबसूरत थी कि गांव के अन्य दबंग भी उसके पीछे हाथ धोकर पड़ गये. वह किस-किस से बचती, लिहाज़ा जल्द ही गांव में उसकी बदचलनी के चर्चे हर एक की जुबान पर चढ़ने लगे. यह एक कड़वा सच है कि औरत मर्दों के द्वारा बेइज्जत की जाती है, परन्तु बदचलनी और बदनामी का दाग केवल औरत के माथे पर लगता है. महेश गांव के दबंगों या गोविंद सिंह का तो कुछ बिगाड़ नहीं सकता था, अतएव उसने अपनी बीवी पर लगाम लगानी चाही. बस उसकी इतनी सी ख़ता की सज़ा उसे अपनी जान देकर चुकानी पड़ी.

जाड़े के दिन थे. एक सुबह महेश की लाश गोविंद सिंह के आलू के खेत में पड़ी मिली. उसी रात उस में पानी दिया गया था. पास ही बिजली का खंभा था और बिजली का एक तार टूटकर महेश के पास पड़ा हुआ था. लाश मिलते ही पुलिस को खबर की गयी, पुलिस आई और लाश का पंचनामा करके उठा ले गयी. बताते हैं कि पुलिस ने उसे दुर्घटना का मामला बताकर फाइल बंद कर दी थी. कहा गया कि महेश रात में गोविंद सिंह के खेत में पानी लगाने गया था. वहीं अचानक बिजली का तार टूटकर उसके ऊपर गिर पड़ा था, जिससे करंट लगने से महेश की मृत्यु हो गयी थी. परन्तु चश्मदीदों का कहना था कि महेश के शरीर में कहीं भी बिजली के तार से जलने के निशान नहीं थे, बल्कि उसके गले में एक घाव था जैसे किसी ने उसके गले में लोहे के तार को लपेटकर उसका गला दबाया हो. निश्चित ही यह एक हत्या का मामला था, परन्तु पुलिस ने उसे दुर्घटना का मामला बताकर दबा दिया था.

न किसी की गवाही हुई, न किसी से पूछताछ हुई. लोगों ने भी अपनी जुबान बंद रखी. गरीब आदमी की मौत पर कोई अपनी जान का दुश्मन क्यों बनता.

दूसरी घटना इस प्रकार हुई.

मेरे हमवयस्क दीपक का बेटा कमल अपने पड़ोसी की बेटी से इश्क़ लड़ा बैठा. दोनों ही जाति के ठाकुर और दबंग थे, परन्तु इश्क़ किसी को बर्दाश्त नहीं होता, लड़की के घरवालों को तो बिलकुल नहीं. जब दोनों के इश्क़ के चर्चे पूरे गांव में फैले तो लड़की पर पाबंदियां लगाई गईं, उसका घर से निकलना बंद हो गया. कुछ लोगों ने मिलकर कमल के बाप से भी शिकायत की. दीपक ने भी अपने लड़के

को समझाया, धमकाया; परन्तु इश्क की आग जब एक बार लग जाये तो जल्दी नहीं बुझती. चूंकि लड़की और लड़के के घर आपस में जुड़े हुए थे, वह दोनों रात में छत पर मिलने लगे. इसका पता बहुत दिनों तक किसी को नहीं चला, परन्तु एक रात लड़की की मां ने देख लिया कि वह चुपके-चुपके छत पर जा रही थी. उसने अपने पति को जगाया. दोनों ने उसका पीछा किया तो छत पर अपनी लड़की को लड़के के साथ संभोगरत देख लिया.

उस वक़्त तो लड़की के बाप ने खून का घूंट पी लिया, परन्तु मन ही मन एक योजना बना डाली.

फिर एक दिन पता चला कि कमल की लाश लड़की के बाप के ट्यूबवेल के कमरे के अंदर से बरामद हुई. लड़की को उसी दिन कहीं और भेज दिया गया था और घरवाले फरार हो गये थे. बाद में पता चला था कि उनकी योजना रात में लाश भी गायब कर देने की थी, परन्तु तब तक पुलिस को खबर हो गयी थी और अंधेरा घिरने के पहले ही पुलिस ने गांव में डेरा डाल दिया था, अतः लड़की के घरवाले कमल की लाश गायब नहीं कर सके.

परन्तु लड़की वाले सम्पन्न थे. अपने एक रसूखदार रिश्तेदार के माध्यम से पुलिस को अग्रिम पैसा पहुंचाया गया. फिर एक योजना के तहत उन लोगों ने सरेंडर कर दिया. चूंकि सारा खेल पैसे का था, पुलिस ने हल्का-फुल्का मामला बनाकर अदालत में आरोप-पत्र पेश कर दिया. परन्तु दीपक भी ठाकुर था और कुछ हद तक पैसेवाला, परन्तु लड़की वालों से पैसे के मामले में कमजोर पड़ता था. लड़के के क़त्ल का मामला था, अतः उसने पुरजोर तरीके से मामले की पैरवी थी. उसकी पैरवी से मामला लड़कीवालों के खिलाफ़ जा रहा था और लगने लगा था कि मुल्ज़िम आसानी से बरी नहीं हो सकते थे. इससे चिन्तित होकर लड़के के बाप और उसके दादा ने सुलह करने की सोची. उन्होंने गांव के सभी ठाकुरों को एकजुट किया. ठाकुरों का आपसी मामला होने के कारण गांव की पंचायत ने दीपक को समझाया और उसे तीन लाख रुपये देकर गवाही से मुकरवा दिया गया. इसके बाद मामले को बंद होना ही था. इसके अतिरिक्त बचाव पक्ष के वकील के माध्यम से जज साहब को भी लाखों रुपये भेंट में चढ़ाये गये. इस प्रकार गवाहों के अभाव में लड़की का बाप और दादा बाइज्जत बरी हो गये.

पैसे की ताक़त ईमान की ताक़त से बड़ी होती है.

दूसरी घटना भी इतनी ही दर्दनाक थी. जगेसर काछी का लड़का पवन हाईस्कूल कर चुका था. वह खेलकूद में अच्छा था और दौड़ भी अच्छी लगा लेता था. वह सेना में भर्ती होना चाहता था. उसके साथ गांव के चार-पांच लड़के भी खेलकूद और दौड़ में भाग लेते थे. वे सभी सेना में भर्ती होना चाहते थे और जी-जान से इसके लिए मेहनत कर रहे थे. इसीलिए जब जिले में सेना की भर्ती का कैम्प लगा, तो उन सबने टेस्ट में भाग लिया. सौभाग्य या दुर्भाग्य से केवल जगेसर काछी का बेटा पवन ही टेस्ट में सफल हो सका और भर्ती के लिए मेडिकल करवाने की पर्ची उसे मिल गयी.

टेस्ट के बाद जब सभी लड़के गांव वापस आ रहे थे, तो रास्ते में किसी बात को लेकर ठाकुरों के लड़कों और पवन में कहासुनी हो गयी. ठाकुर के लड़कों ने उसकी अच्छी-खासी पिटाई कर दी और उसे धमकी दी, “साले, देखते हैं कि कैसे तुम सेना में भर्ती होते हो. तुम अकेले सेना में जाओगे तो हमारी गांव में बदनामी नहीं होगी? जिस दिन गांव से बाहर निकलोगे, तुम्हारे हाथ-पैर तोड़ देंगे.”

बेचारा पवन डर गया. डर के कारण उसने घर से निकलना बंद कर दिया. इधर मेडिकल की तारीख़ निकट आ रही थी, उधर उसके मन में डर सांप की तरह फन फैलाकर बैठ गया था. घरवाले उसके ऊपर फौज में जाने का दबाव बना रहे थे. वह कच्ची उम्र का लड़का था. घरवालों के दबाव और लड़कों के भय का तनाव वह झेल न सका और घर के अंदर ही फांसी लगाकर आत्महत्या कर ली. आत्महत्या करने के पहले उसने एक पर्ची में आत्महत्या का कारण लिख दिया था कि ठाकुरों के लड़कों की मार के डर से वह आत्महत्या कर रहा था.

रोना-पीटना मचा, पुलिस में रिपोर्ट लिखाई गयी, पूछताछ हुई; परन्तु अंत में ढाक के वही तीन पात. ठाकुर के लड़कों का कुछ नहीं हुआ. यहां भी रुपये ने अपना कमाल दिखाया और ठाकुरों के लड़के खुले सांड की तरह गांव में घूमते रहे.

यही लड़के आजकल गांव में उत्पात और आतंक मचा रहे हैं. वह फौज में भर्ती नहीं हो पाए हैं, तो लूटपाट के धन्धे में लिप्त हो गए हैं. गांव की किसी भी बहू-बेटी को छेड़ देना, उससे जबरदस्ती करना उनका आए-दिन का काम है. वह बाहर ही नहीं, गांव के आदमियों को भी डरा-धमकाकर पैसे लूट लेते हैं. गांववाले तो कुछ नहीं बोलते, डर के मारे चुप रहे जाते हैं, परन्तु जब यह लड़के गांव के बाहर वारदात करते हैं, तो इनके खिलाफ़ रपट लिखाई जाती है. आए दिन गांव में

पुलिस बनी रहती है, परन्तु इन लड़कों की हरकतों पर कोई असर नहीं होता और उनकी हरकतों में बढ़ोतरी होती ही जा रही है.

गांव का हर भला आदमी और औरत डरी-सहमी रहती है कि पता नहीं कब उसके साथ क्या हो जाए.

सबसे बुरा तो दयाराम लोध के साथ हुआ. बेचारा गरीब आदमी है, मेहनत मज़दूरी करके गुजारा करता है. मित्र ने बताया कि उसकी जवान बेटी का चक्कर बलराज सिंह के लड़के विनोद के साथ हो गया. विनोद भी पढ़ाई-लिखाई छोड़कर आवारागर्दी में लिप्त रहता है. दयाराम की बेटी की बदनामी जब सिर चढ़कर बोलने लगी, तो उसने ढूँढ़-ढाँढ़कर एक गरीब लड़के के साथ उसकी शादी कर दी. उसकी लड़की ससुराल चली गयी, परन्तु बदनामी ने फिर भी उसका पीछा नहीं छोड़ा.

आज के ज़माने में मोबाइल ज़रूरत कम, मुसीबत की जड़ ज़्यादा है. हर आवारा लड़के के हाथ में मोबाइल फोन है. भले ही बात करने के लिए उसमें पैसे न हों, परन्तु फिल्मों गानों की भरमार है. लड़कियां लड़कों से बचकर जाएं तो कहां जाएं. दयाराम की बेटी की शादी अवश्य हो गयी थी, परन्तु मोबाइल फोन के कारण बदनामी और विनोद ने उसका पीछा नहीं छोड़ा. विनोद उसकी ससुराल में उसको फोन करने लगा. कुछ दिन तक तो उसने किसी तरह से चुरा-छिपाकर विनोद से बात की, परन्तु ससुराल में किसी नवव्याहता का फोन पर बातें करना ससुराल वालों की नज़रों से छुपा नहीं रह सकता था. जल्द ही उसकी पोल खुल गयी. पति ने मारपीट कर पूछा, तो उसने डर के मारे विनोद के बारे में सबकुछ बता दिया.

उसका पति सहनशील नहीं था. उसने आव देखा न ताव. सीधे अपनी ससुराल पहुंचा और सीधे स्वभाव के दयाराम से उसकी बेटी की काली करतूतों का चिट्ठा खोल दिया. बात सच थी, यह दयाराम को पता था, परन्तु उसने सोचा कि किसी तरह सुलह हो जाये.

बहुत सोच-विचार कर उसके तय किया कि इस बारे में विनोद के पिता से बात की जाए. उसकी बेटी की शादी हो गयी है, कम से कम अब तो उसकी ससुराल में फोन करके विनोद उसे परेशान और बदनाम न करे. बस इसी नीयत से वह अपने दामाद के साथ बलराज सिंह के पास गया था. लेकिन इतनी छोटी सी बात पर वह इस क़दर ख़फ़ा हो गये कि उन्होंने लाठी उठा ली, “सालों, हरामजादों, मेरे घर मेरे ही लड़के की बुराई करने आए हो. अपनी लड़की को संभाल कर क्यों नहीं

रखते. मेरा लड़का कोई उसकी ससुराल गया था, जो भागे-भागे यहां चले आए.” और गुस्से में तड़ से उन्होंने लाठी चला दी. दयाराम ही आगे था, पहली लाठी उसे पड़ी. वह वहीं ढेर हो गया. पीछे खड़े उसके दामाद को भी दो लाठियां पड़ गयीं, परन्तु वह जवान लड़का था, दाएं-बाएं झुककर सिर को तो बचा गया, परन्तु चूतड़ पर एक लाठी लग ही गयी.

इस मामले में भी पुलिस को खबर की गयी. परन्तु...अब आप तो जानते हैं, पुलिस कितनी सही काररवाई करती है. बेचारे दयाराम को इलाज़ करवाने के पैसे भी नहीं मिले. सारे गांव में बदनामी हुई, सो अलग. बलराज सिंह बस एक बार थाने गये और मामला ठंडे बस्ते में पहुंच गया.

गांव अब पुराना गांव नहीं रहा था. शहर में भी ऐसी घटनाएं और वारदातें होती हैं, परन्तु इतना आतंक और अत्याचार वहां नहीं है. गांव अब रहने लायक नहीं रह गये हैं, परन्तु केवल मेरे ही गांव के हालात इतने बुरे नहीं हैं. जिस प्रकार आए दिन अख़बारों में ख़बरें छपती रहती हैं, कमोबेश हर गांव-शहर की यहीं हालत है.

इतने सालों बाद मैं गांव में एक दिन के लिए आया था. मेरे मन में बचपन के सुनहरे दिनों की यादें थीं, उनको मैं ताज़ा करना चाहता था. यादें तो ताज़ा न हो सकीं. उसकी जगह दूसरी कटु यादों ने आकर मेरे मन में अपना डेरा डाल दिया था. गांव के निश्छल और निष्पाप चरित्र का हनन हो गया था और उसकी छवि धूमिल करने में गांव की युवा पीढ़ी अपना महत्वपूर्ण योगदान देने में जुटी थी.

दूसरे दिन सुबह ही मित्र से विदा लेकर मैं शहर वापस आ गया. अगली बार जब कभी गांव जाऊंगा तो पता नहीं कौन सी बुरी खबरें सुनने को मिलेगी, कह नहीं सकता.



जिन्दा गोश्त

सं जीव का फोन आया था कि वह दिल्ली आया हुआ है और उससे मिलना चाहता है. मुकेश तब ऑफिस में था और उसने कहा था कि वह ऑफिस ही आ जाये. साथ-साथ चाय पीते हुए गप्पें मारेंगे और पुरानी यादें ताजा करेंगे. संजीव और मुकेश बचपन के दोस्त थे, साथ-साथ पढ़े थे, परन्तु विश्वविद्यालय से निकलने के बाद दोनों के रास्ते अलग हो गये थे. मुकेश ने प्रतियोगी परीक्षाओं के माध्यम से केन्द्र सरकार की नौकरी ज्वाइन कर ली थी. प्रथम पदस्थापना दिल्ली में हुई थी और तब से वह दिल्ली के पथरीले जंगल में एक भटके हुए जानवर की तरह अपने परिवार के साथ जीवनयापन और दो छोटे बच्चों को उचित शिक्षा दिलाने की जद्दोजहद से जूझ रहा था.

संजीव मुकेश से अधिक भाग्यशाली निकला था. उसके पिता मुंबई में रहते थे. शिक्षा पूरी करके वह भी वहीं चला गया था और उनके कारोबार को संभाल लिया था. आज वह करोड़ों से नहीं तो लाखों से अवश्य खेल रहा था. शादी संजीव ने भी कर ली थी, परन्तु उसके जीवन में स्वछंदता थी, उच्छृंखलता थी और अब तो पता चला था कि वह शराब का सेवन भी करने लगा था. इधर-उधर मुंह मारने की आदत पहले से थी. अब तो खुलेआम वह लड़कियों के साथ होटलों में जाता था. कारोबार के सिलसिले में वह अक्सर दिल्ली आया करता था. जब भी आता मुकेश को फोन अवश्य करता था और कभी-कभार मौका निकालकर उससे मिल भी लेता था, परन्तु आज तक दोनों की मुलाकात मुकेश के ऑफिस में ही हुई थी.

मुकेश की जिन्दगी कोल्हू के बैल की तरह थी, बस एक चक्कर में घूमते रहना था, सुबह से शाम तक, दिन से लेकर सप्ताह तक और इसी तरह सप्ताह-दर-सप्ताह महीने और फिर साल निकलते जाते, परन्तु उसके जीवन में कोई विशेष परिवर्तन होता दिखाई नहीं पड़ रहा था. नौकरी के बाद उसके जीवन में बस इतना परिवर्तन

हुआ था कि दिल्ली में पहले अकेला रहता था, शादी के बाद घर में पत्नी आ गई थी और उसके बाद दो बच्चे हो गये थे. परन्तु जीवन जैसे एक ही धुरी पर अटका हुआ था. निम्न मध्यवर्गीय जीवन की वहीं रेलम-पेल, वहीं समस्याएं, वहीं कठिनाइयां और रात-दिन उनसे जूझते रहने की बेचैनी, कश्मकश और निष्प्राण सक्रियता, क्योंकि कहीं न कहीं उसे यह लगता था कि उसके पारिवारिक जीवन में कोई उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं होनेवाला है, अतएव जीवन के प्रति ललक, जोश और उत्तेजना दिनोदिन क्षीण होती जा रही थी.

उधर से संजीव ने कहा था, “अरे यार, इस बार मैं तेरे ऑफिस नहीं आनेवाला हूं. आज 31 दिसम्बर है और तू मेरे यहां आएगा, मेरे होटल में. आज हम दोनों मिलकर नए साल का जश्न मनाएंगे. मेरे साथ मेरे दो दोस्त भी हैं, तुझे मिलाकर चार हो जाएंगे. सारी रात मज़ा करेंगे. बस तू तो इतना बता कि मैं तेरे लिए गाड़ी भेजूं या तू खुद आ जाएगा.”

मुकेश सोच में पड़ गया. सुबह घर से निकलते समय उसके बच्चों ने शाम को जल्दी घर आने के लिए कहा था. वह दोनों शाम को बाहर घूमने जाना चाहते थे. घूम-फिरकर किसी रेस्तरां में उन सबका खाना खाने का प्रोग्राम था. वह जल्दी से कोई जवाब नहीं दे पाया, तो उधर से संजीव ने अधीरता से कहा, “क्या सोच रहा है यार! मैं इतनी दूर से आया हूं और तू होटल आने में घबरा रहा है.”

उसने बहाना बनाया, “यार, आज बच्चों से कुछ कमिटमेंट कर रखा है और तू तो जानता है मैं कुछ खाता-पीता नहीं हूं. तुम लोगों के रंग में भंग हो जाएगा.”

“कुछ नहीं होगा, तू भाभी और बच्चों को फोन कर दे. बता दे कि मैं आया हुआ हूं. और सुन एक बार आ, तू भी क्या याद करेगा. तेरे लिए स्पेशल इंतज़ाम कर रखा है.”

उसकी समझ में नहीं आया कि संजीव ने उसके लिए क्या स्पेशल इंतज़ाम कर रखा है. स्पेशल इंतज़ाम के रहस्य ने उसकी निम्न मध्यवर्गीय मानसिकता की सोच के ऊपर पर्दा डाल दिया और वह ‘स्पेशल इंतज़ाम’ के रहस्य को जानने के लिए बेताब हो उठा. उसने संजीव से कहा कि वह आ रहा था, परन्तु उससे वायदा ले लिया कि उसे दस बजे तक फ़ारिग कर देगा. फिर पूछा, “कहां आना है?”

संजीव ने हंसते हुए कहा, “तू एक बार आ तो सही, फिर देखते हैं. पहाड़गंज में होटल न्यू वीव में आना है. मेन रोड पर ही है.”

मुकेश ने कहा कि वह मैट्रो से आज आ जाएगा और फिर अपनी पत्नी को फोन करके कहा कि घर आने में उसे थोड़ी देर हो जाएगी. वह घर में ही खाना

बनाकर बच्चों को खिला-पिला दे. आते समय वह उनके लिए चाकलेट और मिठाई लेता आएगा. उसकी बात पर पत्नी ने कोई एतराज नहीं किया. वह जानती थी कि उसका पति एक सीधा-सादा इंसान था और बेवजह कभी घर से बाहर नहीं रहता था. उसे अपनी पत्नी और बच्चों की बड़ी परवाह रहती थी.

मुकेश जब होटल पहुंचा तो संजीव उसे लॉबी में ही मिल गया. बड़ी गर्मजोशी से मिला. हाल-चाल पूछे और कमरे की तरफ जाते हुए होटल के मैनेजर से परिचय कराया. मैनेजर बड़ी गर्मजोशी से मिला जैसे मुकेश बहुत बड़ा आदमी था. बैरे भी संजीव को मुस्कराते हुए नमस्कार कर रहे थे. ऐसा लगता था जैसे होटल का सारा स्टाफ संजीव से परिचित था.

कमरे में उसके दो दोस्त बैठे बातें कर रहे थे. संजीव ने उनसे मुकेश का परिचय कराया. वह दोनों दिल्ली के ही रहनेवाले थे. मुकेश से बड़ी खुशदिली से मिले, परन्तु मुकेश शर्म और संकोच के जाल में फंसा हुआ था. होटल के बंद माहौल में वह अपने को सहज नहीं महसूस कर पा रहा था. इस तरह के होटलों में आना उसके लिए बिल्कुल नया था. ऐसा कभी कोई संयोग उसके जीवन में नहीं आया था. कभी-कभार पत्नी और बच्चों के साथ छोटे-मोटे रेस्तराओं में जाकर हल्का-फुल्का खाना-पीना अलग बात थी.

संजीव अपने दोस्तों की तरह मुखातिब होते हुए बोला, “चलो, कुछ इंतज़ाम करो, मेरा बचपन का दोस्त आया है. आज इसकी तमन्नाएं पूरी कर दो. साला, कुएं का मेढक है, कभी संसाररूपी समन्दर नहीं देखा, रंगीन मछलियां नहीं देखीं, इसको पता तो चले कि दुनिया में परिवार के अतिरिक्त भी बहुत कुछ होता है, जिनसे खुशियों के रंग-बिरंगे महल खड़े किए जा सकते हैं.” फिर उसने मुकेश की पीठ में धौल जमाते हुए कहा, “चल यार बता! तेरी क्या-क्या इच्छाएं हैं, तमन्नाएं और कामनाएं हैं; आज सब पूरी करवा देंगे. शराब, कबाब और शबाब, सबकुछ उपलब्ध है यहां. डरने वाली कोई बात नहीं है, यह मेरे मित्र का होटल है और फिर आज तो साल का अंतिम दिन है. कुछ घंटों के बाद नया साल आने वाला है. आज सारे बंधन तोड़कर खुशियों को गले लगा लो.”

संजीव कहता जा रहा था. पहले तो कभी इतना अधिक नहीं बोलता था, मुकेश मन-ही-मन सोच रहा था. पहले वह भी मुकेश की तरह शर्मीला और संकोची हुआ करता था. दोनों एक कस्बेनुमा गांव के रहने वाले थे. उनके संस्कारों में नैतिकता और मर्यादा का अंश अत्यधिक था. मुकेश दिल्ली आकर भी अपने पंख नहीं फैला

सका था. पिंजड़े में कैद पक्षी की तरह परिवार के साथ बंधकर रह गया था; जबकि संजीव ने मुंबई आकर जीवन को खुलकर जीने के सभी दांव-पेंच सीख लिए थे. सच कहा गया है, सम्पन्नता मनुष्य में बहुत सारे गुण-अवगुण भर देती है; परन्तु उसके अवगुण भी दूसरों को सद्गुण लगते हैं. जबकि गरीबी मनुष्य से उसके सद्गुणों को भी छीन लेती है. उसके सद्गुण भी दूसरों को अवगुण की तरह दिखाई पड़ते हैं

संजीव के एक दोस्त अमरजीत ने कहा, “आपके मित्र तो बड़े संकोची लगते हैं. लगता है, कभी घर से बाहर नहीं निकले.” मुकेश वाकई संकोच में डूबा जा रहा था. जिस तरह की बातें संजीव कर रहा था, उस तरह के माहौल से आज तक वह रूबरू नहीं हुआ था. उसके मन के आइने में उसके बच्चों के मायूस चेहरे और पत्नी का चिंताग्रस्त चेहरा एकटक उसे ताकते हुए दिखाई पड़ रहे थे. वह किसी तरह का सुख भोगने के लिए वहां नहीं आया था. वह तो केवल संजीव के जोर देने पर उससे मिलने के लिए आ गया था. सोचा था, कुछ देर बैठेगा, चाय-वाय पियेगा, गप्प-शप्प मारेगा, और फिर घर लौटा आएगा. रास्ते में बच्चों के लिए केक खरीद लेगा, वह भी खुश हो जाएंगे; परंतु यहां तो माहौल ही कुछ और था. दिसम्बर की बेहद सर्द रात में भी मौसम इतना गर्म था कि उसे अपना कोट उतारने की इच्छा हो रही थी. पर मन मारकर रह गया. सभी सोचते कि वह भी मौज़-मस्ती मारने के मूड में है. उसने संजीव के मुंह की तरफ देखा. वह उसे देखकर मुस्करा रहा था, जैसे उसके मन की बात समझ गया था. बोला, “सोच क्या रहा है? उतार दे न! अभी तो कमरा और गर्म होने वाला है.” उसकी मुस्कराहट में गहरा भेद छुपा हुआ था.

संजीव का एक दोस्त मोबाइल पर किसी से बात कर रहा था और दूसरा दोस्त इण्टरकाम पर खाने-पीने का ऑर्डर कर रहा था. संजीव स्वयं मुकेश से बात करने के अतिरिक्त मोबाइल पर बीच-बीच में बातें करता जा रहा था. गोया, उस कमरे में मुकेश को छोड़कर सभी व्यस्त थे...उनकी व्यस्तता में कोई चिंता, परेशानी या उलझन नहीं दिखाई दे रही थी. मुकेश व्यस्त न होते हुए भी व्यस्त था; उसके दिमाग में चिंता, उलझन और परेशानियों का लम्बा जाल फैला हुआ था, जिसमें वह फंसकर रह गया था. उसके जाल में उसकी पत्नी फंसी हुई थी, उसके मासूम बच्चे फंसे हुए थे. उसके बच्चों की आंखों में एक कातर भाव था, जैसे मूक दृष्टि से पूछ रहे हों, ‘पापा, हमने आपसे कोई बहुत कीमती और महंगी चीज़ तो नहीं मांगी थी, बस

एक छोटा-सा केक लाने के लिए ही तो कहा था. वह भी आप लेकर नहीं आए! पापा, आप घर कब तक आएंगे? हम आपका इंतजार कर रहे हैं.’

मुकेश के मन में एक तरह की अजीब-सी बेचैनी और दिल में ऐसी घबराहट छा गई, जैसे वह अपने ही हाथों अपने बच्चों का गला घोट रहा था, उनके अरमानों को चकनाचूर कर रहा था. पत्नी के साथ छल कर रहा था. वह उठकर खड़ा हो गया और संजीव से बोला, “यार, मुझे घर जाना है, आप लोग इंचाय करो. वैसे भी मैं शराब नहीं लेता, आप लोगों का साथ नहीं दे सकता.”

“तो क्या हो गया? जूस तो ले सकता है, चिकन, मटन, फिश तो ले सकता है और फिर अभी जिंदा गर्म गोشت आने वाला है. उससे किसी मर्द को परहेज़ नहीं होता. खूबसूरत, जवान औरत के सामने नैतिकता, मर्यादा और ब्रह्मचर्य के सारे सिद्धांत धूल चाटते नजर आते हैं. तू दो मिनट धैर्य से बैठ न! रूप की बिजली गिरते ही तू दरवाजे का रास्ता भूल जाएगा.”

“क्या दस बजे तक फ्री हो जाऊंगा?” मुकेश ने जैसे हथियार डालते हुए कहा.

“क्या यार! तुम भी बड़े घोंचू हो. बच्चों की तरह घर जाने की रट लगा रखी है. पत्नी और बच्चे तो रोज़ के हैं, परंतु यार-दोस्त कभी कभार मिलते हैं. नए साल का ज़श्न मनाने का मौक़ा फिर पता नहीं कब मिले.” संजीव थोड़ा चिढ़ते हुए बोला. फिर उसने अपने एक दोस्त से कहा, “सुमित! तुम जरा बीना को फोन करके पूछो, कितनी देर में आ रही है?”

“उसी से बात कर रहा था, रास्ते में है. पांच मिनट में पहुंच जाएगी. साथ में दो और भी हैं.”

“ठीक है, तब तक यहां की व्यवस्था ठीक कर लो.”

“वस, यहां भी पांच मिनट में सब-कुछ लग जाएगा.” अमरजीत ने कहा.

थोड़ी देर में चिकन मटन की तमाम सारी तली भुनी सामग्री मेज पर लग गयी. बोटलें खुल गयीं. मुकेश के हाथ में जूस का गिलास था. सभी ने चियर्स किया और कहकहों के साथ सभी के गलों के नीचे शराब के घूंट उतारने लगे. मुकेश सबके टेढ़े होते चेहरों को गौर से देख रहा था. थोड़ी देर मुंह बनाने के बाद सभी के मुंह सीधे हो जाते, फिर अगला घूंट भरते ही मुंह टेढ़ा हो जाता.

मुकेश मन मारकर बैठा था, मज़बूरी थी. अजीब स्थिति में फंस गया था. न आगे जाने का रास्ता उसके सामने था, न पीछे हट सकता था. संजीव उसकी मनःस्थिति नहीं समझ सकता था. अपनी समझ में वह अपने दोस्त को जीवन की

खुशियों से परिचित ही नहीं, उन्हें भोगने का मौक़ा भी प्रदान कर रहा था, परंतु मुकेश की स्थिति गले में फंसी हड्डी की तरह थी, जो उसे बेतरह तकलीफ़ दे रही थी.

संजीव और उसके दोस्त शराब के घूंट गले में उतारने के बाद गोشت को हड्डियों से नोचने में जुट जाते. मुकेश मांसाहारी था, परंतु उस वक़्त उसका मन खिन्न था और कुछ खाने का उसका मन नहीं कर रहा था. जूस का गिलास उसके हाथ में था, परंतु जब भी वह गिलास को होंठों से लगाता, जूस का पीला रंग बिल्कुल लाल हो जाता. खून जैसा लाल और गाढ़ा रंग देखकर उसे उबकाई आने लगती और बड़ी मुश्किल से वह घूंट को गले से नीचे उतार पाता. संजीव और उसके दोस्त बार-बार उसे कुछ-न-कुछ खाने के लिए कहते और वह “हां, खाता हूं” कहकर रह जाता, चिकन-मटन के लजीज व्यंजनों की तरफ़ वह हाथ न बढ़ाता. उसके कानों में सिसकियों की आवाज़ गूंजने लगती, अपने बच्चों के सिसकने की आवाज़...कितने छोटे और मासूम बच्चे थे, अभी सात और पांच वर्ष के ही तो थे. इस उम्र में बच्चे मां-बाप से बहुत ज्यादा लगाव रखते हैं. उनकी उम्मीदें बहुत छोटी होती हैं, परंतु उनके पूरा होने पर मिलने वाली खुशी उनके लिए हज़ार नियामतों से बढ़कर होती है.

शराब का पहला दौर जल्दी खत्म हो गया. दूसरा दौर चलने ही जा रहा था कि तभी तथाकथित बीना अपने पीछे-पीछे दो लड़कियों को लेकर कमरे में आ धमकी. बीना के लिए जैसे वहां कुछ नया नहीं था. वह बेतकलुफी से संजीव के गले लग गई और उसके गाल पर तड़ातड़ दो-तीन चुंबन जड़ दिए. फिर उसने हंसते हुए संजीव के बाकी दोनों दोस्तों से हाथ मिलाया, फिर प्रश्नात्मक दृष्टि से मुकेश की तरफ़ देखने लगी. संजीव ने कहा, “मेरा यार है, बचपन का, थोड़ा संकोची है, आज इसका संकोच दूर कर दो.” बीना ने अपना हाथ मुकेश की तरफ़ बढ़ाया. उसने भी हौले से बीना की हथेली को अपनी दाईं हथेली से पकड़ा. बीना का हाथ बेहद ठंडा था. वह बाहर से आ रही थी और बाहर बहुत सर्दी थी. उसका हाथ ठंडा ही होना था, परन्तु मुकेश को लगा जैसे वह किसी मरे हुए सांप के लिजलिजे बदन को छू रहा था. उसके शरीर के अंदर एक ठंडी सिहरन दौड़ गई. उसने बीना की आंखों में देखा, वह मुस्कुरा रही थी. उसका चेहरा ही नहीं आंखें भी बेहद खूबसूरत थीं. चेहरे पर कोई मेकअप नहीं था, होंठों पर लिपस्टिक नहीं थी, क्योंकि वह प्राकृतिक तौर पर सुंदर थी. उसका बदन सुडौल था और लंबाई पांच फीट तीन-चार इंच के लगभग थी. जींस के ऊपर फुल स्वेटर डाल रखा था, अंदर पता नहीं क्या था?

अन्य दो लड़कियां दुबली-पतली थीं, परंतु उनके सीने के उभार अनुपात से कहीं अधिक थे और कपड़े फाड़कर बाहर कूदने के लिए बेताब दिख रहे थे. दोनों लड़कियां कद में एक-दूसरे से थोड़ी कम ज्यादा थीं और उन्होंने अपने चेहरों को सफेदी से पोत रखा था, तो होंठों पर गहरी सुर्ख लिपस्टिक की पर्त चढ़ा रखी थी. ऐसी लड़कियां पहली नज़र में किसी भलेमानस को पसंद नहीं आ सकती थी. लंपट आदमी भले ही कुछ देर बाद उनको अपने बदन से लपेटकर कुछ गर्मी का अहसास ले ले.

संजीव को भी वह दोनों लड़कियां पसंद नहीं आई थी, तभी तो उसने बीना से कहा था, “यह क्या अपने साथ रास्ते का कूड़ा उठाकर ले आई हो? तुम तो मेरी पसंद जानती हो, फिर...?”

बीना बीच में ही बोल पड़ी, “मेरे राजा, नाराज मत हो. मैंने बड़ी कोशिश की, परंतु नए वर्ष के कारण हर आइटम बुक है, कहीं बात नहीं बनी.”

“तो क्या मेरे लिए यही बची थी. इन्हें तिड़ी करो और दूसरी के लिए कोशिश करो. पूरी रात बाकी है; वरना तुम्हारा बाजा ठीक से बजेगा.” उसका मुंह टेढ़ा हो गया था.

वह अंगड़ाई लेकर बड़ी अदा से जुल्फों को झटकती हुई बोली, “कोई बात नहीं राजा, बस सिगरेट और शराब का इंतजाम पूरा रखना, फिर देखो तुम्हारी बिन्नी क्या कमाल दिखाती है.” उसने निःसंकोच टेबल पर पड़ी सिगरेट की डिब्बी उठाकर एक सिगरेट निकाली और उंगलियों के बीच फंसाकर होंठों से लगा ली. “सुलगाओ इसे.” उसने कहा और अमरजीत ने झट से माचिस की तीली जलाकर उसकी सिगरेट सुलगा दी. बीना ने एक लंबा कश लेकर होंठों को गोल करके सारा धुआं छत की तरफ बाहर उगल दिया. बंद कमरे में सिगरेट के धुएं की बदबू फैल गयी. इसके पहले उस कमरे में अभी तक किसी ने सिगरेट नहीं पी थी, बस कमरे में केवल शराब और मांसाहारी व्यंजनों की खुशबू तैर रही थी. सिगरेट के धुएं की बदबू ने पहले की महक को पूरी तरह से दबा दिया.

मुकेश सिगरेट नहीं पीता था, शराब नहीं पीता था. वह और भी बहुत कुछ नहीं करता था. मध्यमवर्गीय संस्कार आम आदमी को जीवन की बहुत सारी उन खुशियों से वंचित रखते हैं, जिन्हें हम बुरी लतें कहते हैं. साधन और सुविधा संपन्न व्यक्तियों के लिए यहीं लतें विलासिता के अंतर्गत आती हैं और वे लोग खुले तौर पर इनमें डूबे रहते हैं. मध्यमवर्गीय व्यक्ति खासकर निम्न मध्यवर्गीय व्यक्ति अपने

मन में तमाम नैतिक, अनैतिक, मर्यादित-अमर्यादित लालसाएं, कामनाएं और इच्छाएं पालता रहता है. समाज के बंधन और साधनविहीनता उसे इन कामनाओं को पूरा करने से रोकती रहती है. धीरे-धीरे उसकी इच्छाएं कुंठित होती जाती हैं, परंतु मरती कभी नहीं हैं और अवसर मिलने पर अधमरे सांप की तरह मुंह उठा देती हैं या बरसाती मेंढक की तरह टर्-टर् करने लगती है.

बीना की खूबसूरती और गठे-सुडौल बदन को देखकर मुकेश के मन में संस्कारों ने अविवेक की चादर ओढ़ ली और दबी-कुचली वासनात्मक भावनाओं, जिन्हें अपने संकोची और शर्मिले स्वभाव के कारण कभी पूरा करने का अवसर प्राप्त नहीं हुआ था, ने अचानक नाग की तरह फन उठा लिया. उसके दिल में मीठी धुक-धुकी पैदा हो चुकी थी, और उस सौंदर्य की प्रतिमा को देखकर उसकी नज़रों के सामने से उसकी पत्नी और दोनों मासूम बच्चों के क़ातर चेहरे अचानक गायब हो गए थे. उसके मन में जिस तरह की भावनाएं जन्म ले रही थीं और कामनाएं मचल रहीं थी, उस स्थिति में व्यक्ति अपने घर-परिवार, समाज और अपने नैतिक मूल्यों तथा मर्यादित सीमा-रेखा को भूल जाता है. मुकेश के मन में तरह-तरह के विचार आ रहे थे और वह अपने में इस क़दर खो गया था कि कमरे में मौजूद अन्य व्यक्तियों के वजूद को भूल बैठा था. उसके मन-मस्तिष्क में बीना आकर बैठ गई थी, परंतु उसके मुंह से निकलता हुआ बदबूदार धुआं उसे बेतरह परेशान कर रहा था.

मुकेश का मन बीना के साथ कुछ पल बिताने के लिए बेताब हो रहा था, परंतु उसकी शर्म और संकोच उसकी कामनाओं के ऊपर हावी थी. वह चोर नज़रों से बीना की तरफ देखता और फिर इधर-उधर देखने लगता.

संजीव ने दूसरे पेग को समाप्त करते हुए कहा, “मुकेश! तुमको इन दोनों में से कोई पसंद है?” उसका इशारा बीना के अलावा बाकी दोनों लड़कियों की तरफ था. उसके मन में उनके प्रति पहले ही जुगप्सा जागृत हो उठी थी. उसने भावहीन चेहरे से संजीव की तरफ देखा, वह समझ गया, “बीना, तुम इन दोनों को दफा करो. रात नहीं ख़राब करनी है. अगर कोई और अच्छी हो तो बुला लो, वरना तुम तो हो ही.”

बीना खिलखिलाकर हंस पड़ी, “क्या बात करते हो यार! हमलोगों में अच्छी लड़की कहां मिलती है. तुम्हीं लोग हमें खराब करते हो, फिर हममें से अच्छी लड़की भी ढूंढते हो.”

“अरे भई, अच्छी से मतलब कोई ठीक-ठाक लड़की, जो देखने में अच्छी लगे. बिना खाना खाए जिसको देखकर उल्टी होने लगे, वह भी कोई लड़की है. सुमित, जाओ तुम इन दोनों को बाहर छोड़कर आओ. ऑटो करा देना और पांच सौ रुपये खर्च के दे देना.”

सुमित लड़कियों को लेकर बाहर चला गया. बीना पलंग पर अधलेटी होकर किसी को फोन करने लगी तो अमरजीत उसके बाजूओं के बीच से उसका एक स्तन स्वेटर के ऊपर से ही पकड़कर दबाने लगा. बीना हंस पड़ी, “थोड़ा धीरज रखो मेरे राजा! क्यों बिना भाप के उबलने लगे. अभी तो पूरी रात बाकी है. मुझे एक और सिगरेट दो.” अमरजीत ने इस बार खुद सिगरेट सुलगाकर उसके होंठों से लगा दी. बीना कश लेते हुए फोन पर किसी से बात किए जा रही थी. उसकी बातों से लग रहा था कि लड़की भेजने के लिए कह रही थी. कई जगह उसने बात की, परंतु हर जगह से उसे नकारात्मक जवाब मिला. वह फोन बंद करके मुंह बनाते हुए बोली- “कहीं बात नहीं बन पा रही है. सभी आज रात भर के लिए बुक हैं.”

संजीव ने बुरा-सा मुंहाकर बीना को देखा. फिर कुछ सोचने लगा. मुकेश अपनी भावनाओं को छिपाते हुए बोला, “संजीव, अगर बुरा न मानो तो मुझे जाने दो. तुम लोग इंचाय करो. मैं कल तुमसे मिलूंगा.” वह उठने का उपक्रम करने लगा. हांलाकि यह एक दिखावा था, अन्दर से उसका मन रुकने के लिए कर रहा था, परन्तु मध्यवर्गीय व्यक्ति मान-मर्यादा का आवरण ओढ़कर मौजूद-मस्ती करना पसंद करता है. बदनामी का भय उसे सबसे अधिक सताता है, इसीलिए वह जीवन की बहुत सारी खुशियों से वंचित रहता है.

संजीव ने उसकी बांह पकड़कर फिर से कुर्सी पर बिठा दिया, “बकवास मत करो! अमरजीत, चलो हम लोग दूसरे कमरे में चलते हैं. सुमित को वहीं बुला लो और बीना, तुम मेरे दोस्त के साथ रुककर उसका मन बहलाओ.”

संजीव की बात सुनकर मुकेश का हृदय-धाड़-धाड़ करता हुआ बजने लगा, जैसे किसी कमजोर पुल के ऊपर से रेलगाड़ी तेज गति से गुजर रही हो. वह समझ नहीं पाया कि यह खुशी के आवेग की धड़कन है या अनजाने, आशंकित घटनाक्रम की वजह से उसका हृदय तीव्रता के साथ धड़क रहा है?

“हां! चलो!” अमरजीत ने ताम-झाम समेटते हुए कहा. इण्टरकाम उसने वेटर को बुलाया कि सारा सामान बगल के कमरे में पहुंचा दे और फिर सुमित को फोन करके कहा कि लड़कियों को छोड़कर रूम नं. 102 में आ जाए.

बीना बोली, “पहले एक-दो पेग तो लेने दो. यूं ही दौड़ाना चाहते हो क्या, भूखे पेट!” उसने मचलते हुए अंगड़ाई ली और मुकेश की तरफ देखकर आंखें मार दी. वह झेंपकर रह गया. लड़कियां बार-बार अंगड़ाई क्यों लेती हैं, उसकी समझ में न आया. जीवन के प्रारंभ में जब वह लड़के-लड़कियों के बीच भेद करना सीख गया था और पता चल गया था कि दोनों एक दूसरे की तरफ क्यों आकर्षित होते हैं, तब उसने कई लड़कियों को मन-ही-मन प्यार किया था, एकतरफा प्यार! हो सकता है किसी लड़की ने उसे भी प्यार किया हो, परंतु वह अपने मन की किताब कभी किसी लड़की के सामने नहीं खोल पाया, न किसी लड़की ने उसे ऐसा संकेत दिया था कि वह उसे प्यार करती थी; वरना एक लड़की या औरत के प्रति उसके मन में उसको प्राप्त करने की चाहतें यूं ही दबी हुई न पड़ी रहतीं. जवानी की कुंठित इच्छाओं को वह अवसर की धार पर तेज करना चाहता था. आज तक अपनी पत्नी के अतिरिक्त उसने किसी औरत को नहीं भोगा था, इसीलिए कहते हैं कि मनुष्य जीवन में सारे पापों से बच सकता है, परंतु औरत के सौंदर्य और आकर्षण से वह कभी नहीं बच सकता? मुकेश के साथ यही हो रहा था. दोस्तों के बीच बैठकर उसे शराब और सिगरेट की तलब नहीं लगी, परंतु औरत को देखकर उसके मन की भावनाएं मचलने लगीं, लालसाएं मुंह उठाकर बाहर आने लगीं और कामनाओं ने पंख उठाकर उड़ान भरनी शुरू कर दी.

औरत के सौंदर्य से कौन बच पाया है आज तक?

संजीव बाहर निकलते हुए बोला, “बगल वाले कमरे में आ जाओ, जल्दी से एक-दो पेग, जो भी लेने हैं, ले लो. देर मत करो. मुकेश को घर जाना है.”

वह तीनों बगल वाले कमरे में चले गये. मुकेश कमरे में अकेला रह गया, विचारों से गुत्थम-गुत्था. पल भर के लिए उसे अपनी पत्नी का सौम्य, सुंदर चेहरा नज़र आया, उसका सरल-सहज स्वभाव याद आया और पति के लिए चिंतातुर प्रतीक्षारत आंखें...बच्चे कुछ पाने की आकांक्षा मन में लिए अभी तक जग रहे होंगे. यह सब याद आते ही उसका दिल बैठने लगा-क्या करने जा रहा है वह? क्या यह उचित है? वह एक पारिवारिक व्यक्ति है, दो बच्चों का पिता? क्या उसके संस्कार, सामाजिक मान्यताएं और जीवन की मर्यादा उसे इस बात की अनुमति देती है कि घर में सुंदर पत्नी को छोड़कर होटल में किसी परायी स्त्री, परायी स्त्री नहीं...एक वेश्या के साथ भोग-विलास करे? परंतु इसमें अनुचित भी क्या है? पर स्त्री-पुरुष संबंध, वेश्यागमन भी तो इसी समाज की कड़वी वास्तविकताएं हैं? उसने अपने

दिमाग से विचारों को झटककर अलग करना चाहा, परंतु पूरी तरह से मुक्त नहीं हो पाया। उसने अपने दिमाग को बीना के सुंदर चेहरे, पुष्ट अंगों और गदराए बदन पर केन्द्रित करना चाहा, परंतु बीच-बीच में उसकी पत्नी का सौम्य चेहरा बीना के चंचल चेहरे के ऊपर आकर बैठ जाता। उसके मन को बेचैनी घेरने लगती, परंतु यह बेचैनी अधिक देर तक नहीं रही। जल्दी ही बीना अपने मुंह से सिगरेट का धुआं उगलती हुई आ गयी। उसका हंसता-मुस्कराता चेहरा देखकर मुकेश अपना घर-परिवार, संस्कार और नैतिकता भूल गया और उसकी लालसाओं की रेलगाड़ी कल्पना से भी तेज़ दौड़ने लगी।

सर्दी के कारण कमरा पूरी तरह से बंद था, हवा में शराब और सिगरेट के धुएं की गंध फैली हुई थी और यह गंध आसानी से बाहर निकलने वाली नहीं थी। कमरे में एक पुरुष और एक स्त्री के होने के बावजूद उनकी कोई खुशबू वहां एक-दूसरे को महसूस नहीं हो रही थी। मुकेश चाहता था, वह बीना के शरीर की ढेर सारी खुशबू अपने नथुनों में भर लें; ताकि फिर जीवन में किसी दूसरी स्त्री के बदन के खुशबू की उसे ज़रूरत न पड़े; परंतु वहां खुशबू थी कहां? कमरे में केवल धुआं था, शराब की गंध थी और एक अजीब-सी घुटन थी। उस घुटन में मुकेश तेज-तेज सांसें लेता हुआ अपने फेफड़ों को फुला रहा था और एकटक बीना के शरीर को ताक रहा था, जैसे बाज़ गौरैया को ताकता है; परंतु यहां बाज़ कौन था और गौरैया कौन, यह न मुकेश को पता था, न बीना को। बीना तंदुरस्त लड़की थी और उसके हाव-भाव से लग रहा था कि वह किसी पुरुष से जल्दी परास्त होने वाली नहीं थी।

कमरे के अंदर आते ही बीना ने पीछे से दरवाजे की सिटकनी लगा दी और फिर से एक कातिल अंगड़ाई ली। लगा कि उसके उरोज स्वेटर फाड़कर मुकेश के चेहरे के ऊपर गिर पड़ेंगे। बीना ने सिगरेट का एक लंबा कश लिया और मुकेश की सांसें बंद होने लगीं।

“यह क्या यार! आप तो अभी तक पूरे कपड़ों में हों, ऐसे कैसे स्वीमिंग पूल में उतरोगे? दो मिनट में ही डूब जाओगे। चलो उतारो कपड़े या मैं उतारूं?” उसने हाथ पकड़कर मुकेश को खड़ा किया और उसका कोट उतारकर अलमारी में टांग दिया, फिर उसने अपना स्वेटर उतारकर पलंग की परली तरफ फेंक दिया। अंदर वह टॉप पहने थी। स्वेटर उतारते ही उसकी गोरी-गोरी सुडौल बांहें और सीने की गोलाइयों के बीच की दिलकश गहराई झलकने लगी। उसकी गर्दन भी बहुत सुंदर थी।

मुकेश देखता रह गया, इतनी सुंदर तो उसकी पत्नी भी नहीं थी। बीना जैसी सुंदर लड़की को पहली बार अपने जीवन में इतना करीब से देख रहा था। ऐसी लड़कियों से कैसे पेश आया जाता है, उसे पता नहीं था। उसने हाथ घड़ी पर नज़र डाली, नौ बजने वाले थे। दस बजे तक उसे निकल जाना है, हर हालत में। आज नए साल के ज़ंशन की खुशी में दुकानें खुली होंगी। यहां से निकलने के बाद गोल मार्केट से वह मिठाई और केक ले लेगा। परिवार और बच्चों के प्रति मध्यवर्गीय सोच सिर उठाकर उसे घूरने लगी थी। उसे फिर से अपने बच्चे याद आने लगे थे।

“क्या खूटे की तरह गड़े बैठे हो? कुछ करोगे नहीं? जल्दी करो। आज सारी रात ज़ंशन मनेगा। एक ही काम में सारी रात नहीं बर्बाद करनी है।” उसने मुकेश के सामने खड़े होकर अपने बाल संवारते हुए कुछ तल्खी से कहा। मुकेश को बीना की तल्खी अच्छी नहीं लगी, परन्तु उसने उसकी बात का जवाब नहीं दिया। लड़कियों के मामले में वह बहुत दबू था। यहां तो बीना उसे डलिया में सजाकर मिल रही थी। उसकी हर उचित-अनुचित बात माननी होगी, अगर उसे कुछ करना है।

वह पलंग पर बैठा था और बीना की सुडौल जांघें उसकी जांघों के बीच में थीं। उसका मन कर रहा था कि बीना को पीछे से समेटकर अपने सीने में समेट ले, परंतु बीना की बात सुनकर उसका दिल बैठ गया था और उसे लग रहा था कि उसकी इच्छाओं पर बर्फ पड़ गयी थी। वह मौसम की ठंडी हवाओं से भी ज़्यादा ठंडा हो गया था। बीना जैसी सुंदर और गर्म लड़की भी उसके अंतस को गर्म नहीं कर पा रही थी।

वह चुप बैठा रहा तो बीना ने बेताब होकर अपने हाथों से उसके सिर को पकड़ा और अपने गुलाबी सुंदर होंठों को उसके होंठों पर टिकाते हुए उसे पलंग पर गिरा दिया और खुद अपने नरम गुदगुदे शरीर को मुकेश के शरीर के साथ आराम से लिटा दिया। मुकेश अभी तक पूरे कपड़ों में था, फिर भी उसे लगा बीना के कठोर उरोज उसके सीने में घुसने का प्रयास कर रहे हैं। बेखयाली में उसने भी बीना के सिर को पीछे से पकड़ लिया और पूरे जोश से उसके नरम-नरम होंठों को अपने मुंह में भर लिया। परंतु यह क्या...? उसके जो होंठ बाहर से भरे-भरे, रसीले और गुलाबी लगते थे, वह बेहद ठंडे थे, बेस्वाद, जैसे चूसी हुई चुइंगम, जो ज़्यादा चूसने के बाद कड़वी लगने लगती है। उसी प्रकार बीना के होंठ ठंडे, बेस्वाद और शराब सिगरेट पीने से कड़वेपन का स्वाद दे रहे थे। उसे उबकाई सी आने लगी। उसने महसूस किया, बीना के होंठों का टंडापन उसके शरीर के अंदर प्रवेश कर रहा था। अपने अंदर उसने फिर एक ठंडी सिहरन महसूस की। वह ढीला पड़ गया।

बीना उसकी जांघों पर तनकर बैठ गयी, “क्या बात है, मेरे विनोद खन्ना! शरीर में ताकत नहीं बची क्या? बड़े थके-थके से लग रहे हो, कोई जोश और उत्साह नहीं. मैंने बड़े से बड़े बर्फीले आदमियों को अपने शरीर की गर्मी से पिघलाया है, अब देखो मेरा कमाल!” और बीना ने अपना टाप उतार दिया, अंदर उसने ब्रेसरी नहीं पहन रखी थी. इसके बावजूद उसके स्तन गोल और सुडौल और तने हुए थे, जैसे मुकेश के पौरुष को चुनौती दे रहे हों.

बीना तिरछी होकर पलंग पर लेट गयी. अब वह ऊपर से पूरी तरह नंगी थी, उसने खींचकर मुकेश को अपने ऊपर कर लिया. वह एक गुड्डे के समान बीना के सीने पर लेट गया. उसके शरीर में कोई उत्तेजना नहीं हो रही थी.

“आओ, अब खेलो. यहां अपनी मर्दानगी दिखाओ. एक मिनट में ही पिघलता हुआ शीशा बन जाओगे.” बीना के उकसाने से वह उसके सीने की कठोर गोलाइयों का मर्दन करने लगा. बीना उत्तेजित होकर विचित्र-सी आवाजें निकालने लगी, परंतु उसका मर्दन करने के बाद भी मुकेश के शरीर में उत्तेजना की कोई चिंगारी नहीं दौड़ रही थी. वह अपनी पूरी ताकत झोंके दे रहा था, परंतु कहीं कुछ होता महसूस नहीं हो रहा था उसे. वह हांफने लगा था. कोयले के इंजन की तरह उसका शरीर हांफते हुए धुआं अधिक फेंक रहा था, परन्तु गति नहीं पकड़ पा रहा था.

दूसरी तरफ बीना इस कदर उत्तेजित हो गयी थी, कि उसने अपने ही हाथों नीचे के कपड़े उतार दिए थे. अब वह आदमजात नंगी थी, परंतु मुकेश के शरीर में उत्तेजना का लेशमात्र भी नहीं हुआ था. वह निढाल हो चुका था. फिर वह अचानक ही उठ खड़ा हुआ, जैसे उसके शरीर में कोई करंट लगा हो. वह सन् सा खड़ा था कि पगलाई बीना ने उसके पैंट के ऊपर हाथ रखकर जोर से दबा दिया. फिर अचानक बोली, “यह क्या? तुम्हें तो कुछ हुआ ही नहीं, वैसे के वैसे टंडे पड़े हो. बर्फ की सिल्ली की तरह...” उसकी आंखों में वासना की लहरें हिलोरें मार रही थी, परंतु मुकेश ने उसकी तरफ दुबारा नहीं देखा. लपककर उसने अलमारी से कोट निकालकर पहना, फिर जूते पहनने लगा. जूते पहनते-पहनते उसने एक पल के लिए नज़र उठाकर बीना को देखा. वह अभी तक विस्तर पर चित्त नंगी लेटी हुई थी, बिल्कुल उसी तरह जैसे किसी बकरी की खाल उतारकर उसे ज़मीन पर लिटा दिया गया हो.

बिना कुछ बोले वह बाहर आ गया. संजीव से भी मिलने की उसने आवश्यकता नहीं समझी. गैलरी में आकर उसने इधर-उधर देखा. इक्का-दुक्का वेटर कमरों में

आ-जा रहे थे. बाहर का वातावरण शांत था और हवा में हल्की-हल्की सर्दी का अहसास था. वह होटल के बाहर आ गया.

होटल के बाहर आकर उसे चहल-पहल का अहसास हुआ. उसने समय देखा- दस बजने में कुछ ही मिनट शेष थे. गोल मार्केट की दुकानें खुली होंगी.

साढ़े दस बजे के लगभग जब हाथ में केक और मिठाई का डिब्बा लेकर वह घर पहुंचा, तो उसके मन में अपराध बोध था. आत्मग्लानि के गहरे समुद्र में वह डुबकी लगा रहा था. पत्नी ने जब दरवाजा खोला तो वह उससे नज़रें चुरा रहा था. पत्नी को सामान पकड़ा कर वह अंदर आया, तो दोनों बच्चे उसे जगते हुए मिले. वह टीवी में नए साल के उपलक्ष में मनाए जाने वाले कार्यक्रम को देख रहे थे. उसे देखकर एकदम से चिल्लाए, “पापा आ गए, पापा आ गए. क्या लाए पापा हमारे लिए?”

उसने मम्मी की तरफ इशारा कर दिया. बच्चे मम्मी की तरफ देखने लगे तो उसने लपककर बारी-बारी से दोनों बच्चों को चूम लिया. तब तक उसकी पत्नी ने सामान लाकर मेज पर रख दिया, “वाउ, मिठाई और केक...अब मज़ा आएगा.” दोनों बच्चे खुश होकर चहकने-नाचने लगे. उसने संतुष्टि के भाव से दोनों बच्चों को देखा और फिर पत्नी को. वह उसके लिए पानी लेने के लिए किचन की तरफ जा रही थी.

मुकेश के मन में एक बहुत बड़ी शंका घर कर गई थी. और वह शंका धीरे-धीरे बढ़ती जा रही थी. उसे तत्काल दूर करना आवश्यक था. वह इंतज़ार नहीं कर सकता था. दोनों बच्चों को नाचता-गाता छोड़कर वह पत्नी के पीछे-पीछे किचन में आ गया. पत्नी से उसे ऐसे आते देखकर कहा-“आप जूते कपड़े उतारकर फ्रेश हो लीजिए. मैं पानी लेकर आती हूं.”

“वह बाद में कर लेंगे.” कहकर उसने पत्नी को पीछे से लपेटकर अपनी बांहों में भर लिया. पत्नी के चिकने पेट को खींचकर पीठ की तरफ से अपने सीने से लगा लिया और उसके गले में गर्म सांसों को छोड़ता हुआ एक प्रगाढ़ चुंबन ले लिया. फिर उसके हाथ धीरे-धीरे पत्नी के सीने की तरफ बढ़े. पत्नी शरमाती-सकुचाती हुई उसके बदन से और ज्यादा चिपक गयी. वह पत्नी के ढीले स्तनों को धीरे-धीरे मसलने लगा. पत्नी के हाथ से गिलास छूट गया. फुसफुसाकर बोली, “यह क्या कर रहे हैं आप? ऐसा तो पहले कभी नहीं किया, बिना जूते-कपड़े उतारे और वो भी किचन में...”

“पहले कभी नहीं किया, इसीलिए तो कर रहा हूं.” उसने पूरी ताकत के साथ पत्नी के शरीर को भींच लिया. उसके शरीर में जैसे बिजली प्रवाहित होने लगी थी.

पत्नी के शरीर में ऐसी कौन-सी तरंग थी, जो बीना के शरीर में नहीं थी; जबकि वह उसकी पत्नी की तुलना में जवान और कसे बदन की थी.

“बच्चे देख लेंगे?” पत्नी फिर फुसफुसाई.

“देख लेने दो!” अब तक वह पूरी तरह उत्तेजित हो चुका था, जब उसका अंग पत्नी को पीछे से गड़ता महसूस हुआ तो वह छिटककर दूर हो गयी और शर्मति हुए बोली, “क्या यहीं. चलो बाहर...रात कहीं भागी नहीं जा रही है.”

मुकेश के मन में हजार रंगों के फूल खिलकर मुस्कराने लगे. उसका अपराधबोध खत्म हो चुका था. अब उसके मन में कोई शंका नहीं थी, परंतु मुकेश को एक बात समझ में नहीं आ रही थी. कहते हैं कि आदमी को परायी औरत और पराया धन बहुत आकर्षित करता है. इन दोनों को प्राप्त करने के लिए वह कुछ भी कर सकता है. मुकेश की परायी नार, वह भी इतना सुंदर, बिना किसी प्रयत्न के सहजता से उपलब्ध हुई थी; फिर वह उसे क्यों नहीं भोग पाया? यह रहस्य कोई मनोवैज्ञानिक ही सुलझा सकता था. मुकेश के लिए यह रहस्य एक बड़ा आश्चर्य था.

उस रात उसकी पत्नी को भी एक बड़े आश्चर्य से गुजरना पड़ा था. वह यह नहीं समझ पाई थी कि शादी के दस वर्ष बाद उसके पति में इतना जोश, उत्तेजना और पौरुष कहां से आ गया था कि पूरी रात उसे सोने नहीं दिया.



कब्र के बाहर

रामपती को कब्र में सोते हुए कई बरस हो गए थे. एक दिन उसकी अचानक नींद खुल गयी. उसे बड़ी हैरानी हुई, जब उसने अपने चारों तरफ घना अंधेरा देखा. कहीं प्रकाश की कोई किरण नहीं, वह खुद जैसे कहीं दबी पड़ी थी. कुछ देर तक वह अपनी ज्ञानेन्द्रियों को इकट्ठा करती रही; ताकि उसकी समझ में यह आ सके कि वह कहां हैं और उसके चारों तरफ इतना घना अंधेरा क्यों छाया हुआ है. कुछ पल सोचने के बाद उसकी समझ में आ गया कि वह अपनी कब्र के अंदर दफन है...

उसे याद नहीं कि उसे कब्र में दफन हुए कितने साल हो चुके हैं. उसके परिवार की परम्परा के अनुसार उसका दाह-संस्कार नहीं हुआ था, बल्कि दफनाया गया था. मृत्यु के बाद से वह लगातार सोती रही थी. आज अचानक उसकी नींद खुल गयी थी. जब उसकी ज्ञानेन्द्रियों ने उसके पिछले जीवन से उसे अवगत कराया, तो उसने कब्र से उठने का प्रयास किया. जब तक वह लेटी थी, उसे लग रहा था, जैसे मनो मिट्टी उसके शरीर के ऊपर पड़ी थी, परन्तु जैसे ही वह उठी, उसे लगा कि वह हवा की तरह हल्की है. उसे बड़ी हैरत हुई, जब उसे महसूस हुआ कि वह सचमुच हवा में उड़ सकती थी.

कब्र से बाहर निकलकर वह कहां जाए, उसने सोचा. अरे, उसका पति भी तो बगल में ही लेटा हुआ है. उसको अपने पति की कब्र के पास ही तो दफनाया गया था. उसकी मृत्यु से दस साल पहले...तब से अभी तक सोया हुआ है? क्या उसे नहीं पता कि उसकी पत्नी भी उसके बगल में लेटी है? पता भी होगा, तो उसने मिलने की नहीं सोची होगी. ऐसा ही है, अपने पूरे जीवन में काहिलों का बादशाह बना हुआ था. जवानी में थोड़ा-बहुत काम कर लिया तो बहुत था, वरना खटिया तोड़ने में उसका कोई सानी नहीं था. वो तो घर में जेठ न होते तो परिवार बरबाद

हो गया होता. उन्होंने ही सब कुछ संभाला हुआ था, परन्तु घर चलाने और संभालने का फ़ायदा भी तो उठाया. सारी अच्छी खेती अपने नाम करवा ली थी, और ऊबड़-खाबड़ बंजर ज़मीन छोटे भाई के नाम पर लिखवा दी. बंटवारा हुआ तो पता चला, परन्तु यह मेरा पति भी एक नंबर का काहिल और जाहिल कि कोई आवाज़ नहीं उठाई और जो मिल गया, उसे लेकर चुपचाप अलग हो गया.

अभी भी देखो, न जाने कब से कब्र में सोया पड़ा है. पति के मरने के दस साल बाद उसकी मृत्यु हुई थी. रामपती को याद नहीं कि उसे मरे कितने साल हो गए. कोई मिले तो पूछे, परन्तु इस कब्र में कौन उसे बताएगा कि उसे मरे कितने साल हो गए. पति को भी क्या याद होगा? उसे तो घर की कोई बात, कोई काम याद नहीं रहता था. अपनी सारी जवानी उसने धूम-धामकर काटी तो बुढ़ापा खटिया में पड़े-पड़े...था तो बहुत शांत स्वभाव का, लड़ाई-झगड़े से दूर रहने वाला, परन्तु पता नहीं क्यों उसे वीर रस के गानों और कहानियों में बड़ा मज़ा आता था. थोड़ा पढ़ना-लिखना जानता था, सो घर में आल्हा और महाभारत की किताबें रखी हुई थीं. भला घर में महाभारत की किताब कौन रखता है, परन्तु नहीं, उसने रखी ही नहीं थी, उन्हें बड़े चाव से पढ़ता भी था. कोई आ गया तो उससे पढ़वाता रहता था. इसी में उसने पूरा बुढ़ापा काट दिया. बेटा बड़ा हो गया था. वह इंटर करके नौकरी की तलाश कर रहा था. नौकरी नहीं मिली थी, तो खेती-बाड़ी का काम वही देखता था.

पति के बारे में सोच-सोचकर रामपती को गुस्सा आ रहा था. ऐसा नीरस आदमी है कि अपने सिवा किसी और के बारे में नहीं सोचता. बगल की कब्र में सालों से लेटा हुआ है और पत्नी की ख़बर नहीं ली. क्या पता, उसे मालूम ही न हो कि उसकी पत्नी बगल में लेटी है. पता क्यों नहीं होगा? मरे हुए आदमी को सबकुछ पता होता है. जिन्दा आदमी ही एक दूसरे के बारे में नहीं सोचता, किसी के लिए कुछ नहीं करता. बस रिश्ते-नातों के फेर में पड़ा रहता है. उनमें भी कुछ रिश्ते बहुत कड़वे हो जाते हैं कि पता ही नहीं चलता कि इनमें कभी आत्मीयता, प्यार और मधुरता भी रही होगी.

खुद ही चलकर देखती है, क्या कर रहा है उसका पति? उसने अंगड़ाई लेकर अपने बदन की जकड़न दूर की. मिट्टी झाड़ी और कब्र से बाहर निकलकर आंखें मिलमिलाकर अपने चारों तरफ़ देखा. उसे पता नहीं था, यह कौन सा साल और महीना चल रहा था, परन्तु जाड़े के दिन थे, क्योंकि चारों तरफ़ गेहूं और सरसों

के खेत लहलहा रहे थे. अपने खेत देखकर उसे बड़ा सुकून प्राप्त हुआ. बड़ी अच्छी फसल उगी थी. बाहर की दुनिया में कुछ-भी नहीं बदला था. वहीं खेत थे, वहीं पेड़ और वहीं रास्ते. हां खेतों के बीच के चकरोड में खड़ंगा लग गया था. पहले उस पर साइकिलें और बैलगाड़ियां चलती थीं, आजकल मोटर साइकिलें फरारि से दौड़ रही थीं.

अपनी पिछली दुनिया में आकर उसे बहुत अच्छा लग रहा था. उसके हृदय में अजीब-सा स्पन्दन हो रहा था और मन में खुशियों के झूले डोलने लगे थे. परन्तु यह खुशी उसके किस काम की? उसका पति तो सोया पड़ा है. उसे जगाकर देखे तो सही, कि बाहर की दुनिया में क्या हो रहा है? हमारे बहू और बेटे, नाती और पोते क्या कर रहे हैं?

उसने हल्के से पति की कब्र पर दस्तक दी, कोई आवाज़ नहीं. फिर ज़ोर से हाथ थपथपाया. इस बार अंदर से कुनमुनाने की आवाज़ आई. शायद उसने करवट बदली है. वह कब्र पर बैठकर ज़ोर से थपथपाने लगी., जैसे दरवाजे पर लगातार दस्तक दे रही हो. अन्दर से गुस्से में सरसराती हुई आवाज़ आई, “कौन है भाई, क्यों परेशान कर रहे हो? सोने भी नहीं देते?”

“अब क्या दूसरे जनम में भी सोते रहोगे? कितना सोते हो? पिछला जनम तो गारद कर दिया. अब उठकर देखो, इस जनम में क्या हो रहा है?” रामपती बाहर से चिल्लाकर बोली.

“कौन है?”

“अब क्या मुझे भी भूल गये? मैं तुम्हारी पत्नी हूं, बाहर निकलकर देखो.”

“उसका पति सुखराम आलसी तो था, परन्तु पत्नी की आवाज़ सुनकर बाहर आ गया. रामपती उसे देखकर हंसने लगी. सुखराम को गुस्सा आ गया. मुंह फुलाकर बोला, “हंस क्यों रही है? और तू यहां क्या करने आई है? पहले तो कोई खोज-ख़बर नहीं ली.”

“जरा अपना चेहरा तो देखो, मिट्टी जैसा भूरा-भूरा लग रहा है. पूरे भूत लग रहे हो.”

“मरने के बाद आदमी मिट्टी जैसा ही हो जाता है. और तू भी तो...” सुखराम की आंखें आश्चर्य से फैल गयीं, “अरे, क्या तू भी मर गयी?”

“हां तो क्या नहीं? तुम्हारे बगल में ही तो मुझे भी दफनाया गया था. कभी पूछा भी नहीं कि कहां हो? कैसी हो?”

“मुझे कैसे पता चलता! कब मरी थी तू?”

“यह तो पता नहीं, परन्तु तुम्हारे मरने के दस साल बाद मरी थी. अब पता नहीं कितने बरस हो गये?”

“चल कोई बात नहीं, हमें महीनों और सालों से क्या लेना-देना? तुम आ गयी हो तो अब अकेलापन महसूस नहीं होगा. सुख-दुख की बातें करके समय काट लेंगे, वरना तू तो जानती है, कब्र के अंदर का मनहूस, सीलनभरा अंधेरा और डरावना सन्नाटा. मुर्दा आदमी और ज़्यादा मुर्दा हो जाता है. मैं तो बस सोता ही रहता था. अब तुम आ गई तो चलो एक बार गले मिलकर प्यार कर लें.” सुखराम ने उसकी तरफ़ अपनी बांहें फैलाई.

रामपती नई-नवेली दुल्हन की तरह शरमा गई. सिर नीचा करते हुए बोली, “आप भी न! अब मरने के बाद प्यार करोगे? जब जिन्दा थे तो दूर-दूर रहते थे. बुढ़ापे में तो बिल्कुल ही बात नहीं करते थे. बस वहीं आल्हा और महाभारत...”

“तू भी तो सोच, बुढ़ापे में बहू और नाती-पोते के बीच क्या बातें करते. भरा-पूरा परिवार था. वैसे भी बुढ़ापे में बेटे ने पहले छप्पर के नीचे डाल दिया, बाद में खेतों की रखवाली करने के लिए यहां वीरान जंगल में एक कुटिया के अंदर. ऐसे में मैं क्या करता. तू भी कभी-कभार ही आती थी मिलने. मैं तो गृहस्थ होकर भी सन्यासी हो गया था. तू परिवार में मगन थी, मैं खेतों में हरिभजन करता था.”

“मैं कौन-सा परिवार में मोहन भोग लगाती थी. तुमको क्या पता बहू किस तरह मुझे घर के कामों में झोंके रहती थी. जानवर चराने से लेकर चूल्हा-चौंका, झाड़ू-बरतन सभी मैं ही करती थी. कुएं से पानी तक भरकर लाती थी. लकड़ी-फाटा इकट्ठा करती थी. बहू राजरानी की तरह चैन की बंशी बजाती थी. और मुझे एक मिनट भी फुरसत नहीं मिलती थी, तुमसे मिलने कब आती?”

“हां, बात तो तू ठीक कह रही है. आदमी भी कितना मूर्ख होता है, जो बुढ़ापे की लाठी के लिए बेटों की कामना करता है. मेरे बेटे को देखो, बुढ़ापे में मुझे खेतों का चौकीदार बना दिया और जब मरा तो बगल में मिट्टी खोदकर गाड़ दिया. ये भी न हो सका कि चार कन्धों पर लादकर गंगा जी में बहा देता. चिता न देता, पर गंगाजल तो नसीब हो जाता. गंगा की जलसमाधि मिलती तो सीधे स्वर्ग जाता. मछलियां खा जातीं, तो पुण्य मिलता. अब खेतों के बीच में गाड़ा है, तो अभी तक भटक रहे हैं, समाधि भी कच्ची है. ये न हुआ कि दो ईंट लगाकर कब्र को पक्का करवा देता. खाने-पीने से क्या इतना भी नहीं बचता.”

“बचता क्यों नहीं अब तो नौकरी भी कर रहा है. मास्टरी मिल गयी थी?”

“चलो अच्छा है. सुखी है. परन्तु हमें पता नहीं कब मुक्ति मिलेगी?”

“क्या मुक्ति मिलेगी. जीते-जी नोकरानी बनकर पूरे घर की सेवा की. अब भी उनकी चिन्ता सताती रहती है. तुम क्या उनके बारे में भी सोचते थे?”

“मैं क्या सोचता, मुझे तो हर समय आलस दबाये रहता था, इसलिए सोता ही रहता था.”

“सच्ची, तुम भी पता नहीं कैसे अलाल हो. अच्छा, अब आओ अपना घर देखकर आते हैं. नाती-पोतों को देखे बहुत दिन हो गये. वो तो हमें देख नहीं पायेंगे, परन्तु हम उनको देखकर अपनी आंखें जुड़ा लेंगे.”

“तुम कहती हो तो चलता हूं, लेकिन पहले अपने खेत देख लें. चारों तरफ़ कितनी हरियाली छाई है, सुहावना मौसम है, मन्द बयार है और धूप बदन को कितनी सुखद और कोमल लग रही है.”

“हां सच्ची, लोग कहते हैं, मरने के बाद आदमी भूत बन जाता है और उसको कोई भी संसारी चीज़ अच्छी नहीं लगती, परन्तु हमको तो सबकुछ अच्छा लग रहा है. खेत, फसल, पेड़-पौध, धरती-आकाश और पानी...सभी कुछ तो अच्छा लग रहा है.”

“हां, यह सब जीवित मनुष्यों की बनी-बनाई बातें हैं. जब तक वह जिन्दा रहता है, खुद सबका दुश्मन बना फिरता है. हरदम लड़ता-झगड़ता रहता है. चीज़ों का विनाश करता है. जहां देखो, खून-खराबा...बात-बात में हथियार उठा लेता है. दूसरों का माल हड़पने के अवसर ढूँढ़ता रहता है. कम से कम मरकर तो हम सुखी हो गये. किसी चीज़ की चिन्ता-फ़िक्र नहीं, कोई भांय-भांय नहीं. जैसे मर्जी हो रहो, न किसी के पंजे में, न छक्के में.”

“हां, अच्छा वो देखो अपने खेतों की फसल कितनी अच्छी है इस बार.”

“हां, लगता है, बेटा खूब मेहनत कर रहा है.”

“करना ही पड़ेगा, चार बेटियां तो मेरे जीते-जी हो गयी थीं. अब पता नहीं पोता हुआ है या नहीं.”

“घर चलेंगे तो पता चलेगा.”

“और जी, देख रहे हो. जेटजी के खेत में हमारे खेतों से अच्छे हैं.”

“उनकी ज़मीन ज़्यादा उपजाऊ है.”

“सब तुम्हारी काहिली और निटल्लेपन का परिणाम है. वह मुखिया थे, घर संभालते थे और बदले में अच्छी ज़मीन अपने नाम करवा ली. तुमको तो आल्हा-ऊदल से ही फुरसत नहीं थी.”

“वह घर के मुखिया थे, बड़े थे. उनकी जो नीयत थी, किया. हमें भले ही उबड़-खावड़ और कम उपजाऊ वाली ज़मीन मिली हो, परन्तु हमारा बेटा पढ़-लिखकर मास्टर तो बन गया. उनका बेटा तो अनपढ़ ही रह गया.”

“परन्तु खेती में तो कमा-खा रहा है.”

“सब अपनी किस्मत का कमाते-खाते हैं.” सुखराम ने जैसे जीवन का दर्शन समझा दिया हो, “अच्छा, ये बताओ, अपने बेटे की नौकरी लगी तो बड़ा ज़ंशन हुआ होगा.”

रामपती का स्वर अचानक बदल गया. नफ़रत से बोली, “काहे का ज़ंशन. मैंने एक मनौती मानी थी कि जब बेटे की नौकरी लग जाएगी तो घर का बकरा कटवाऊंगी, नाते-रिश्तेदारों और पूरे गांव के लोगों को दावत दूंगी; परन्तु बेटे ने मेरी मनौती खोटी कर दी.”

“कैसे?” सुखराम ने पूछा.

“बहु ज़िद् पकड़ गयी कि पहले मेरे लिए कंगन बनेंगे. तो बेटे ने बकरा बेचकर उसके लिए कंगन बनवा दिए. मेरी मनौती धरी रह गयी. किसी को एक लड्डू तक नहीं बंटवाया. हर महीने तनख्वाह मिलती है, परन्तु मेरे लिए साल में एक साड़ी छोड़कर कुछ नहीं लाया. बीवी को गहनों-कपड़ों से लादे रहता है. भगवान को मानता है, परन्तु दीन-दुखी पर एक पैसा नहीं खर्च करता.”

“वह भी ठीक ही करता है. ज़माने का यही चलन है. आदमी पहले अपने बीवी-बच्चों को देखता है, फिर बूढ़े मां-बाप को. तुमको बुढ़ापे में कौन-सा साज-शृंगार करना था, जो गहनों-कपड़ों से लादता, विधवा जो ठहरी...”

“तुम भी बेटे का पक्ष ले रहे हो. औरत को नहाने-धोने के बाद क्या दूसरा कपड़ा नहीं लगता?”

“ठीक है, अपना बेटा है. उसको बुरा कैसे कहें? हम अपनी सोच के अनुसार तय करते हैं, कि ठीक क्या है और सही क्या है; परन्तु दुनिया की रीत ये है कि आदमी पहने अपना स्वार्थ देखता है. आदमी अपने बीवी-बच्चों के लिए ज़्यादा करता है, मां-बाप के लिए कम. एकाध ही ऐसे होते हैं, जो बुढ़ापे में मां-बाप का सहारा बनते हैं और जो ऐसे होते हैं, उनकी बीवियां उन्हें ऐसा बनने नहीं देतीं.”

“तुम उसे बुरा मत कहो, मैं भी नहीं कहती. मैं क्या जानती नहीं कि वह अपनी बीवी के कहने पर चलता था. इसीलिए उसकी मति मारी गयी थी. अरे देखो, बहू तो इधर ही आ रही है. हरा चारा लेने आई होगी. साथ में एक बच्चा भी है,

बेटियां नहीं है, शायद स्कूल गयी होंगी. बेटा मेरे मरने के बाद हुआ होगा. कितना प्यारा है.” रामपती का मन उसको गोदी में लेने के लिए मचल गया, परन्तु वह निराकार थी, पोते को कैसे गोदी में लेती. मन में कसमसाती रह गयी. सुखराम उसके चेहरे के भावों को चढ़ता-उतरता देख रहा था. रामपती की मज़बूरी को देखकर बोला, “मन में संतोष रखो, इस तरह दुखी क्यों हो रही हो? अब तुम संसारी प्राणी नहीं हो. अभी भी तुम्हारे मन से मोह-माया नहीं गया है.”

“क्या करूं, स्त्री हूं न! बच्चों को देखकर मन उनकी तरफ भागता है.”

“मेरा भी करता है, परन्तु मैं अपने को रोक लेता हूं. मनुष्य को कभी भावुक नहीं होना चाहिए. रिश्ते मनुष्य को भावुक बनाते हैं. इसलिए मैं अपने जीवन के दूसरे पड़ाव में महाभारत पढ़ता था. इसमें जीवन का वास्तविक सार है. और अब तो हम मर चुके हैं. रिश्ते-नाते हमारे लिए बेमानी हैं. रिश्तों की जड़ता और उनका खोखलापन कैसा होता है, अभी दिखाता हूं. आओ इधर, थोड़ी देर में देखना क्या होता है? अपनी कब्र के पास चलो.” वह दोनों कब्र के पास आ गए और ध्यान से बहू और उसके बच्चे को देखने लगे.

बहू चारा काटने लगी थी. उसका ध्यान हटते ही, बेटा दौड़कर कब्र के पास आ गया. मां ने उसे रोका था, परन्तु वह अनसुनी करके कब्र के पास आ गया. वहां थोड़ी खुली जगह थी और एक समतल चट्टान थी, जिस पर लोग बैठकर सुस्ताते थे. उनका पोता जिसका नाम तक वह नहीं जानते थे, उसी तरफ आया और चट्टान पर चढ़कर खेलने लगा. उसे देखकर सुखराम तो निश्चिंत रहा, परन्तु रामपती भाव-विह्वल हो गयी, जैसे वर्षों बाद अपने कलेजे के टुकड़े को देख रही थी. वह उसे छूना चाहती थी, प्यार करना चाहती थी, उसके भोले मुखड़े को चूमना चाहती थी; परन्तु ऐसा करने में वह असमर्थ थी, क्योंकि वह निर्जीव थी. उसका कोई आकार नहीं था. उसके पास केवल भावनाएं थीं. वह देख सकती थी, सोच सकती थी; परन्तु कुछ कर नहीं सकती थी. यही हाल उसका पति के मरने के बाद हुआ था, जब घर में सबसे बूढ़ी होते हुए भी उसका कोई मान-सम्मान न था. उसको कोई पूछता नहीं था, बेटा तक नहीं. वह एक नौकरानी जैसी हो गयी थी. बहू की डांट-फटकार उसको बोनस में मिलती थी. घर में खिच-खिच होती थी, तो इसके लिए भी बेटा उसे ही जिम्मेदार ठहराता था. वह अपनी तकलीफ़ किसी से नहीं कह सकती थी.

और आज मरने के बाद भी उसकी वही स्थिति थी. अब उसे कोई शारीरिक कष्ट नहीं था, उसे कोई काम भी नहीं करना पड़ता था, परन्तु सबको देखते-सुनते हुए भी वह उनके पास जाकर उन्हें छू नहीं सकती थी, उनको प्यार नहीं कर सकती थी. न बदले में उनका प्यार पा सकती थी. वह विवश थी.

वह भाव-विभोर होकर अपने पोते को देख रही थी. वह चार-पांच साल का रहा होगा. वह वट्टान से जमीन पर कूदता, फिर दौड़कर उस पर चढ़ता. यही क्रम वह बार-बार दोहरा रहा था. इसमें उसको बड़ा मज़ा आ रहा था. यह एक ऐसा खेल था, जिसमें दूसरे किसी साथी की दरकार नहीं थी. वह खेलता, चट्टान से नीचे कूदता, दौड़ता और फिर से चट्टान पर चढ़ जाता. उसके चेहरे पर असीम प्रफुल्लता के भाव प्रकट हो रहे थे. बीच-बीच में वह खिलखिलाता जैसे इस खेल में उसे बहुत मज़ा आ रहा था. वह हंसता तो रामपती ताली बजाकर नाच-सी उठती, जैसे बच्चा उसी के साथ खेल रहा था. वह ताली बजाती, परन्तु उसकी आवाज़ बच्चे के कान तक नहीं पहुंचती थी, क्योंकि उसकी ताली तो एक हवा के समान खाली थी. उसकी कोई आवाज़ नहीं थी.

सुखराम निश्चिन्त भाव से अपनी पत्नी को खुश होते हुए देख रहा था. तभी एक आवाज़ आई. यह बहू की आवाज़ थी. वह अपने लाडले से कह रही थी, “बेटा नीटू, उधर कबर है. उसके ऊपर मत कूदना. यहां आ जाओ.”

“क्यों अम्मा, कबर के ऊपर क्यों न कूदूं?” बच्चा बाल सुलभ चंचलता के साथ बोला.

“बेटा वहां मुर्दा गड़े हैं. वह भूत बनकर डराते हैं. तुम डर जाओगे.”

“किसका भूत है.” बच्चा बिना किसी डर के बोला. उसकी मां काम छोड़कर दौड़ी हुई आई और उसे गोदी में लेकर बोली, “तुम नहीं जानते. यह कबर में तुम्हारे दादा-दादी गड़े हैं. वह भूत बनकर तुम्हें डरायेंगे. अब आइन्दा यहां नहीं आना.”

“अम्मा, दादा-दादी हमें क्यों डरायेंगे?” बच्चा अगला प्रश्न कर बैठा.

“क्योंकि वह खराब हैं.” उसकी मां ने कहा, “अब ज़्यादा सवाल मत करो. चलो यहां से...” वह नीटू को घसीटते हुए कब्र से दूर ले गयी.

सुखराम ने रामपती की गीली आंखों में देखते हुए कहा, “देख लिया न्! यही दिखाने के लिए मैं तुम्हें यहां लाया था. बहू हमारे बारे में क्या सोचती है, पता चल गया न्! कोई भी आदमी अपने बेटे-बच्चों का बुरा नहीं चाहता. फिर भी बहू हमारे मरने के बाद भी अपने बच्चों के मन में हमारे प्रति ज़हर घोल रही है. जब जिन्दा

थे, तब किसी का बुरा नहीं किया, अब मरने के बाद किसी का क्या बिगाड़ लेंगे. हम तो इस लायक भी नहीं हैं कि किसी को एक थप्पड़ तक मार सकें.” सुखराम की आवाज़ में बेबसी झलक रही थी.

रामपती गीले स्वर में बोली, “बहू तो ऐसी ही है. हमारे मरने के बाद भी नहीं सुधरी. जिन्दा थे, तब भी सीधी आंख नहीं देखती थी.”

“आदमी का स्वभाव और चरित्र कभी नहीं बदलता.” सुखराम ने दार्शनिक भाव से कहा, “यह पारिवारिक परिवेश और संस्कारों से बनता है. कुछ लोग जन्म से ही दुष्ट प्रवृत्ति के होते हैं. बहू का कर्कशा स्वभाव जन्मजात है. वह कभी नहीं बदलेगा. अच्छा बेटा दिखाई नहीं दे रहा. कहां गया होगा?”

“वह तो स्कूल जाता है. शाम तक आएगा.” रामपती ने बताया.

“तो फिर हम लोग शाम को घर चलेंगे, तब देखेंगे कि घर में क्या-क्या हो रहा है आजकल?”

जाड़े की शाम थी. सूरज दक्षिण-पश्चिम की तरफ झुक आया था. परछाइयां लंबी होने लगी थीं. बहू घर की तरफ चली तो वह दोनों भी उसके पीछे-पीछे चले. गांव के अंदर सड़क पक्की हो गयी थी. सुखराम और रामपती हैरत से बदले हुए गांव को देख रहे थे. पहले जहां झोंपड़ियां थीं, कच्चे मकान थे, वहां अब पक्के मकान खड़े थे. भले ही मकान आधे-अधूरे बने थे, परन्तु समृद्धि और विकास के कुछ निशान सबके घरों में दिखाई दे रहे थे. वह दोनों आश्चर्य से गांव के बदले हुए स्वरूप को देखते हुए सोच रहे थे, भूखे-नंगे लोगों के पास इतना पैसा कहां से आ गया था कि वह पक्के मकान बनवा सकें. यह बात वह नहीं जानते थे कि सरकार ने गरीबों के उत्थान के लिए कई प्रकार की योजनायें चला रखी थीं. उनका थोड़ा-बहुत लाभ उनको मिल रहा था. आधा-अधूरा ही सही गांवों और शहरों का विकास हो रहा था, यह एक सुखद संकेत था.

सुखराम और रामपती को यह देखकर सुखद आश्चर्य हुआ कि उनका घर पूरा पक्का बन चुका था. यह उनके बेटे की अमीरी की निशानी थी. आसपास के घरों के बीच वह एक हवेली की तरह दिखाई देता था. वह दोनों घर के सहन में घूम-घूमकर देखने लगे, जानवरों के लिए अच्छा बाड़ा बन गया था. खंभेदार बरामदा था, जिससे लगी हुई बैठक थी. फर्श भी पक्की थी. इसका मतलब था, बेटा अच्छी तनख्वाह पा रहा था और खेती से उसके घर-खर्च पूरे हो जाते थे. सुखराम ने देखा,

बरामदे के खंभों में कुछ लिखा हुआ था. अंधेरा काफी हद तक घिर आया था. गांव में बिजली के खंभे तो गड़े थे, परन्तु बिजली के आने और जाने का कोई नियमित समय नहीं था. धुंधले अंधेरे में सुखराम ने खंभे पर लिखी इबारत को पढ़ने का प्रयास किया...अरे, वह चौंका और उसके हृदय की धुकधुकी तेज़ हो गयी. यह तो उसके पुरखों के नाम थे. बेटे ने अपनी वंशावली अंकित कर रखी थी. सुखराम के परदादा से नामों का उल्लेख था, यानी कि जितना उसके बेटे को पता था, उतनी वंशावली उसने लिखी थी, अंत में उसके पोते का नाम था, शिवेन्द्र...नीटू उसका पुकारने का नाम था.

सुखराम ने संतोष के भाव से रामपती को देखा और बोला, “देखो, बेटे ने यहां अपनी वंशावली लिख रखी है.”

“अच्छा, क्या मेरा भी नाम है?” रामपती ने पूछा.

“तुम्हारा नाम कैसे होगा? वंशावली में केवल पुरुषों का नाम होता है, औरतों का नहीं.”

“यह कौन सा दस्तूर है. घर-परिवार क्या अकेले मर्दों से चलता है. क्या वह अकेले बच्चे पैदा करते हैं? हम न हों तो वंश आगे कैसे बढ़े?” रामपती ने कटुता से कहा. उसकी बात सच थी, सुखराम चुप रह गया. रामपती की कटु सच्चाई के आगे उसके महाभारत का ज्ञान कुंद पड़ गया था. वह दूसरी तरफ़ देखने का बहाना करने लगा. रामपती भी समझ गयी कि उसकी बात का सुखराम के पास कोई जवाब नहीं था, अतः वह भी इधर-उधर देखने लगी.

बहू ने हरा चारा मशीन के नीचे डाल दिया था और वहीं पर एक किनारे बैठकर सुस्ताने लगी थी. तभी उनका बेटा साइकिल से आ गया. उसके पीछे-पीछे चारों बेटियां भी आ गईं. सभी स्कूल ड्रेस में थीं. चारों बेटियां काफी बड़ी हो गयी थीं. बेटा अभी स्कूल नहीं जाता था. बाप को देखकर वह दौड़ा हुआ आया और उसकी साइकिल को पकड़कर मचलने लगा, “पापा, पापा, मेरे लिए क्या लाए हो?”

रतन मुस्कराते हुए बोला, “देता हूं, देता हूं, थोड़ा रुको.” उसने साइकिल एक किनारे खड़ी की और जेब से छोटी सी चाकलेट निकालकर उसे दी. नीटू खुश हो गया और दौड़ता हुआ अंदर चला गया. दुनिया की यहीं सच्चाई है, हर मां-बाप अपने बेटों को इसी तरह प्यार देते हैं, और बेटे अपने बूढ़े मां-बाप को पुरानी वस्तुओं की तरह घर के एक कोने में फेंक देते हैं. सुखराम और रामपती ने अपने जीवन के अंतिम दिनों में जो उपेक्षा और दुर्व्यवहार सहा था, यह केवल उनका दिल

ही जानता है, कोई और नहीं. किसी ने देखा होगा, तो उसे ज़माने का चलन समझकर उसकी तरफ़ ध्यान नहीं दिया था.

इसके बावजूद भरे पूरे परिवार को खुशहाल देखकर दोनों मृत बूढ़ों की आंखें जुड़ा गयीं. बूढ़ों का आशीर्वाद अपने बच्चों के लिए कभी कम नहीं पड़ता.

बेटियां घर के अंदर कपड़े बदलने चली गयीं. वह इतनी बड़ी हो गयी थीं कि अपने-अपने काम स्वयं कर लेती थीं. बस बेटा ही छोटा था. सुखराम के बेटे रतन ने हाथ-मुंह धोया. बैठकर एक बीड़ी पी और फिर काम के लिए तैयार हो गया. वह बहुत मेहनती आदमी था. अभी-अभी स्कूल से लौटा था, परन्तु तुरन्त ही चारा काटने की मशीन में जुट गया. शायद कोई मजदूर नहीं रखा था. उसकी बीवी चारा लगा रही थी और वह मशीन खींच रहा था...अकेले ही. थोड़ी देर में उसकी बड़ी बेटी आकर दूसरी तरफ़ जुट गयी.

तभी उधर से गांव के पंडित रविशंकर गुजरे. वह ज्ञानी पंडित थे. गांव की पूरी राजनीति उन्हीं के दांवपेच से चलती थी. एक तरह से वह पूरे गांव को अपने ज्ञान से नचाते रहते थे. रतन को मशीन पर चारा काटते देखकर रुक गये और बोले, “रतनभाई, क्या हाल चाल हैं?”

“पां लागू पंडित जी,” रतन ने काम रोककर कहा. हाथ झाड़ते हुए उनके पास आया और खटिया डालता हुआ बोला, “बैटिए पंडितजी,” खुद उनके सामने एक प्लास्टिक की कुर्सी पर बैठ गया.

“भाई, मानना पड़ेगा, बड़ी मेहनत करते हो. सुबह-शाम खेतों में काम करते हो, दिन भर स्कूल में पढ़ाते हो. थकते नहीं हो क्या?”

रतन हौले से मुसकराया, “पंडितजी, काम से जी चुराऊंगा तो दाल-रोटी कहां से आएगी. चार-चार बेटियां हैं, उनको पढ़ाना-लिखाना है, फिर शादी करना है. एक बेटा है, उसके भविष्य के लिए भी कुछ करना है. बैठे रहने से कैसे काम चलेगा?”

“तुमने भी तो बेटे के चक्कर में चार-चार बेटियां पैदा कर डालीं. मास्टर हो, थोड़ा अक्ल से काम लेते?”

“मैं तो समझता हूं, परन्तु घरवाली नहीं समझती. दुनिया के लोग अलग से ताने मारते हैं. बेटा ही तो बुढ़ापे की लाठी होता है.” रतन की बात सुनकर सुखराम और रामपती की आत्मा कराह उठी. उनका बेटा भी तो उनके बुढ़ापे की लाठी था, परन्तु बीवी के आते ही अपना ज्ञान भूल गया. अब अपने लिए बेटे को बुढ़ापे की लाठी बनाकर पाल-पोस रहा है. सुखराम और रामपती के लिए तो बुढ़ापे की लाठी

टूट गयी थी. अब वह अपने बुढ़ापे के लिए लाठी तैयार कर रहा था. उसकी लाठी क्या उसे सहारा देगी? पहले उसे पाल-पोसकर बड़ा करे, शादी कर दे, फिर पता चलेगा कि वह बेटा जो बचपन में मां-बाप की आंखों का तारा होता है, बड़ा होकर मां-बाप के बुढ़ापे को कितना सहारा देता है.

सुखराम और रामपती शांत भाव से पंडित और बेटे के बीच का वार्तालाप सुन रहे थे.

पंडितजी आगे कह रहे थे, “हां, भाई दुनिया की रीति बड़ी निराली है. आदमी ज़्यादा बच्चे पैदा कर ले, तो ताने मारते हैं. एक बच्चा पैदा करे, तो ताने देते हैं कि दूसरा न हुआ और केवल बेटियां ही हों, तो स्त्री को ताने देते हैं कि एक बेटा न पैदा कर सकी. कोई बच्चा न हो, तो जीना ही दूभर कर देती है.”

“यही न, पंडितजी, समाज में हर तरह की बातें सुननी पड़ती हैं. अब मुझे ही लो. मां-बाप को मरे इतने साल हो गए, लोग कह रहे हैं, पिंडदान करा दो, गया चले जाओ. अब बताओ मैं अकेली जान कहां-कहां जाऊं.”

“वो तो करना ही पड़ेगा, रतन भाई. मां-बाप का तुमने दाह-संस्कार तो किया नहीं. कब्र में दफना दिया. उनकी मुक्ति के लिए तुम्हें गया जाना ही पड़ेगा. बिना पिंडदान और ब्रह्मभोज के उनको मुक्ति नहीं मिलेगी.”

तभी रतन की बीवी, जो मशीन के पीछे बैठी उन दोनों की बातें सुन रही थी, तमककर बोली, “बूढ़ा-बुढ़ऊ क्या हमें खाना देने आएंगे, जो उनकी मुक्ति के लिए गया-ब्रह्मभोज करें. मर गये सो मर गये. कितने साल हो गये, उनको तो कब की मुक्ति मिल गयी होगी. अब हम उनके लिए क्यों हजारों रुपया बरबाद करें.”

सुखराम और रामपती ने एक दूसरे की आंखों में देखा, जैसे कह रहे हों, जीते-जी तो उनको सुख की एक रोटी नहीं दी, अब मरने के बाद गया जाकर पिंडदान करेगा, वापस आकर ब्रह्मभोज करेगा. गांव-जवार के हजारों लोगों को दावत देगा. मृत व्यक्तियों की मुक्ति का यह कौन-सा रास्ता है? वह तो दुनिया के जंजाल से कब के मुक्त हो गये थे. उनको अब कौन सा कष्ट है. उनकी आत्माएं अगर अपने घर के आसपास घूम रही हैं, तो अपनी मर्जी से घूम रही हैं, किसी बंधन में नहीं. लेकिन पंडितजी अपने जुगाड़ में लगे हुए थे. लोग धरम-करम नहीं करेंगे, पूजा-पाठ नहीं करेंगे, तो सनातन धर्म का सत्यानाश नहीं हो जाएगा. फिर इस देश के लाखों-करोड़ों पंडो-पुजारियों का पेट कैसे भरेगा. पंडित रविशंकर इस गांव के ही नहीं, आस-पास के गावों में अकेले पंडित थे, जो पूजा-पाठ, कर्मकांड, कथा-भागवत

और शादी-ब्याह करवाते थे. यही उनकी जीविका का साधन था. लोगों के पास जा-जाकर उनको धर्म का पाठ पढ़ाते थे. ज़्यादातर गरीब उनके फेर में आ जाते थे और अपने गृहों की शांति के नाम पर वह साल-छः महीने में सत्यनारायण की कथा करवा ही लेते थे.

आज पता नहीं क्या तय करके पंडित जी रतन के पास आए थे. वह पढ़ा-लिखा था, परन्तु धर्म के नाम पर वह भी वैकुण्ठनाथ था. बहुत अंधविश्वासी था. उसकी बीवी भी थी, परन्तु वह वहीं तक अंधविश्वास के दलदल में फंसी थी, जहां तक उसका अपना भला होता था. सास-ससुर के नाम पर वह एक फूटी कौड़ी भी खर्च करनेवाली नहीं थी. इस मायने में वह काफ़ी हद तक सही थी. मरे आदमी के ऊपर पैसा खर्च करने का क्या लाभ, इतना उसकी बुद्धि में अच्छी तरह से आता है. क्योंकि वह यह बात भी बहुत अच्छी तरह जानती-समझती थी कि बूढ़ा आदमी ज़्यादा दिनों तक जीवित नहीं रहनेवाला है तो उसको अच्छा खान-पकवान देने का क्या लाभ? तभी तो रामपती और उसके पति को उसने बुढ़ापे में ठीक से खाने-पहनने को नहीं दिया.

सुखराम के दिमाग में विचारों का कारवां तेज़ी से आगे बढ़ रहा था. पंडित जी रतन को बरगलाने में लगे थे. अगर उसे फंसा ले गए तो पूजा-पाठ के नाम पर हजारों रुपये ऐंट लेंगे. ब्रह्मभोज के नाम पर सैकड़ों पंडित पूड़ी, सब्जी और हलवा का भोग लगाकर डकार भी नहीं लेंगे. अन्य हजारों लोग मुफ्त की रोटियां तोड़ कर गालियां ऊपर से देंगे, कि पूड़ियां नरम नहीं थी, सब्जी में नमक या मिर्च ज़्यादा पड़ गयी थी. मिठाई बासी थी...आदि-आदि. खानेवालों को दूसरे के यहां खाना खाने के बाद खाने में कमियां निकालने में मज़ा आता है और खिलानेवाले का बखार खाली हो जाता है.

“शास्त्र विरोधी बात कर रही हो, रतन की बहू! बड़ा पाप लगेगा. तुमको मालूम नहीं, पुरखों की आत्मा तब तक भटकती रहती है, जब तक उनका पिंडदान न किया जाय. मैं तुम्हारे भले की बात कह रहा हूं. समर्थ हो, वरना कोई बात नहीं थी. मां-बाप के आशीर्वाद से ही तुम सुख से कमा-खा रहे हो, अगर उनकी आत्मा को कष्ट होगा, तो विनाश होते देर नहीं लगेगी.” पंडित जी ने विश्वामित्र की तरह क्रोध प्रकट करते हुए कहा, जैसे वह अपने प्रकोप से सभी का विनाश कर देंगे.

रतन की बीवी ने कुछ कहना चाहा, परन्तु तभी रतन ने अपनी बीवी से कहा, “तुम बीच में मत बोलो,” फिर पंडित जी की तरफ़ मुखातिब होकर बोला, “आप

जो कह रहे हैं, ठीक कह रहे हैं. मेरे भी मन में यह बात आई है, लेकिन देखो, कब संयोग बनता है.” रतन ने बहुत गंभीरता से कहा. उसका स्वर इतना दीन था, जैसे उसे अपने मां-बाप की मृत्यु का बहुत दुःख था और जब तक उनकी आत्मा को मुक्ति नहीं दिला देगा, उसे चैन नहीं मिलेगा.

“यह संयोग जल्दी ही बना लो. तुम्हारे पिता को मरे लगभग पन्द्रह साल हो गए और मां को मरे पांच साल हो गए. उनके मरने के बाद तुम्हारे घर में बेटा भी पैदा हुआ है. समझो, यह उनका आशीर्वाद है, वरना हो सकता था, केवल बेटियां ही पैदा होती, तब...?” पंडित जी ने जान-बूझकर रतन के मन में संशय के बादल पैदा कर दिये. वह धर्म के नाम पर भोले-भाले गांववालों को बहलाना-फुसलाना बहुत अच्छी तरह जानते थे. आखिर यहीं उनका कर्म था. इसी कर्म से उनकी जीविका चलती थी. रतन पढ़ा-लिखा था, मास्टर था; परन्तु धार्मिक अंधविश्वास उसके अंदर भी उतना ही गहरे तक जड़ें जमाकर बैठा था, जितना किसी भी अनपढ़ और गंवार के मन में होता है.

पंडित जी की बात पर वह कुछ बोलता, उसके पहले ही उसकी बीवी बोल पड़ी, “वह तो पंडितजी, हमने कितनी मनौतियां मानी थीं, शिरडी से लेकर वैष्णों देवी की यात्रा की. और भी कई तीर्थ-स्थानों में गए, तब जाकर हमारी मन्नत पूरी हुई और हमारे घर में बेटा पैदा हुआ. इसमें हमारे सास-ससुर का आशीर्वाद कहां से आ गया. वह तो तब जिंदा भी नहीं थे. मरे आदमी हमारे लिए कुछ नहीं करते.”

रतन की बीवी की न जुबान बंद होनेवाली थी, न वह अपने सास-ससुर की आत्मा को कोई मुक्ति देनेवाली थी.

“यह तुम्हारी भूल है. मरा आदमी चाहे किसी का कोई भला न करे, परन्तु बुरा अवश्य कर सकता है. हमारे धर्मशास्त्रों में भूत-प्रेत, चुड़ैलों और भटकती हुई आत्माओं के बारे में बहुत विस्तार से बताया गया है. कितने ही लोगों को उनके प्रत्यक्ष दर्शन हुए हैं. वह अपने दुश्मनों से बदला लेने के लिए मौका ढूंढते रहते हैं. केवल दुश्मन ही नहीं, कई बार तो वह अपने घरवालों को भी सताते हैं, जो उनके जीवन में उनको कष्ट देते हैं.”

पंडितजी ने यह बात जान-बूझकर कही थी, क्योंकि वह अच्छी तरह जानते थे कि रतन की बीवी ने बुढ़ापे में अपने सास-ससुर को बहुत कष्ट दिया था. समय पर खाना नहीं देती थी, देती तो बसी-बचा हुआ खाना देती. साल में एक बार भी

उनके लिए नए कपड़े न खरीदती. बेटा कहता भी तो उसे मना कर देती. बूढ़े-बुढ़िया से कड़े-से-कड़ा काम लेती थी. बेचारे अपने अंतिम दिनों में सुख को तरस गये थे.

पंडितजी पूरे गांव की जन्मपत्री जानते थे. यही उनका काम था.

रतन की बीवी ने तीखी आवाज में कहा, “हमने कौन से अपने सास-ससुर को जान से मार डाला था, जो वह हमारी जान के दुश्मन बनेंगे. जैसे दुनिया बूढ़े लोगों की सेवा करती है, वैसी ही हमने भी की थी. अब अगर वह बुरे थे, और हमारा बुरा करना चाहते हैं, करने दो, उनकी मर्जी.”

“इसीलिए कहता हूं, मान लो उनके जीवन में जाने-अनजाने तुमसे कोई गलती हो गयी हो और उनको थोड़ा-सा भी कष्ट पहुंचा हो तो उनकी आत्मा की शांति के लिए धर्म-कर्म और पूजा-पाठ करवाने में क्या हर्ज है. और फिर पुरखों का पिंडदान करवाना तो हर हिन्दू का धर्म है. एक बार पिंडदान हो गया तो वह इधर भटककर भी नहीं आएंगे. यहां भटकते रहेंगे तो कभी भी उनकी नज़र टेढ़ी हो सकती है और एक बार नज़र टेढ़ी हुई नहीं कि समझो तुम्हारे बुरे दिन शुरू हो गये. भाई रतन, तुम तो सक्षम हो, समर्थ हो. धन-दौलत की तुम्हारे पास कोई कमी नहीं है. आज जो कुछ तुम बने हो मां-बाप की बदौलत ही बने हो. जल्दी से मां-बाप का पिंडदान करवा दो. मैं भी इस साल गया जानेवाला हूं, कई लोग जा रहे हैं. एक पूरी बस जाएगी. तुम भी उसमें अपनी बुकिंग करवा लो.”

“पंडितजी मैं तैयार हूं.” रतन ने इत्मिनान से कहा, “जब बेटे के लिए जगह-जगह भटक सकता हूं, तो मां-बाप के लिए गया जाने में क्या नुकसान?”

सुखराम और रामपती अभी तक चुपचाप अपने बेटे, बहू और पंडितजी की बातें सुन रहे थे. इतनी बातें सुनने के बाद सुखराम ने अपनी बीवी से कहा, “देख रही हो, रतन को पढ़ाने लिखाने का कोई फायदा नहीं हुआ. अभी भी घोर अंधविश्वासी, दकियानूसी और पोंगा बना हुआ है. हमारी मुक्ति के लिए गया जाएगा, पिंडदान करेगा और हजारों लोगों को दावत देगा. यह नहीं समझता कि इसमें पंडित जी की चाल है. इसमें उनका फायदा है. हमारी मुक्ति तो इसी में है कि जहां उसने हमें गाड़ा है, वहां आकर दो फूल चढ़ा दिया करे.”

“धरम-करम में लगा हुआ है, परन्तु हमारी कब्र पर भूले बिसरे भी नहीं आता. बहू हमसे डरती है, परन्तु हमारे लिए पिंडदान नहीं करवाना चाहती.” रामपती ने अफसोस प्रकट करते हुए कहा.

“वह अपनी समझ में ठीक ही कह रही है. कब्र में आने से डरती है, उसका दूसरा कारण है. भले ही वह कमबुद्धि है, परन्तु बात सही कह रही है कि मरा आदमी न किसी का कुछ बिगाड़ सकता है, न बना सकता है. हम भी उसका क्यों कुछ कुरा करेंगे.”

“तुमने ध्यान से देखा है, हमारी कब्र समतल होती जा रही है. बरसात के पानी से मिट्टी बहती जाती है. बेटा कभी उसमें एक फावड़ा मिट्टी नहीं डालता कि कब्र सही-सलामत रहे. चारों तरफ झाड़-झंखाड़ उगे हुए हैं. लोग वहां जाने से क्यों नहीं डरेंगे.” रामपती ने कहा.

“यहीं तो मैं कह रहा हूं, बेटा को सद्बुद्धि आए कि पिंडदान और ब्रह्मभोज करने से किसी भी मृत आत्मा को मुक्ति नहीं मिलती. अगर वह कुछ करना ही चाहता है, तो बस इतना करे कि हमारी समाधि को पक्का बनवा दे, ताकि कोई उसके पास जाने से न डरे. जब कोई जीवित व्यक्ति हमारी कब्र के पास से गुजरे, और हमारे पास कुछ पल रुककर बात करे, तो हमें उसकी बातें सुनकर सुकून प्राप्त होगा. हम उसे आशीर्वाद ही देंगे, बद्दुआ नहीं.”

“हम तो मर गए, अब हम किसी का भला-बुरा क्यों सोचें. बेटा और उसका परिवार महल में रह रहा है. सब सुखी हैं. हमें अब कोई दूसरा सुख नहीं चाहिए. हमारे नसीब में टूटी कब्र है, वही हमारे लिए बहुत है. हम दोनों उसी में रहकर, सुख-दुख की बातें करते हुए अपने बेटे, बहू, नाती और पोतों को आशीर्वाद देते रहेंगे.” रामपती ने सीधी बात कही.

“हां, अब हम यही कर सकते हैं. चलो अब चलें.” फिर वह दोनों थोड़ा उदास और थोड़ा खुशी मन अपनी कब्र में आकर लेट गये. इसके बाद वह फिर नहीं जागे.



कल्लो कलूटी

बहुत लम्बा दुःस्वप्न था उसका...पच्चीस साल लम्बा. क्या इतना लंबा दुःस्वप्न हो सकता है किसी का? विश्वास नहीं होता, परन्तु यह सच है. वह पूरे पच्चीस वर्ष तक दुःस्वप्न के संसार में अकेली भटकती रही थी. वह अंधेरों में कैद थी और कहीं भी कोई रास्ता उसके लिए खुला दिखाई नहीं पड़ रहा था, जिससे निकलकर वह प्रकाश की दुनिया में पहुंच सकती. उसके चारों तरफ दलदल था, सुनसान जंगल था, चारों तरफ डरावनी आवाजें थीं. उसके इर्द-गिर्द कहीं भी रोशनी की एक हल्की किरण भी नहीं थी, जिसके सहारे वह अंधेरों में अपना रास्ता तलाश कर सकती थी.

अंधेरे हमें डराते हैं, तो जीने की लालसा भी हमारे मन में पैदा करते हैं. आज पच्चीस साल बाद उसका दुःस्वप्न टूटा था और वह फटी-फटी आंखों से अपने चारों तरफ बिखरे प्रकाश को देख रही थी. उसकी आंखों में शीतलता प्रदान करनेवाला खुला नीला आसमान था, धरती पर हरे-भरे पेड़-पौधे थे, रंग-बिरंगे फूल थे, तो गुनगुनाते हुए भंवरो के साथ तितलियां भी प्रकृति के रंगों के साथ अपने रंगों को मिलाकर अटखेलियां कर रही थीं. उससे विश्वास नहीं हो रहा था कि दुनिया इतनी खूबसूरत है, उसमें इतने सारे रंग हैं और उन रंगों में मन को आह्लादित करने की ऐसी विशेषता है कि मनुष्य उन्हीं में खोकर रह जाता है. अब तक कहां थे इतने सारे रंग? क्यों नहीं उसे प्रकृति की सुन्दरता दिखाई पड़ रही थी? कैसे दिखाई पड़ती...वह दुःस्वप्न में जो डूबी हुई थी.

अपनी आंखों में ढेर सारी खूबसूरती भरने के बाद उसने अपनी आंखें बंद कर लीं और तब उसकी आंखों में फिर से दुःस्वप्न की छाया उभरने लगी. वह छटपटा गयी एक पल के लिए...चाहा कि आंखें खोलकर दुःस्वप्न की यादों को परे हटा दे, परन्तु ऐसा संभव न हो सका. उसकी यादें इतने गहरे तक उसके

मन-मस्तिस्क में विराजमान थीं, कि उनसे दूर रह पाना उसके लिए किसी तरह संभव नहीं था. भले ही स्वप्न टूट गया था, परन्तु उसका भयावह असर मन से इतनी जल्दी कैसे दूर हो सकता था. अभी-अभी तो नींद टूटी थी, अभी-अभी सपना खत्म हुआ था. फिर उस डरावने सपने को, जो पच्चीस वर्ष तक उसके जीवन को आंदोलित करता रहा था, कैसे इतनी जल्दी वह भुला सकती थी, कैसे उसकी यादों के असर को तोड़ सकती थी.

पता नहीं कौन सा गांव-देश था, जिसमें उसने अपनी आंखें पहली बार खोलीं थीं, कहां वह पहली बार रोई थी और कहां पहली बार उसकी किलकारी गुंजी थी; परन्तु जब उसने अपनी बुद्धि से आंखों देखी और कानों सुनी बातों को समझना आरंभ किया, तो उसे अपने आसपास की दुनिया को देखकर बड़ा अचंबा हुआ था. चारों तरफ गंदगी, शोर और दरिद्रता का साम्राज्य था. कीड़े-मकोड़ों जैसी ज़िन्दगी थी वहां लोगों की. लोग आपस में लड़ते-झगड़ते थे और फिर शांत हो जाते थे. पता नहीं क्यों सारा दिन घर से बाहर रहने वाले लोग जब शाम को घर लौटकर आते थे तो उनके चेहरे बुझे हुए कोयेले की तरह होते. उनके मन में खीझ और गुस्सा भरा होता था. अन्दर ही अन्दर वह तिलमिलाते रहते थे और मौका पाते ही बच्चों और घरवालों पर अपना गुस्सा सिर से पगड़ी की तरह उतार देते थे. बच्चों की समझ में न आता, उन्होंने कौन सी गलती की थी और घरवालों इसे अपना भाग्य मानकर चुप बैठी रहती थीं, क्योंकि उन्होंने अपनी माओं को भी इसी तरह अपने पतियों से पिटते देखा था और उनकी मांओं ने अपनी मांओं को देखा था. यह एक ऐसा सिलसिला था जो परम्परागत तरीके से पीढ़ी-दर-पीढ़ी चला आ रहा था और इसमें परिवर्तन होने की रत्ती भर गुंजाइश भी किसी औरत को नहीं दिखती थी. ज़माना बदल गया था. रेडियो की जगह टी.वी और कम्प्यूटर आ गये थे. सबके हाथों में मोबाइल थे, लोग मोटरसाइकिलों और कारों पर चलने लगे थे, परन्तु उस दुनिया की औरतों की किस्मत उसी जगह स्थिर थी, जैसे किसी पहाड़ का विशाल पत्थर, जो सदियों तक अपनी जगह से नहीं हिलता है.

जिस मकान के अंदर वह पैदा हुई थी और जहां से कुछ बड़े होकर उसने घर-बाहर की दुनिया को समझना आरंभ किया था, उस मकान को मकान कहां जाये या झोंपड़ी, यह वह समझ नहीं पाई थी. उसके मकान में केवल तीन तरफ ही दीवारें थीं और चौथी दीवार का कहीं पता नहीं था. उस तरफ से उसके घर में आना-जाना होता था और उसका घर किसी खुले मैदान जैसा दिखता था. पीछे की दीवार के

ऊपर एक टूटा-फूटा टीन का छप्पर था, जिसकी मरम्मत हर दूसरे-तीसरे साल करनी पड़ती थी. कई बार वह आंधी-तूफान में उड़ जाता था. तब कई दिनों तक वह खुले आसमान के नीचे रहने को मजबूर हो जाते थे. छप्पर के नीचे कुछ टूटी-फूटी कच्ची-पक्की ईंटों का घेरा डालकर सोने और खाना बनाने के लिए जगह सुरक्षित कर ली गयी थी.

उसके आसपास की दुनिया के लोग जितने अजीब थे, उसके अपने घर के लोग उनसे ज़्यादा अजीब थे. वह कुल सात लोगों का परिवार था, एक मर्द, एक औरत और उनकी पांच लड़कियां. पांचों लड़कियों में वह सबसे छोटी थी और सबसे अल...अलग इस तरह से कि जहां एक तरफ उसकी चारों बड़ी बहनें साफ रंग की थीं और देखने-सुनने में ठीक-ठाक लगती थीं, तो वह दबे रंग की सांवली लड़की थी. कई बार तो काली लगने लगती थी और सुन्दर तो उसे कहा ही नहीं जा सकता था. शायद यही कारण था कि पूरी दुनिया के लोगों की घृणा उसके बदन से लिपट गई थी, परन्तु उसका असुन्दर और काला होना ही अकेला कारण नहीं था कि वह घृणा के समुद्र में गले तक डूबी हुई थी. घर में उसे क्यों नापसंद किया जाता था और वह दूसरों की नफरत का शिकार क्यों बनती थी, इसके तमाम अन्य कारण थे, जो बहुत बाद में उसकी समझ में आए थे.

उस घर का इकलौता मर्द झिगुरी अपने नाम को सार्थक करता था. वह सूखे पेड़ की पतली टहनी की तरह था, जो कड़ी मेहनत, अभावों, मुसीबतों और परेशानियों से जूझता हुआ वक़्त की बेरहम मार झेल रहा था. देह के साथ उसकी भावनाएं भी सूख चुकी थीं, जिनमें खुशी की कोई लहर नहीं दौड़ती थी. वह एक मुर्दे के समान था, परन्तु कभी-कभी चाभीवाले पुतले की तरह चलता था. उस पर कभी-कभी दौरा भी पड़ जाता था, जैसे पुतले में उल्टी चाभी भर दी गई हो या उसका कोई गलत पुर्जा दबा दिया गया हो. तब वह अपनी बीबी और बच्चों को जानवर की तरह लात-धूसों से पीटता था. जो आदमी चुप्पा होता है, उसके अन्दर क्रोध और घृणा का लावा उबलता रहता है, जो समय-असमय बाहर आ जाता है. कुछ ऐसा ही झिगुरी के साथ होता था. जब वह अपने पूरे गुस्से के साथ पूरे घर के लोगों को अपनी मार की चपेट में लेता था तो पूरे घर में कोहराम मच जाता था. सबके मुंह से चीखने-चिल्लाने और रोने की बेसुरी आवाज़ें निकलती थीं, परन्तु कोई इन आवाज़ों की तरफ ध्यान नहीं देता था, क्योंकि उस बस्ती के किसी न किसी घर से रोज ऐसी आवाज़ें आती रहती थीं और बस्ती के लोग इसके इतने आदी हो चुके

थे कि अब उनके कानों पर जूँ तक नहीं रेंगती थी. झिंगुरी भी सबको जानवरों की तरह पीटकर घर के एक कोने में बीमार और थके जानवर की तरह जाकर बैठ जाता था. उसके मुंह से एक बीड़ी सुगलती रहती थी. बीड़ी पी-पीकर उसने अपने मुंह को रेलगाड़ी के कोयलेवाले इंजन की तरह काला कर लिया था.

उस घर की औरत भूरी भी पतझड़ के सूखे पत्ते के समान सूखी और पीले रंग की थी गर्मी में जिस प्रकार पहाड़ों की घास सूखकर पीले-मटमैले रंग की हो जाती है, कुछ उसी प्रकार का उसका रंग था. शरीर में लगता था मांस बचपन से ही नहीं था या जिस प्रकार चील के घोंसले में मांस नहीं, केवल हड्डियां होती हैं, कुछ उसी प्रकार उसकी पांच बच्चियों ने दूध के रास्ते उसके शरीर के खून को निचोड़ लिया था और खून के अभाव में मांस गलकर हड्डियों में समा गया था. वह सारा दिन हवा में सूखे पत्ते के समान घर और बाहर डोला करती थी. दिन में जब वह घर के बाहर रहती थी, तो पांचों बच्चियों को कुछ शांति और सुकून मिलता था, परन्तु जैसे ही वह घर में घुसती थी, उसका चीखना-चिल्लाना चालू हो जाता और घर की साफ-सफाई और चौका-बर्तन को लेकर सबको डांटती-फटकारती रहती थी. इस प्रकार सारे दिन की थकान, खीझ और गुस्सा वह अपनी बेटियों पर उतारती थी.

दिन में बच्चियों को भले ही कुछ राहत मिलती रही होगी, परन्तु सबसे छोटी बच्ची, जिसकी यह कहानी है, कोई राहत या सुकून नहीं प्राप्त होता था, क्योंकि उसकी बड़ी बहनें उससे अधिक समझदार थीं और उनके दिमाग के कोने में यह बात अच्छी तरह घर कर गयी थी कि उनकी छोटी बहन काली-कलूटी है और वह उनके किसी अनजाने भाई की जगह पर जन्म लेकर आई है. इसी की वजह से इस घर में उनका भाई पैदा नहीं हो पाया था, जिसकी आकांक्षा और तमन्ना मां-बाप को बहुत दिनों से थी. उनको पूरा विश्वास था कि इस बार उनके घर में पुत्र-रत्न का जन्म होगा, क्योंकि उन्होंने पैसे उधार लेकर शिरडी और वैष्णों देवी की यात्रा की थी, दूर-दूर तक के मजारों पर जाकर मन्त मांगी थी, घर में न जाने कितनी बार पूजा-पाठ करवाया था और फकीरों से दुआयें मांगी थी; परन्तु उनकी सारी मन्तों पर पानी फिर गया था, जब पांचवीं बार भी इस घर की बीमार और बूढ़ी-सी लगनेवाली औरत ने बच्ची को जन्म दिया था. उसके पैदा होने का सारा दोष उसी के ऊपर मढ़ा गया था, कि यह डायन उनके पुत्र को खाकर उनके घर में ज़बरदस्ती पैदा हो गयी थी. एक बार उसे डायन मान लेने के बाद जन्म से ही उसे भूखा-प्यासा

रखा जाने लगा था; ताकि किसी दिन वह भूख-प्यास से तड़प-तड़पकर मर जाए. मां-बाप उसे गोदी में नहीं उठाते थे और मां-बाप के डर से चारों बच्चियां भी उसे छूते हुए डरती थीं. परन्तु वह बच्ची भी बड़ी ढीठ थी. अपने मां-बाप और बहनों की उपेक्षा के बावजूद वह जिन्दा रही और बेशरमी के साथ बड़ी होती रही और अब तो वह इतनी बड़ी हो गयी थी कि वह अपने प्रति होनेवाले भेदभाव को समझने लगी थी. अपने प्रति घरवालों की घृणा और आक्रोश को पूरी तरह से महसूस करती थी. वह जानती थी कि घर का कोई भी व्यक्ति उसे जिन्दा देखना पसंद नहीं करता था, परन्तु प्रत्यक्ष रूप से वह उसे मार भी नहीं पा रहे थे. सामाजिक प्रताड़ना, बहिष्कार, लांछना और कानूनी पंजे से उनको डर लगता था. यह भय अगर उनके मन में नहीं होता तो वह बच्ची कब की महाप्रयाण पर कूच कर गयी होती और किसी को अफसोस भी नहीं होता.

उसकी बड़ी बहनें सारा दिन घर में रहते हुए उससे चौका-बर्तन और झाड़ू-पोंछा का काम करवाती थीं और बात-बात पर उसे पीटतीं रहती थीं. जब वह दर्द से कराहती और रोने लगती तो बाकी सारी बहनें हंसती रहतीं. छोटी बहन के आंसुओं से बड़ी बहनों को असीम सुख प्राप्त होता था.

वह छोटी बच्ची, जो अब पांच साल की हो गई थी, हैरत भरी नज़रों से अपने आसपास होनेवाली घटनाओं को बड़े गौर से देखती, अपने घर के लोगों की हरकतों पर गौर करती और उसकी आंखें फैलकर रह जातीं. उसकी समझ में न आता कि उसके मां-बाप किसी अजन्मे बालक को लेकर रात दिन चिन्ताग्रस्त रहते थे, परन्तु जो सजीव उनके घर में भूखे-नंगे रहकर पल-बढ़ रहे थे, उनकी तरफ़ उनका ध्यान नहीं जाता था. वह अक्सर बातें करते हुए कहते थे कि उनके बाद उनका वंश कौन आगे बढ़ाएगा. बहुत दिनों तक तो उस बच्ची की समझ में यह नहीं आया कि कौन से वंश की वह बातें करते थे और यह वंश कौन सी बला होती है, जिसको चलाने और आगे बढ़ाने के लिए किसी बालक की ज़रूरत होती है. यह तो बहुत बाद में, जब वह काफी बड़ी हो गयी थी, उसे पता चला था कि वंश क्या होता है और तब उसकी समझ में नहीं आया था कि उसके मां-बाप के पास ऐसी कौन सी रियासत थी, कौन सी ज़मीन-जायदाद थी, कौन सी सल्तनत या राज्य था, जिसकी देखभाल और सुरक्षा के लिए उन्हें राजकुमार के रूप में किसी उत्तराधिकारी की आवश्यकता थी? खैर, इस बात को अभी हम यहीं छोड़ देते हैं, क्यों हम तो अभी उसके बचपन में ही खड़े हैं.

तो हुआ कुछ ये कि पांच साल की बच्ची का अभी तक कोई नाम रखा गया था, जबकि उसकी सभी बड़ी बहनों के नाम थे और वह अपने नामों को लेकर ही नहीं अपने रंग-रूप को लेकर हरदम इतराती रहती थीं और छोटी बहन को ताने मारती रहती थीं, “तू तो पता नहीं, कहां से उठाकर लाई गयी है. तू मेरी बहन थोड़े है. कैसी तो काली-कलूटी है. हम लोगों का रंग देख, कैसा चांदनी सा निखरा है.” यह बात सबसे बड़ी बहन कहती थी और उससे छोटी तीनों खिलखिलाकर हंस पड़ती थीं. चारों बहनों में अपनी छोटी बहन के प्रति दुर्भाव स्वाभाविक रूप से नहीं आया था, यह परिस्थितिजन्य था. चूंकि मां-बाप उसे अनचाही संतान मानकर चल रहे थे और उसकी उपेक्षा करते थे, इसीलिए वह बाकी बहनों की भी उपेक्षा और नफरत का शिकार होती रही. हालांकि सच तो ये था कि उसकी बड़ी बहनें भी अपने मां-बाप की प्रताड़ना और अत्याचार का शिकार होती थीं, परन्तु उनका दुख छोटी की तुलना में कम था, क्योंकि पांचवीं बच्ची के रूप में पुत्र न होने का सारा आक्रोश सबसे छोटी वाली को ही झेलना पड़ता था. दरअसल जहां बच्चों की चाहत में अनचाही लड़कियों का जन्म एक के बाद एक होता रहता है, वहां लड़कियों की स्थिति बहुत बुरी होती है. वह मां-बाप द्वारा तो सतायी ही जाती हैं, दूसरों की उपेक्षा और नफरत का भी शिकार होती हैं.

उसके मां-बाप ने उसका कोई नाम तो नहीं रखा, परन्तु बात-बात पर उसे डायन अवश्य कहते थे. उसकी बड़ी बहनें भी उसे डायन कहने लगी थीं, परन्तु कुछ बड़ी होने पर उसका नाम किसी ने कल्लो कलूटी कह दिया और तब से यहीं उसका अघोषित नाम हो गया था...डायन और कल्लो कलूटी. पास-पड़ोस की औरतें भी उसे कल्लो कलूटी कहने लगे थे.

परिवार की सारी उपेक्षा और घृणा के बावजूद वह बड़ी होती रही. कहते हैं, जो पौधा प्रकृति की विपरीत परिस्थितियों का सामना करता है, वह अधिक मजबूत होता है. कल्लो कलूटी ने अपने परिवार की उपेक्षा सही थी, मां-बाप का अत्याचार झेला था, बहनों की मार सही थी, अतः वह शरीर से ही नहीं, मन से भी बहुत दृढ़ हो गयी थी. उसके मन में यह धारणा बन गयी थी कि इस घर में सभी उसके सगे तो हैं, परन्तु कोई उसका अपना नहीं है, कोई उसे प्यार नहीं करता है, परन्तु इन्हीं लोगों के बीच में रहकर उसे अपने लिए कोई रास्ता बनाना है, जीवन को जीने का, आगे बढ़ने का. पांच साल की छोटी उम्र में ही वह दस साल की बच्ची की तरह समझदार हो गयी थी. वह चुप रहती थी, परन्तु अंदर ही अंदर कुछ न कुछ गुनती रहती थी.

जैसे-जैसे उसकी बहनें बड़ी हो रही थी, मां उन्हें अपने साथ काम पर ले जाने लगी थी. वह चूंकि अभी छोटी थी, काम पर नहीं जाती थी. घर में रहती या पड़ोस में खेलती, कोई उसे देखने, सुनने या कुछ कहने वाला नहीं था. यह क्षण उसके बचपन के सबसे सुखद क्षण थे और इन्हीं सुख के छोटे-छोटे कतरों के सहारे वह अपने बड़े दुख भूल जाती थी. यहीं पल उसे जीवन में आगे बढ़ने का हौसला प्रदान करते और ढेर सारे सपने देखने लगती.

बहनें जब शाम को घर लौटकर आती थीं, तो आपस में ढेर सारी बातें करती थीं. अपने-अपने अनुभव सुनाती थीं. हालांकि अपनी बातों में वह छोटी को शामिल नहीं करती थीं, परन्तु छोटीवाली बड़ी होशियारी से उनके आसपास रहकर ध्यान से उनकी बातों को सुना करती थी. उनकी बातों से कल्लो को पता चला था कि वे चारों बड़े लोगों की कोठियों और बंगलों में झाड़ू-पोंछा, बर्तन-कपड़े धोने का काम करती थीं. मां भी यहीं काम करती थी.

बाप पता नहीं क्या करता था, क्योंकि वह बहुत कम बोलता था, जैसे चिन्ता के भारी बोझ से दबा हुआ हो. कभी-कभी मां के साथ उसकी झड़प होती थी, झगड़ा बढ़ जाने पर बात मार-पीट तक पहुंच जाती थी. पहले जब उसका बाप मां को पीटता था और घर में एक डरावना माहौल पसर जाता था, उसकी बहनें तो किसी कोने में छिप जाती थीं और वह डरकर रोने लगती थी. परन्तु अब ऐसी बात नहीं थी. कल्लो ने अपने दिल को पत्थर बना लिया था. घर की किसी घटना-दुर्घटना से उसे कोई परेशानी नहीं होती थी, किसी प्रकार का भय उसके मन में नहीं उपजता था. वह बड़े ही शांत भाव से घर से बाहर खेलने के लिए चली जाती थी, क्योंकि घर में भी उसकी कोई अहमियत नहीं थी. कोई उसे पूछता नहीं था, प्यार नहीं करता था, फिर वह घर में किसकी तरफ आशाभरी नज़रों से देखती और अपने लिए किसी सुख की कामना करती.

कल्लो का दिन भर घर में अकेले रहना और पड़ोस के बच्चों के साथ खेलना उसकी मां को फूटी आंख न सुहाता. हर शाम को घर में आते ही कोहराम मच जाता. मां उसके ऊपर झल्लाते हुए चीखने लगती, “अरी मरी, सारा दिन कहां मरती-फिरती है. कह के गयी थी कि बर्तन धो लेना, घर में झाड़ू मार देना, कपड़े समेटकर रख देना; परन्तु एक भी काम नहीं किया. यह कलूटी मेरी जान लेकर रहेगी. पता नहीं कहां से मेरे घर में आ मरी?” भूरी चिल्लाती रहती और ऐसी स्थिति में कल्लो अगर उसकी पकड़ में आ जाती तो दस-बीस धौल पर पड़ ही जाते, परन्तु

अब कल्लो काफी होशियार हो गयी थी. मां से वह बीस कदम दूर ही रहती कि मौका पड़ते ही वह भाग निकले और मां की पकड़ में न आए. कम से कम तब तक, जब तक उसका गुस्सा शांत नहीं हो जाता या वह किसी अन्य काम में व्यस्त नहीं हो जाती. फिर भी उसकी किस्मत इतनी खराब थी कि सोते-सोते भी किसी-न-किसी बात पर उसे दो-चार धौल या तमाचे पड़ ही जाते.

दूसरी तरफ़ बड़ी बहनें जब काम पर से लौटतीं, तो ऐसे व्यवहार करतीं, जैसे कोई बड़ा इनाम जीतकर आई हैं और वह राजकुमारी की तरह ज़मीन के बिस्तर को ही मखमली गद्देदार बिस्तर समझकर लेट जातीं. उनको मां भी कुछ न कहती और शाम का सारा काम कल्लो को ही निपटाना पड़ता.

एक दिन सुबह-सवेरे जब घर के सभी लोग चाय के साथ टोस्ट खाकर काम पर जाने की तैयारी कर रहे थे, वह उनींदा सी बैठी थी, तभी उसकी मां ने उसके पास आकर कर्कश स्वर में कहा, “मरी, चल उठ, काम पर चल. घोड़ी हो गयी है, तेरे लिए कौन कमाकर लाएगा. अपना कमा, अपना खा.”

कलूटी ने अपनी बड़ी-बड़ी आंखों से हैरतअंगेज़ नज़रों से अपनी मां को देखा. उसके चेहरे में उसकी आंखें ही आकर्षक थीं, जो उसके चेहरे के अनुपात से बड़ी थीं और काले चेहरे पर बिल्लीरी आंखों की तरह चमकती थीं. जो भी उसे देखता, उसकी आंखों में खोकर रह जाता. गनीमत थी कि बदसूरत चेहरे में आंखें खूबसूरत थीं.

“ऐसे क्या देख रही है? सारा दिन मटरगस्ती करती रहती है. घर का कोई काम नहीं करती. किसी घर में लगा दूंगी तो काम करेगी, वरना यूँही हमारे छाती पर मूंग दलती रहेगी. चल उठ.”

कलूटी के दिन में पता नहीं कहां से इतने साहस का संचार हुआ कि वह बोली, “मां, मैं काम पर नहीं जाऊंगी. मैं पढ़ने जाऊंगी.” पढ़ने का विचार उसके मन में कहां से आया था, यह तो तब वह भी नहीं जानती थी. यह तो अचानक ही उसके मुंह से निकल गया था और उसे खुद आश्चर्य हुआ था कि इतनी हिम्मत के साथ वह अपनी मां के सामने कैसे दिल में छिपी हुई इस भावना को व्यक्त किया था. उसके घर में तो क्या पूरे अड़ोस-पड़ोस में भी पढ़ने-लिखने का कोई माहौल नहीं था. उसने किसी को बस्ती में पढ़ते-लिखते नहीं देखा था, फिर यह इच्छा उसके मन में कैसे आई, यह तो वह खुद भी नहीं जानती थी. क्या पता उसके अंदर कोई और छिपा बैठा था, जो उसको ऐसा करने के लिए मज़बूर कर रहा हो.

उसकी बात सुनकर मां का मुंह खुला का खुला रह गया. इतना बड़ा अचंभा. ..उसकी बेटी पढ़ने की बात कर रही थी. ऐसा तो उसके घर-परिवार, मायके और ननिहाल में कभी नहीं हुआ था. यह उनके घर में कैसी अनोखी बेटी पैदा हो गयी थी, जो पढ़ने की बात कर रही थी. पढ़ भी लेगी तो क्या कर लेगी. इस बस्ती की सभी औरतें झाड़ू-पोंछा और बर्तन का ही काम करती हैं. यही उनका नसीब है. इसके सिवा न तो उन्होंने कुछ और जाना है, ना समझा है और न करना जानती हैं. मर्द मज़दूरी करते हैं, इक्का-दुक्का, सब्जी के टेले लगाते हैं और कुछेक पान-बीड़ी-सिगरेट आदि का खोखा लगाते हैं. इसके सिवा वह और क्या कर सकते हैं, परन्तु...

परन्तु यह अनोखी लड़की पढ़ने की बात कर रही है. रेत में घास उगाने की बात कर रही है. क्या इसका दिमाग खराब हो गया है या यह पैदाइशी पागल लड़की है. एक तो काला रंग लेकर पैदा हुई, दूसरे दिमाग से भी पैदल है. हाय राम! क्या होगा इस लड़की का. इसका बाप वैसे भी ताने मारता रहता है कि यह उसके खून से पैदा नहीं हुई है, मैं किसी हब्सी के पास सोने चली गयी थी. इसके कारण कितने लांछन झेलने पड़ रहे हैं. पड़ोसनें भी गाहे-बगाहे चुटकी लेती रहती हैं कि बेटे की चाह में किसी पराये मर्द से अपना मुंह काला करवा बैठी. अब मैं किस-किस को सफाई देती फिरूं? अब यह ग़जब कर रही है. इसे पढ़ने भेजा, तो सबकी जुबान के ताले खुल जाएंगे. बोल-बोलकर मेरा जीना हराम कर देंगे.

सोचते-सोचते उसकी मां का दिमाग झन्ना गया और उसने आव देखा न ताव, झन्न से एक तमाचा कलूटी के बाएं गाल पर जड़ दिया. उसकी हथेली में दर्द की एक पीड़ा उठी, परन्तु कलूटी के चेहरे पर शिकन तक न आई. वह पत्थर की तरह जड़ बैठी रही, हिली तक नहीं, जैसे तमाचे का उसके गाल पर कोई असर न हुआ हो, बस एक बार आंखें उठाकर मां की तरफ़ देखा और स्थिर स्वर में बोली, “चाहो, तो मुझे मार डालो, पर मैं किसी के घर में काम करने नहीं जाऊंगी. मैं पढ़ने जाऊंगी. मुझे स्कूल में भर्ती करवा दो.”

कल्लो की बात खतम होते ही जैसे अचानक विजली चमक गयी हो, उसकी मां भूखी शेरनी की तरह उसके ऊपर दोहत्थड़ चलाने लगी. कल्लो एक पल के लिए तो हतप्रभ रह गयी, परन्तु फिर दूसरे ही क्षण सामान्य हो गयी. मां का दोहत्थड़ चलता रहा और वह निश्चल, अडिग बैठी रही. उसका शरीर नहीं, मन आहत हो रहा था और जब मन आहत होता है तो किसी को दिखाई नहीं पड़ता.

दोहत्थड़ के साथ-साथ उसकी मां की जुबान भी चलती जा रही थी, “ले पढ़, पढ़ने का तुझे बहुत शौक है, तो मेरी किस्मत पढ़, अपनी काली किस्मत पढ़. इस घर की ग़रीबी पढ़, तुझे पता चल जाएगा कि हमारे जीवन में कितनी मुसीबतें हैं, कितने अंधेरे हैं, जो दिया जलाने के बाद भी दूर नहीं होते. चल, तुझे अभी मदरसे में भरती करके आती हूं. इतनी छोटी है, परन्तु ख़ाब ऐसे देख रही है, जैसे कहीं की राजकुमारी है.”

भूरी उसे मारते-मारते ही घसीटते हुए बाहर ले गयी और ले जाकर एक बड़े घर की चौखट पर पटक दिया. इसके बावजूद कल्लो की आंख में आंसू की एक बूंद न आयी. वह निर्विकार और मृतभाव से घिसटती हुई मां के साथ चली गयी. घर की मालकिन ने दरवाजा खोला तो भूरी ने फूली हुई सांस के साथ कहा, “लो जी मैडम, ले आई इसे. आपके घर का सारा काम करेगी.”

तथाकथित मैडम ने आश्चर्य से उस छोटी-सी लड़की को देखा और फिर भूरी की तरफ़ अविश्वास की निगाहों से देखते हुए कहा, “यह तो बहुत छोटी है?”

“अरे, मैडम, छोटी कहां है. पूरे छह साल की हो गयी है. घर के सारे काम जानती है. आप काम करवा के तो देखो.”

“मैंने सोचा, बड़ी होगी?” मैडम को अभी भी विश्वास नहीं हो रहा था.

“मैडम, बड़ी लड़कियां मिलती कहां हैं. सारी कहीं न कहीं काम करती हैं. यह मेरी छोटी बेटी है. पहली बार आपके घर लाई हूं.”

मैडम ने अब गंभीर वाणी में कहा, “देखो भूरी, रखने को तो मैं रख लूंगी, परंतु इतनी छोटी बच्ची से घर के काम करवाना अत्याचार है. तुम इसे किसी स्कूल में क्यों नहीं डाल देती?”

भूरी उपेक्षित भाव से हंसी, “मैडम, आप भी अनहोनी की बातें कर रही हैं. यहां तो खाने के लाले पड़े रहते हैं और आप इसे स्कूल भेजने की बात करती हैं. कॉपी किताब और कपड़े-लत्तों का खर्चा कौन देगा?”

“शायद तुम्हें पता नहीं है. सरकारी स्कूलों में ग़रीब बच्चों को मुफ्त शिक्षा और कॉपी-किताबें दी जाती हैं. दोपहर का खाना भी मिलता है.”

“दिन में एक बार खाने से क्या कोई चौबीस घंटे भरे पेट रह सकता है. दुबारा उसे भूख नहीं लगेगी?” भूरी ने कहा. मैडम निरुत्तर रह गयीं.

मैडम और अपनी मां की बातें सुनकर कल्लो को लगा कि मैडम दयालु स्वभाव की हैं. उसने तय किया कि इसी घर में रहेगी. हो सकता है, मैडम उसके पढ़ने

की कुछ व्यवस्था कर दें. कुछ देर की बहस के बाद आखिर मैडम ने कल्लो को अपने घर में रखने का निश्चय कर लिया. कल्लो मन ही मन बहुत खुश हुई, परन्तु ऊपर से उसने कुछ ज़ाहिर नहीं किया.

मैडम सचमुच दिल की बहुत अच्छी थीं. पहले दिन उन्होंने कल्लो से कोई काम नहीं लिया, बस उसको अपने साथ-साथ रखा और बातों-बातों में बताती रहीं कि उसे क्या-क्या करना होगा. कल्लो ध्यान से उनकी बातों को सुनती रही और मन ही मन खुश होती रही. पहली बार कोई प्यार और स्नेह से उसके साथ बात कर रहा था. काश, उसकी मां भी ऐसी होती. उसने मन में सोचा.

मैडम को यह जानकर आश्चर्य हुआ कि कल्लो तक अभी कोई नाम नहीं रखा गया था. उन्होंने कुछ सोचकर कहा, “तुम्हारा नाम कल्लो की जगह अगर रजनी कर दिया जाये तो कैसा रहेगा?”

कल्लो खुश होकर बोली, “आप जैसा समझो, मुझे क्या पता?”

“हां, यही नाम ठीक रहेगा. घर में हम तुझे रज्जो कहकर बुलाया करेंगे.”

कल्लो ने सबकुछ स्वीकार कर लिया.

दोपहर के तीन बजे के लगभग मैडम की आठ वर्षीया लड़की स्कूल से लौटकर आई. कल्लो उसे देखकर बहुत खुश हुई. उसे लगा, इसके साथ वह पढ़ाई कर सकती थी. कुछ ही पलों में दोनों में दोस्ती हो गयी. कल्लो को बहुत आश्चर्य हुआ कि उसकी सगी बहनें उससे नफ़रत करती हैं, और यह परायी गोरी-चिट्ठी, खूबसूरत गुड़िया-सी बड़े घर की लड़की एक पल में ही उसकी दोस्त बन गयी. उसके साथ बैठने, खेलने में उसे कोई संकोच नहीं हो रहा है. उसके हाथ का छुआ भी वह बड़ी खुशी से खा रही थी.

शाम को भूरी कल्लो को लेने आई, तो मैडम ने कहा, “भूरी, अगर तुम्हें एतराज न हो तो कल्लो को यही रहने दो. मेरे बेटी को उसका साथ मिल जाएगा. दोनों साथ मिलकर रहेंगी.”

भूरी ने एक पल सोचा, उसे कोई एतराज नहीं था. घर में लड़कियों की कमी कहां थी जो वह उनको प्यार और स्नेह देने के लिए तरसती. उसका तो बोझ ही कम हो रहा था. कुछ सोचकर उसने कहा, “आप चाहती हैं, तो मुझे कोई एतराज नहीं है; परन्तु मैडम, पैसे डबल देने पड़ेंगे.”

“पैसे तू जो कहेगी, दे दूंगी.”

इस तरह कल्लो उर्फ रज्जो, मैडम के घर में रहने लगी. उस घर में पति-पत्नी और उनकी छोटी बच्ची के अलावा और कोई नहीं था. बड़ा खुशहाल परिवार था. उनके घर में कभी कोई लड़ाई-झगड़ा, मारपीट नहीं होती थी. कोई ऊंची आवाज़ में बात तक न करता था. रज्जो को बहुत आश्चर्य होता कि उसके अपने घर और इस घर में कितना अंतर है. क्या जहां गरीबी होती है, वहीं लड़ाई-झगड़े होते हैं. रज्जो इस सबको समझने के लिए अभी बहुत छोटी थी.

उस घर में रज्जो के दिन बहुत अच्छे गुजरने लगे. मैडम उससे बहुत हल्के-फुल्के काम लेती थीं. हमेशा प्यार से बोलती थीं. उनके व्यवहार के कारण ही रज्जो उनसे पूरी तरह खुल चुकी थी और कभी-कभी उसके ऊपर घर में होनेवाले अत्याचारों का जिक्र करती थीं, तब मैडम भी बहुत दुखी हो जाती थीं. मैडम की बेटी पिंगी उसके साथ खेलती और रात में उसी के साथ सोने की जिद्द करती, हांलाकि मैडम ने यह बात नहीं मानी. दोनों को हमेशा अलग-अलग बिस्तर पर सुलाया. हां, दोनों एक ही कमरे में सोती थीं.

रज्जो ने एक दिन मैडम से पढ़ने की इच्छा जाहिर की तो वह खुद उसे पढ़ाने लगीं. पिंगी भी उसे कुछ न कुछ बताती रहती थी. इस तरह उसे अक्षर-ज्ञान प्राप्त हो गया. उसकी कुशाग्र बुद्धि देखकर मैडम भी दंग थी. वह कीचड़ में कमल के फूल के समान थी.

उस घर में रहते हुए रज्जो उस घर की एक सदस्य की तरह हो गयी. उसके जीवन के दुःस्वप्न में यह एक छोटा सा ब्रेक था, जिसकी यादें हमेशा उसके जेहन में ताजा रहेंगी.

महीना पूरा होते ही भूरी मैडम के घर पैसा लेने आ धमकती. पैसा लेती और चली जाती. पता नहीं किस हाड़-मांस की बनी औरत थी वह. उसके शरीर में मां का दिल था भी या नहीं, वह स्वयं नहीं जानती थी. कभी कल्लो उर्फ कल्लो के बारे में शब्द न बोलती, मरती है या जीती? कैसे रह रही है, उसका मन लगता है या नहीं, काम ढंग से करती है या नहीं. कुछ भी नहीं पूछती वह. ऐसी कठोर हृदय मां को रज्जो भी क्या मान-सम्मान देती. वह उसके सामने ही नहीं पड़ती थी.

एक बार मैडम ने कहा, “भूरी, तू आती है और पैसे लेकर चली जाती है. कभी रज्जो के बारे में नहीं पूछती. एक बार मिलकर उससे दो शब्द प्यार के बोल दे, उसका मन भी खुश हो जाएगा.”

“क्या करूंगी मिलकर, मैडम, आपके यहां है तो ठीक ही होगी. मेरी जान को तो बाकी और चार लड़कियां हैं. सोचकर जान सूखती रहती है कि कैसे इनका शादी ब्याह होगा. उनको देखकर ही तो मेरी जान सूखती है.”

मैडम कुछ कह न सकी और भूरी बौरायी-सी चली गयी. कई महीने बीत गये.

एक बार जब भूरी मैडम के घर पैसे लेने के लिए पहुंची तो मैडम घर पर नहीं थीं. घर पर अपनी बेटी पिंगी और रज्जो को छोड़कर वह कुछ लेने के लिए बाज़ार गयी थीं. दरवाजा रज्जो ने खोला, पीछे पिंगी खड़ी थी. एक नज़र रज्जो पर डालकर वह पिंगी से बोली, “बेटी, मम्मी है?”

“नहीं, वह तो बाज़ार गयी है, शाम तक आएंगी.” पिंगी ने बताया.

“ओह!” भूरी ने ऐसे प्रकट किया जैसे उसका बहुत बड़ा नुकसान हो गया था. फिर रज्जो को देखकर उसके भाव बदल गये. वह नए कपड़े पहने थी. गुस्से में बोली, “बड़ी चटक-मटक कर रही है. पिंगी के कपड़े जबरदस्ती पहने हैं? चल उतार जल्दी से, वरना मैडम से पिटवाऊंगी.” उसने रज्जो को पकड़ने का उपक्रम किया जैसे अभी-अभी बदन से कपड़े उताड़ फेकेगी.

पिंगी ने प्रतिवाद किया, “आंटीजी, यह कपड़े तो मेरी मम्मी ने रज्जो को दिए हैं. उसने मेरे कपड़े नहीं पहने हैं.”

मैडम के आने पर भूरी ने शिकायत की, “मैडमजी, आप मेरी बेटी को बिगाड़ रही हैं.”

“कैसे, क्या हुआ?” मैडम ने हैरत से पूछा.

“उसे अच्छा खाने को देंगी, अच्छे-अच्छे कपड़े पहनने को देंगी, तो उसका दिमाग खराब हो जाएगा. आपके रहन-सहन की बराबरी हम कैसे कर सकते हैं. बड़ी होने पर आप लोगों की तरह ऊंचे-ऊंचे ख़्वाब देखेगी, तो हम उसके लिए पढ़ा-लिखा नौकरी वाला मरद कहां से लाएंगे. हमारी विरादरी में तो मरद भी अनपढ़-गंवार और मज़दूर होते हैं.”

“कैसी मां हो तुम, भूरी.” मैडम ने गुस्से से कहा, “तुम अपनी ही बेटी की दुश्मन बनी बैठी हो. मेरे घर में रहकर अगर वह अच्छी बातें सीख रही है, तो इसमें कौन-सी बुराई है. जीवन को सही तरीके से जीने का हक तो सबका है, तुम्हारा भी. अच्छा जीवन जीने से हमारी सोच अच्छी होती है. भूरी, ज़माना बदल रहा है. कल को हो सकता है, तुम्हारी विरादरी में भी लड़के पढ़े-लिखे होने लगे. हमेशा एक जैसे हालात नहीं रहते.”

“ये सब मैं नहीं जानती, मैडम! पर इसे थोड़ा दबाकर रखना, पूरा काम लेना. कल को राजरानी बनकर मेरे सिर पर आकर बैठ गयी, तो हम कैसे झेलेंगे.”

“वैसी नौबत नहीं आएगी.” मैडम ने कहा और भूरी को पैसे देकर चलता किया. पता नहीं कैसी मां है ये, जो अपनी ही बेटी का सुख फूटी आंखों नहीं देख सकती.

मैडम का प्यार और स्नेह पाकर रज्जो उस घर में इस तरह हिल-मिल गई थी, जैसे वह उनकी सगी बेटी हो. पंकी को वह दीदी कहती थी और हर वक्त उसी के साथ चिपकी रहती थी. पंकी ने उसे लिखना सिखा दिया था और अब वह पुस्तक पढ़ने लगी थी. पढ़ाई के प्रति उसकी लगन और उत्साह देखकर मैडम ने ढूंढकर पंकी की नर्सरी की पुस्तकें दे दी थीं और समय निकालकर स्वयं उसे पढ़ाने बैठ जातीं.

रज्जो घर के काम भी बड़े उत्साह से करती. हालांकि मैडम उससे भारी काम नहीं करवाती थीं, परंतु रज्जो मैडम को जो काम करते देखती, वहीं करने लगती, और थोड़े से प्रयास के बाद कर भी लेती. उसने मैडम का दिल जीत लिया था.

एक दिन उसने मैडम से कहा, “आंटीजी, क्या मैं स्कूल नहीं जा सकती?”

मैडम ने चौंककर रज्जो के मुखड़े को देखा. उसके चेहरे पर चमक थी, आंखों में अद्भुत चमक थी. मैडम को उसकी आंखों में दिव्य चमक दिखाई दी, जैसे किसी देवी की आंखें आशीर्वाद देने के लिए भक्त को देख रही हों. रज्जो में कुछ तो अलग है, यह आम लड़की नहीं है. तुरंत वह कुछ न कह पाई और रज्जो के मुख से निगाह हटाकर दूसरी तरफ देखने लगी.

शायद आण्टीजी नाराज़ हो गयी हैं, सोचकर रज्जो वहां से हट गयी.

मैडम ने पता नहीं रज्जो में क्या देखा कि उनके अंदर ममत्व की अजस्र धारा बह निकली. रात में बात करके दूसरे दिन सुबह ही पास के सरकारी स्कूल में रज्जो का नाम लिखवा दिया. रज्जो बहुत खुश हुई. उसके कच्चे मन में मैडम के प्रति श्रद्धा और सम्मान की एक पुख्ता नींव पड़ गयी.

परंतु भाग्य का देवता कहीं हंस रहा था. संयोग का राक्षस किसी कोने में खड़ा साजिश रच रहा था, दुर्भाग्य गरीब का कभी पीछा नहीं छोड़ता. ऐसे लोग बिरले होंगे, जो गरीबी के मजबूत पंजों से आज़ाद होकर जगमगाते महलों की सीढ़ियां चढ़कर सुख और समृद्धि के शिखर पर पहुंचे होंगे. यहां तो रज्जो की मां ही उसका दुर्भाग्य बनकर उसके ऊपर काली बदली की तरह छाई थी.

भूरी से यह बात कैसे छिपी रहती. जैसे ही पता चली, वह मैडम के ऊपर राशन-पानी लेकर चढ़ दौड़ी, “अजी, मैंने बेटी काम करने के लिए दी थी, गोद नहीं दी थी कि आप उसको पढ़ा-लिखाकर अपने जैसा बनाने लगीं. वह कामवाली की लड़की है, कहीं की राजकुमारी नहीं, रहने दीजिए, वह आप के घर में बिगड़ जाएगी. मैं ले जाती हूं.” और मैडम के लाख समझाने के बावजूद कोई बात भूरी की समझ में नहीं आई. वह रोती-चीखती कल्लो उर्फ रज्जो को खींचती हुई घर ले आई और एक कोने में गिराकर उसे लात-घूसों से मारने लगी.

“तू वहां पढ़ने गई थी कि काम करने. पढ़कर कलेक्टरनी बनेगी, तो तेरे लिए खसम कहां से लाएंगे.” लानत और मलामत, लात और घूंसे...क्या यही किस्मत है इतनी छोटी कल्लो की? किसे पता है? नाम बदलने से क्या होता है, परंतु...अब हम कल्लो को रज्जो के नाम से ही पाठकों के समक्ष लाएंगे.

रज्जो का कच्चा मन, कच्चे घड़े जैसा टूट गया. मां की ममतामयी छवि बिखर गई. बाप और बहनें सब उसके लिए पराये हो गये. उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि उसे क्या करना है, परंतु वह वहां से भाग जाना चाहती थी. कहां जाएगी, इसका उसे कुछ पता नहीं था, परंतु वह इतना जानती थी, कि जहां भी जाएगी, उसकी क्रूर मां नहीं होगी, दुष्ट बाप नहीं होगा, और हर पल उसे सताने वाली बहनें नहीं होगी. उसके बालमन पर भविष्य की परेशानियों का कोई चिह्न नहीं था. उसकी आंखों के पर्दे पर वर्तमान के कष्ट, पीड़ा और दुखों के चित्र आ-जा रहे थे. इनसे वह बहुत दूर जाना चाहती थी.

उसी रात वह अपने घर से भाग गयी. उसे पता नहीं था, कहां जाना है? किसी अन्य शहर के बारे में भी उसे कोई जानकारी नहीं थी. बस, ट्रेन से कैसे यात्रा की जाती है, उसे पता नहीं था. वह उसी शहर के गली-मुहल्लों और सड़कों पर भटकती रही. किसी की निगाह भी उसके ऊपर नहीं पड़ी; परंतु अगले दिन सारा दिन भटकने के बाद जब वह भूख-प्यास से तड़पने लगी तो एक जगह बैठकर रोने लगी. तभी लोगों ने उसकी तरफ ध्यान दिया. उसके आसपास इकट्ठा होकर जानकारी लेने लगे. उसका नाम पता पूछा. तब वह डरकर चुप हो गयी. बाल बुद्धि में तुरंत यह बात आ गयी, अगर उसने अपने बारे में कुछ बताया, तो ये लोग तुरंत उसे उसके मां-बाप के पास पहुंचा देंगे. वह मर जाएगी, परंतु वहां नहीं जाएगी. उसने चुप्पी साध ली. लोगों ने उसे गूंगी समझा और उसे पुलिस के सुपुर्द कर दिया गया. पुलिस थाने में भी वह चुप्पी साधे रही. पुलिस वालों ने अपने स्तर पर छानबीन की. शहर

के किसी थाने में किसी लड़की के गायब होने की सूचना दर्ज नहीं की गई थी, अतः पुलिस ने लावारिस समझकर रज्जो को शहर को एक सरकारी अनाथालय में भेज दिया.

अनाथालय पहुंचकर उसने अपनी जुबान खोली. वहां उसने अपना नाम रजनी बताया, परंतु घर के बारे में कुछ नहीं बताया...कहां की रहने वाली थी, मां-बाप का क्या नाम था, कुछ भी नहीं बताया.

वह अनाथालय में रहकर पलने-बढ़ने लगी. वहां पढ़ाई की सुविधा थी. काम तो करने पड़ते थे, परंतु उसने पढ़ाई की तरफ अतिरिक्त ध्यान दिया. वह हर कक्षा में अच्छे नंबर लेकर उत्तीर्ण होती रही. समय के साथ उसकी कद-काठी में बढ़ोतरी हो रही थी. बचपन कब बीत गया, उसे भी पता नहीं चला. किशोरावस्था में कदम रखते ही उसके बदल में निखार और बदलाव आने आरंभ हो गए. उसके स्वभाव में भी परिवर्तन आ गया. शरीर में होने वाले परिवर्तनों से उसने महसूस किया, अनाथालय में काम करने वाले कर्मचारी उसके शरीर को घूर-घूरकर देखने लगे थे. उससे बड़ी लड़कियों से तो वह हंसी-मज़ाक और भद्दे इशारे भी करते थे.

धीरे-धीरे उसने देखा कि अनाथालय की जवान लड़कियों को वहां की महिला कर्मचारी कहीं भेजती हैं. वह रात-रात भर गायब रहती हैं; सुबह थकी-हारी सी लौटकर आती हैं और आते ही सो जाती हैं. साथ की लड़कियों से यह बात उसे ज्ञात हो गयी थी कि ये लड़कियां अनाथालय के अधिकारियों को खुश करने के लिए भेजी जाती थीं. कुछ लड़कियों को महिला कर्मचारियों ने देह-व्यापार के धंधे में उतार दिया था और उनके माध्यम से वह अच्छा माल काट रही थीं.

रजनी को अपना भविष्य एक बार फिर से अंधकारमय लगने लगा था. अभी तो वह तेरह-चौदह वर्ष की है. कुछ बड़ी होते ही उसे भी देह-व्यापार के धंधे में उतार दिया जाएगा. हालांकि वह दबे हुए रंग की एक आनाक-रक लड़की थी; परंतु जवानी के उभार हर एक पुरुष को विचलित कर सकते हैं. पुरुष के लिए मात्र लड़की का शरीर रोमांचित करने के लिए काफी होता है.

रजनी इंतज़ार करने लगी, कब उसके ऊपर गाज़ गिरती है. लड़कियां स्वाभाविक रूप से सजने-धजने लगती हैं, जब वह बचपन छोड़कर जवानी की तरफ कदम बढ़ाती हैं, परंतु रजनी स्वाभाव के विपरीत सजने-धजने में कोई रुचि नहीं लेती, ठीक से बाल तक न संवारती, मैले कपड़े पहनती, खाना भी कम खाती; ताकि उसके बदन में निखार न आए. इसका नतीजा ये हुआ कि सोलह वर्ष की उम्र में वह ग्यारह-बारह साल की ही लगती.

उसने दसवीं की कक्षा उत्तीर्ण कर ली. तब तक अनाथालय की महिला कर्मचारियों की उस पर नज़र नहीं पड़ी थी. इसका एक कारण भी था, अनाथालय में लड़कियों की कमी नहीं थी. रजनी से सुंदर और चंचल लड़कियां वहां बहुत-सी थीं, जो स्वेच्छा से कुछ भी करने को तैयार हो जाती थीं. परिस्थितियों के साथ-साथ रजनी के रंग-रूप ने उसका साथ दिया और वह कुपथ पर चलने से बच गयी.

परंतु वह जानती थी कि बकरी की मां बहुत दिनों तक खैर नहीं मना सकती थी. उसे भले ही बाहर किसी की अंकशायिनी बनने के लिए नहीं भेजा जा रहा था, परंतु अनाथालय के पुरुष कर्मचारी उसके साथ छेड़छाड़ करने से बाज़ नहीं आते. एकांत में उसके अंगों को छेड़ देते हैं, उसे पकड़कर चूम लेते और कई तो उसके बदन में सांप की तरह लिपट जाते. वह किसी प्रकार अनुनय-विनय कर बाद में मिलने का वायदा करके चंगुल से बच निकलती; परंतु ऐसे दांव हमेशा उसके काम नहीं आ सकते थे. किसी भी दिन उसकी इज़्ज़त तार-तार हो सकती थी.

एक दिन मौक़ा पाकर अपने कुछ किताबें, कपड़े और हार्ड-स्कूल के प्रमाण-पत्र लेकर वह अनाथालय से भी भाग निकली. यह शहर उसका अपना था, परंतु बहुत बेगाना सा. घर और अनाथालय के बाहर की दुनिया उसने कहां देखी थीं. सड़कें और गलियां अनजान थीं; परंतु उसे अपने मोहल्ले की धुंधली-सी याद थी. मन तो नहीं कर रहा था वहां जाने का, परंतु शहर में उसके लिए कोई ठौर कहां था. मैडम का ख़याल आया, परंतु वह उनका नाम तक भूल चुकी थी. कहां रहती थीं, यह भी याद नहीं. कैसे जाएगी उनके घर. मन मारकर अपने घर की तरफ चल पड़ी. उसे इस बात का संतोष था कि अब वह बड़ी हो गयी है, अतएव मां-बाप और भाई-बहन अब उसके साथ शारीरिक अत्याचार नहीं कर सकते थे.

अनुमान और अपनी छोटी याद्दाश्त के आधार पर उसने अपनी बस्ती और घर ढूंढ़ लिया. उस वक़्त घर पर कोई नहीं था. काम पर गये होंगे. उसे अपने घर की दुर्दशा देखकर बड़ा दुःख हुआ. घर पहले से ज़्यादा टूट-फूट गया था. बस्ती में भी कोई परिवर्तन नहीं आया था. वैसी ही गंदी और बदबूदार थी. शहर में इतना विकास हुआ था, नए-नए मकान बन गए थे, नई बस्तियां बस गई थीं, सड़कें चौड़ी और चमकदार हो गयी थीं, परंतु इस बस्ती की गरीबी में कोई कमी नहीं आई थी.

रजनी को देखकर आस-पड़ोस के लोग इकट्ठा हो गए. नए लोग उसे नहीं पहचानते थे, परंतु कुछ बूढ़ी औरतें और मर्द पहचान गये. जिज्ञासा से पूछने लगे, “कहां थी इतने दिन! तू तो मर गयी थी. तेरे मां-बाप ने सबसे यही कहा था.”

लोगों ने तमाम तरह की बातें उससे पूछीं, परंतु उसने बहुत कम का जवाब दिया. उसने भले ही सबकी बातों का जवाब न दिया हो, परंतु अपने घर के बारे में बहुत सारी बातों का पता उसे चल गया था.

रज्जो की बहनों ने शादी-ब्याह के लिए अपने मां-बाप को कष्ट नहीं दिया था. उन्होंने स्वयं अपने-अपने पति चुन लिए थे और बिना किसी ताम-झाम के उनके साथ रहने लगी थीं. केवल रज्जो से बड़ी बहन कमली ही अपने पति के साथ मां-बाप के यहां रह रही थी.

शाम को सभी आए. कल्लो को देखकर उसकी मां, बाप और बहन आश्चर्यमिश्रित खुशी से भर उठे. कल्लो को पहचानने में उन्हें कोई दिक्कत नहीं हुई. उसका रंग-रूप ही ऐसा था कि वह लाखों लोगों में अलग से दिखती थी. कमली का पति उसे नहीं पहचानता था. थोड़ी देर बाद उसकी समझ में आ गया कि वह उसकी छोटी साली थी. उसी ने गर्मजोशी से उसका स्वागत किया, “कहां गायब हो गयी थी सालीजी?”

कल्लो ने कोई जवाब नहीं दिया, बस मुस्कराकर रह गयी. काफ़ी देर तक किसी ने उससे बात नहीं की, जैसे उसके आने से किसी को खुशी नहीं हुई थी. वह घर से भाग गयी थी और कहीं मर खप गयी थी. यह उन्होंने नियति मानकर स्वीकार कर लिया था. उसके खोने का किसी को गम नहीं था और अब उसके घर लौट आने पर किसी को खुशी नहीं हुई थी.

उसके जीजा को छोड़कर किसी ने उससे नहीं पूछा कि वह घर से क्यों भाग गयी थी, इतने दिन कहां रही थी, और अब घर लौटकर क्यों आई थी?

कल्लो के घर वापसी उतनी सुखद नहीं थी. यहां आकर वह फिर से कल्लो-कलूटी बन गयी थी. कोई भी उसे रज्जो नाम से नहीं पुकारता. इस बात का उसे रंज भी न था. मां-बाप उसकी तरफ से उदासीन थे, बहन थोड़ा-बहुत बात कर लेती; बस उसका जीजा पवन उसके साथ कोई दुर्भाव न करता. वह खुलकर उससे बातें करता और हर वक़्त उसके उदासीन चेहरे को हंसता हुआ देखना चाहता था.

कल्लो बिना कुछ किए उस घर में नहीं रह सकती थी. कोई भी उसे बैठे-बैठे नहीं खिला सकता था, मां-बाप तो बिल्कुल ही नहीं. बहन-बहनोई भी ऐसे कौन से अमीर थे कि उसकी मदद करते. वह पढ़ना चाहती थी, तब तक जब तक कि कुछ बन न जाए. ऐसा कैसे हो सकता था कि वह काम भी करे और पढ़ाई भी करती रहे. कोई न कोई रास्ता निकालना पड़ेगा. करने वालों के लिए कोई काम

मुश्किल नहीं होता, चलने वालों के लिए कोई रास्ता बंद नहीं होता. हौसले बुलंद हों, तो आसमान में उड़ान भरी जा सकती है.

रज्जो ने कुछ सोचकर मां से पूछा, “अम्मा, उन मैडम का घर कहां है, जिनके घर में बचपन में मुझे भेजा था.”

“कौन अचला मैडम.” मां ने कहा, फिर पूछा, “क्यों, तू उनका पता क्यों पूछ रही है?”

रज्जो ने मन की बात बता दी, “उनके पास जाकर पता करती हूं; शायद कोई काम मिल जाए. बैठकर गुजारा नहीं होगा.”

“हूं,” मां ने कुछ सोचने का नाटक किया, “परंतु वह लोग कहीं और जाकर रहने लगे हैं.”

रज्जो को विश्वास नहीं हुआ. उसने मां की तरफ देखा, वह नीचे ज़मीन की तरफ देख रही थी. मां उसके साथ क्यों ऐसा कर रही थी? क्यों उसकी दुश्मन बनी हुई थी. इस घर में पैदा होकर उसने कौन सा अपराध कर दिया है. डायन भी अपने बच्चों के साथ ऐसा नहीं करती. यह तो उसकी सगी मां है.

उसे ही अपने बूते कुछ करना होगा. किसी के घर में महरी का काम उसके बस का नहीं था. तो फिर क्या करे वह? उसकी बस्ती में सारे मज़दूर थे. वह हाई स्कूल पास थी, परंतु उस बस्ती में कोई स्कूल भी नहीं था कि वहां चपरासी का ही काम कर सकती.

सारा दिन वह बहुत उदास रही. शाम को उसका जीजा राजू आया तो उसे गुदगुदाते हुए कहा, “क्या बात है साली जी, उदास क्यों हो?”

राजू स्वयं मज़दूरी करता था. उसको अपनी समस्या बताकर क्या मिलता. लिहाज़ा, वह चुप रही; परंतु राजू चंचल स्वभाव का था. उसने ठान लिया, जब तक साली को हंसा नहीं लेगा, चुप नहीं बैठेगा. वह खोद-खोदकर पूछने लगा, साथ ही शालीन मज़ाक भी करता रहा. हारकर रज्जो को मन की बात बतानी पड़ी.

सुनकर राजू चुप रह गया. मन ही मन कुछ विचार किया, फिर बोला, “मेरा छोटा भाई रामू एक स्कूल में चपरासी है. मैं उससे बात करके देखता हूं, शायद बात बन जाए.”

और बात बन गई. रामू ने स्कूल की प्रधानाचार्य से बात की. संयोग से एक महिला चपरासी की जगह खाली थी. रजनी को उसकी जगह पर रख लिया गया.

इससे उसके मन में अपने जीजा राजू के लिए सम्मान बढ़ गया, वही दूसरी तरफ़ वह रामू के प्रति अहसानमंद महसूस कर रही थी. वह उसके लिए पूजनीय था.

स्कूल में काम करते-करते, रजनी के मन में यह अहसास होता, काश वह आगे पढ़ पाती. वह स्कूल इंटर तक था. उसने अपने मन की इच्छा रामू पर प्रकट की, तो वह बोला, “काम करते हुए तुम कैसे पढ़ सकती हो?”

“कक्षा में बैठकर पढ़ाई नहीं कर सकती, परन्तु व्यक्तिगत परीक्षार्थी के तौर पर परीक्षा दे ही सकती हूँ.”

रामू कुछ पल तक सोचता रहा, फिर बोला, “परन्तु क्या तुम घर पर पढ़ाई कर लोगी.”

“हां, अगर मुझे स्कूल से कोर्स की सामग्री मिल जाए. किताबें तो बाज़ार से खरीद लेंगे.”

“ठीक है, मैं कुछ टीचरों से बात करता हूँ. तुम भी बात करना.”

“हां,”

कुछ रामू के प्रयासों और कुछ स्वयं के प्रयासों से रजनी की बात बन गई. उसने स्वयं प्रिंसिपल मैडम से बात की थी. उन्होंने रजनी से कुछ मौखिक सवाल किये और उसकी कुशाग्रबुद्धि से प्रभावित हुई. उन्होंने उसकी पूरी मदद करने का आश्वासन दिया. यह भी कहा कि इसी स्कूल से उसकी बारहवीं की परीक्षा का फार्म भरवा दिया जाएगा.

रामू आठवीं पास था. रजनी ने उसे प्रोत्साहित किया कि वह भी दसवीं की परीक्षा प्राइवेट स्तर पर दे दे. उसकी रुचि नहीं थी, परन्तु रजनी की बात वह मान गया. इस तरह उसने भी दसवीं का फार्म भर दिया.

दो साल बीत गए और रजनी ने स्कूल की नौकरी करते हुए बारहवीं की परीक्षा पास कर ली. उसने लगभग सत्तर प्रतिशत अंक प्राप्त किये थे. व्यक्तिगत विद्यार्थी के लिए यह एक बहुत बड़ी उपलब्धि थी. स्कूल के अध्यापक ही नहीं, प्रधानाचार्या भी हैरान थीं. रामू भी द्वितीय श्रेणी में पास हो गया था. उसको पढ़ाने में रजनी ने काफ़ी मदद की थी.

दो सालों में छुट्टी को छोड़कर बाकी सभी दिन रामू से उसकी मुलाकात होती थी. साली-जीजा का रिश्ता होने से उनके बीच चुहल और हंसी-मज़ाक आम बात थी. कुछ समय उपरांत रजनी ने महसूस किया कि रामू उसे मीठी निगाहों से देखता है. उसको देखते ही उसके चेहरे पर वसंत के फूल खिल जाते हैं. सुबह की धूप

जैसी नरम मुस्कराहट बिखर जाती है. रजनी उसके भावों को जानकर दुखी हो जाती. उसने बचपन से अब तक किसी का प्यार नहीं पाया था. हर प्यार में उसे खोत नज़र आती. क्या पता रामू भी उसके शरीर के लिए उससे प्यार करने लगा हो. इस दुनिया में स्वार्थ के लिए ही हर काम किए जाते हैं.

रजनी ने एक दिन रामू से कहा, “जीजा, एक बात पूछूँ, साफ़-साफ़ बताना.”

“पूछो,” उसका हृदय धड़कने लगा.

“मैं देख रही हूँ, इन दिनों आप मेरा कुछ ज्यादा ही खयाल रखने लगे हो. मेरी हर बात से चिंतित, परेशान या खुश हो जाते हो. मैं आपकी भावनाएं समझ रही हूँ, परन्तु अगर आपके मन में प्यार जैसा कोई भाव है, तो उसे अपने मन से हटा दीजिए. मेरे जीवन में इसका कोई स्थान नहीं है. मैं शादी करके घर नहीं बसाना चाहती, आगे कुछ करना चाहती हूँ.”

रामू उसकी साफ़गोई से एक पल के लिए हैरान रह गया, “परन्तु रज्जो, प्यार किसी को आगे बढ़ने से नहीं रोकता. यह तो उसे कुछ अच्छा करने के लिए प्रेरणा देता है.”

रजनी ने हैरानी से उसे देखा, फिर हल्के से मुस्कराती हुई बोली, “प्यार जीवन में प्रेरणा देता है, परन्तु रुकावट भी बनता है, खासकर स्त्री के लिए. जब एक स्त्री पत्नी बनकर किसी के घर जाती है, तो उसके ऊपर कई प्रकार की जिम्मेवारियां आ जाती हैं. वह पत्नी के साथ-साथ बहू और मां के किरदार में भी आ जाती है, फिर बच्चों की परवरिश में पड़कर उसकी उन्नति के सारे रास्ते बंद हो जाते हैं.”

रामू ने आश्चर्य से पूछा, “परन्तु तुम ऐसा क्या करना चाहती हो, जिसके लिए शादी नहीं कर सकती.”

“यह मेरे लिए भी अभी अनिश्चित-सा है, परन्तु जब यह सपना पूरा हो जाएगा, तब सभी को मालूम हो जाएगा.”

“फिर भी, कुछ तो इसकी रूपरेखा होगी.”

“फ़िलहाल तो मैं पढ़ना चाहती हूँ और पढ़कर जो रास्ता मुझे सबसे सुगम लगेगा, वही करूंगी. मैं इस गलीज़ और ज़लालत की ज़िन्दगी से बाहर आकर एक बेहतर ज़िंदगी जीना चाहती हूँ.”

“क्या टीचर बनने का ख़्याब देख रही हो.”

“कुछ भी हो सकता है, एक टीचर, सरकारी कर्मचारी या अधिकारी. जो भी मेरी मेहनत से मिलेगा, वह मैं करना चाहती हूँ, परन्तु मैं घर-परिवार के झमेले में नहीं पड़ना चाहती.”

“मैं तुम्हारा इंतज़ार कर सकता हूँ. यही नहीं, तुमको लक्ष्य प्राप्त करने में मदद भी कर सकता हूँ.”

“क्या तुम सचमुच मुझे प्यार करते हो?”

रामू शरमा गया. सिर झुकाकर बोला, “करता हूँ, परन्तु तुमसे कहने की हिम्मत नहीं जुटा पाया कभी. बस आंखों से ही प्रकट करता रहा और तुम समझ गयी.”

वह भी मुस्कराई, “लड़की बहुत जल्दी मर्द के हाव-भाव पहचान जाती है, अच्छे-बुरे दोनों, परन्तु जब लड़की जवान होती है तो हर मर्द के भाव उसे अच्छे ही लगते हैं. इसीलिए कभी-कभी वह गड़बे में गिर जाती है.”

“परन्तु मैं तुम्हारे साथ प्यार का खिलवाड़ नहीं करना चाहता हूँ. न मेरे मन में यह कामना है कि तुम्हें फंसाकर तुम्हारे साथ शारीरिक संबंध बनाऊँ और एक दिन तुम्हें छोड़ दूँ. तुम मेरे ऊपर विश्वास करो. मेरा प्यार सच्चा है. तुम चाहोगी तो मैं तुमसे कभी बात भी नहीं करूँगा, जब तक तुम अपना लक्ष्य नहीं प्राप्त कर लेती. परन्तु किसी भी मोड़ पर अगर मेरी ज़रूरत पड़े तो मैं तुम्हारी मदद करने के लिए तैयार रहूँगा. तुम मुझे याद कर लेना.”

रजनी ने रामू के चेहरे को देखा. उसका रंग रजनी से थोड़ा साफ़ था. चौखटा भी अच्छा था. कद उससे चार इंच बड़ा होगा. मोटा नहीं तो दुबला भी नहीं था. रजनी को उसके चेहरे पर आत्मविश्वास की चमक दिखाई दे रही थी.

सिर नीचा करके वह कुछ पल सोचती रही, फिर बोली, “मैं कोई सुन्दर नहीं हूँ. आपको मुझसे अच्छी लड़की मिल जाएगी.”

रामू हंसा, “तुम मुझे परखने की कोशिश कर रही हो. सचमुच, मुझे तुमसे सुन्दर लड़की मिल जाएगी. परन्तु तुम्हारे जैसी गुणी लड़की भी मिलेगी, इसकी गारंटी क्या तुम ले सकती हो?”

रजनी के पास उसकी बात का कोई उत्तर नहीं था.

मां के यहां रजनी को ख़ास दिक्कत नहीं थी. जबसे कमाकर दो पैसे वह मां के हाथ में रखने लगी थी, मां-बाप और बहन का व्यवहार उसके प्रति मृदुल हो गया था. पैसा सुख और सम्पन्नता तो लाता ही है, लोगों के मन में कड़वाहट भरता है तो कुछ लोगों के मन से कड़वाहट निकाल भी देता है.

उसके घर में केवल एक टप्परवाली कोठरी थी. उसी में पांच आदमी सिकुड़-मिसटकर सोते थे. गर्मी में ख़ास दिक्कत नहीं होती थी, क्योंकि तब कोई

भी इधर-उधर लेट जाता था. दिक्कत होती थी, सर्दी और बरसात में, जब सबको एक ही कोठरी में घुसकर सोना पड़ता था. इसमें रजनी को छोड़कर किसी और को दिक्कत नहीं होती थी. रजनी को पढ़ने के लिए जगह नहीं बचती थी. जगह मिल भी जाती तो बिजली जलने से सोनेवालों को परेशानी होती. घर में बिजली का कनेक्शन नहीं था. कटिया फंसाकर घर में बल्ब जलाया जाता था. शौच के लिए बाहर खुले में, गन्दे नाले या रेलवे लाइन के किनारे जाना पड़ता था.

रजनी अब आगे की पढ़ाई के लिए अलग से एक कमरा किराये पर लेना चाहती थी. रामू से पूछा, तो उसने भी सहमति जताई, परन्तु जब मां से पूछा, तो वह भड़क गयी, “हां, क्यों नहीं तू हमसे अलग रहेगी. हमारे लिए तो तू पैदा होते ही मर गयी थी. न तू कभी हमारी थी, न रहेगी. कभी घर से भाग जाती है, कभी अलग रहने लगती है. हम तेरे मां-बाप थोड़े ही हैं. जा, जहां मरना हो, जाकर मर. अब दुबारा लौटकर नहीं आना.”

“अम्मा, मैं तो हमेशा तुमको अपनी मां ही समझूंगी. मैं अपना जीवन बनाना चाहती हूँ, इसीलिए...?”

“हां, तो जा ना! कब मना किया. मना करूंगी, तो क्या तू रुक जाएगी. भागकर चली जाएगी.” मां ने ताना मारा.

मां को रजनी के घर से जाने का दुख नहीं था. उन्हें चिन्ता इस बात की थी कि रजनी दो पैसे कमाकर ला रही थी, वह अब कम हो जाएंगे. रजनी की कमाई से घर के हालात काफी अच्छे हो गये थे. अच्छा खाने-पहनने लगे थे. अब अलग रहने लगेती, तो पैसे क्यों देगी?

“अम्मा, तुम बेकार परेशान हो रही हो. रजनी पढ़-लिखकर कुछ बनना चाहती है, तो इसमें बुराई क्या है?” राजू ने रजनी का समर्थन करते हुए कहा.

“हां, मां, और मैं हर महीने आपको एकमुश्त राशि देती रहूंगी. पैसे की तकलीफ़ नहीं होने दूंगी.”

यह सुनकर मां ने मुंह घुमा लिया. यह उसकी मौन स्वीकृति थी.

रामू के प्रयास से रजनी को निम्न-मध्यवर्गीय बस्ती में एक सस्ता कमरा मिल गया.

तीन साल तक रजनी एकांतवास में रही. उसकी दुनिया कॉलेज और घर तक सिमटकर रह गयी थी. दुनिया में घूमने-फिरने और मनोरंजन के तरीके भी हैं, यह वह भूल गयी थी. जी-जान से वह बस पढ़ाई में लगी रही और हर परीक्षा में अच्छे

नंबरों से पास होती रही. तीज-त्योहारों में ही वह मां के घर जाती थी. जीजा कभी-कभार उससे मिलने आ जाता था, परन्तु रामू कभी नहीं आया. वह दोनों कॉलेज में मिल लेते थे. वहीं पर उन दोनों के बीच बातें होतीं, तब वह अपना सुख-दुख बांट लेते थे. रजनी के प्रोत्साहन और प्रेरणा से रामू ने भी इंटर पास कर बी.ए. का प्राइवेट फार्म भर दिया था.

रजनी के ये तीन साल कोई बहुत सुखद दिन नहीं थे. जवान लड़की का अकेले रहना बहुत सारी सच्ची-झूठी अफवाहों को जन्म देता है. वह लोगों की बुरी नज़रों का शिकार होती है. लोग उसके बारे में तरह-तरह की बातें बनाते हैं, कटाक्ष कसते हैं और लांछन लगाते हैं. लड़की सुन्दर है या असुन्दर, इससे उन्हें कोई फर्क नहीं पड़ता है. लोग उसके बारे में न केवल तरह-तरह की बातें करते हैं, बल्कि उसे अपने प्रेमपाश में बांधने के यत्न भी करते हैं. जब वह उनके फंदे में नहीं फंसी तो उसे कुलटा, बदचलन और वेश्या करार देते हैं. यह सब रजनी ने भी झेला, परन्तु उसने किसी की बात का जवाब देना तो दूर, आंख उठाकर भी नहीं देखा. फलतः उसे घमण्डी और बदजात भी करार दे दिया गया. परन्तु रजनी हर परिस्थिति में मजबूत चट्टान की तरह खड़ी विपरीत हवा के तेज़ झोंको को सहती रही, लेकिन झुकी नहीं. उसने हारना सीखा ही नहीं था. जितना भी लोग उसे दबाते, वह उतना ही मजबूत होकर उठ खड़ी होती.

मनुष्य अगर दुख की गठरी को संभालकर रखता है, तो वह दिनों-दिन बड़ी होती जाती है. परन्तु यदि वह अपने दुखों को किसी के सामने खोलता रहता है, तो गठरी छोटी होती रहती है. रजनी इस मायने में भाग्यशाली थी कि उसके दुख सुनने और बांटने वाला रामू उसके साथ था. वह अपने दिल की बात हमेशा रामू को बताती थी. इससे उसका दुख हल्का हो जाता था.

जैसे-जैसे दिन बीत रहे थे, रजनी और रामू के बीच प्यार की डोर मजबूती से कसती जा रही थी. इसके साथ मिलन की कसक भी बढ़ रही थी, परन्तु रजनी अपने को रोक लेती थी. उसकी आंखों के सामने भविष्य के उजाले तैर जाते और वह पीछे हट जाती. इन उजालों तक पहुंचने के पहले वह अपने मार्ग से भटकना नहीं चाहती थी. रामू अपनी भावनाओं का प्रवाह रोकने में समर्थ नहीं था. इसीलिए गाहे-बगाहे कह देता, “कब तक हम अपने को रोककर रखेंगे.”

“जब तक मैं कुछ बन नहीं जाती?” वह धैर्य से कहती.

“कुछ बनने के लिए कोई समय निर्धारित नहीं है?” वह जोर देता.

“जीवन में बहुत सारी चीजों का समय निर्धारित नहीं होता, फिर भी हम धैर्य से काम करते रहते हैं और परिणाम की प्रतीक्षा करते हैं.”

“परन्तु शादी कोई बाधा नहीं है. बहुत से लोग शादी के बाद ऊंचाइयों तक पहुंचते हैं.”

“वह तो ठीक है, परन्तु शादी के बाद बहुत सारे बंधन आ जाते हैं.”

“बंधनों के बीच भी तो हम कुछ कर सकते हैं. अभी तुम अकेले रह रही हो. अकेले तुम्हें परेशानी होती है. शादी कर लेंगे तो तुम निश्चिन्त होकर अपने लक्ष्य की तरफ बढ़ सकती हो.

रजनी इस प्रश्न पर गंभीर हो जाती. इतने लंबे समय तक अकेले रहने से वह भी काफी परेशान हो गयी थी. लोगों की तीखी बातें और घूरती आंखें अब उससे बर्दाश्त नहीं हो रही थी. जवान लड़की के लिए पारिवारिक और सामाजिक सुरक्षा और संरक्षा बहुत आवश्यक होती है, इस बात को वह बहुत संजीदगी से महसूस करने लगी थी, इसलिए अब जब कभी रामू उससे शादी की बात करता तो वह चुप रह जाती. रामू इसको रजनी की मौन स्वीकृति समझता. वह और जोर देने लगता. उसने अपने भैया राजू से भी कहा. उसने भी जोर दिया, तो बहुत सोच-विचारकर रजनी ने शादी के लिए हां कर दी.

बहुत सादे ढंग से उनकी शादी हो गयी. रजनी ने अपना किराए का कमरा छोड़ दिया. रामू अपने पुश्तैनी मकान में रहता था. साथ में मां-बाप थे. वह काफी बूढ़े हो चुके थे. उनका एकमात्र सहारा रामू ही था. उसी की कमाई से घर-खर्च चलता था. रजनी के आने से अब उसकी कमाई भी उस घर में जुड़ गयी थी.

शादी के बाद रजनी के जीवन में सचमुच खुशियों की बहार आ गयी थी. रामू उसके लिए देवता साबित हुआ. घर के सारे काम वह खुद ही करता था, बस रजनी को खाना बनाना पड़ता था.

“तुम घर की तरफ से निश्चिन्त होकर अपनी पढ़ाई की तरफ ध्यान दो, बस.” रामू ने कहा था.

पति का सहयोग मिला तो रजनी का उत्साह दुगुना हो गया. एम.ए. का प्राइवेट फार्म भरने के साथ-साथ रजनी ने नौकरियों के फार्म भी भरने आरंभ कर दिये. घर में अंग्रेजी और हिंदी के दो अखबार लगवा लिए. प्रतियोगी पत्रिकायें खरीदने लगी. इसके अतिरिक्त कॉलेज के मास्टर्स से प्रतियोगी परीक्षाओं की जानकारी लेती रहती थी. उसकी बुद्धिमता, क्षमता और लगन को देखकर किसी

मास्टर ने उसे प्रादेशिक और केन्द्रीय प्रशासनिक सेवाओं की परीक्षाओं में बैठने के लिए प्रोत्साहित किया. वह जी-जान से इन परीक्षाओं की तैयारी में जुट गयी.

दिन में स्कूल की नौकरी, सुबह-शाम घर का काम; इन दोनों जगहों पर जितना समय उसे मिलता, वह पढ़ने में बिताती. कॉलेज की लाइब्रेरी का उसने भरपूर लाभ उठाया. वह उसकी सदस्य बन गयी थी.

पहले साल ही उसकी मेहनत रंग लाई; जब उसने प्रादेशिक सेवा की प्रारंभिक परीक्षा पास कर ली. रामू और उसके जीजा की खुशी देखने लायक थी. बहन और मां-बाप को पता नहीं था कि उसने कौन सा कारनामा कर दिखाया था. हालांकि यह अधूरी सफलता भी नहीं थी, अभी तो वह पानी में उतरी थी. पूरी नदी उसे पार करनी बाकी थी. कॉलेज के शुभचिन्तक अध्यापकों और प्रधानाचार्य ने उसे बधाई दी. प्रधानाचार्या ने कहा, “मुख्य परीक्षा की तैयारी के लिए तुम दो-तीन महीने की छुट्टी ले लो.” अंधा क्या मांगे, दो आंखें. रजनी भी यही चाहती थी. उसने छुट्टी ले ली और रात-दिन मुख्य परीक्षा की तैयारी में जुट गयी.

कहते हैं, जहां चाह, वहां राह. मेहनत, लगन और निष्ठा का कोई विकल्प नहीं होता. एक न एक दिन इसका फल अवश्य मिलता है.

रजनी ने मेन परीक्षा भी निकाल ली. अब इसमें कोई शक नहीं था कि वह वाइवा भी निकाल लेगी. जीवन के कठिन संघर्ष ने उसके अंदर आत्मविश्वास की मात्रा में अति बढ़ोत्तरी हुई थी. उसके कॉलेज के अध्यापकों और प्रधानाचार्य ने उसे साक्षात्कार के टिप्स दिए, कामन रूम में उसके साक्षात्कार के रिहर्सल किए गए. अब रजनी के जीवन के अंतिम संघर्ष के लिए तैयार थी.

प्रादेशिक सिविल सेवा परीक्षा के जब परिणाम घोषित हुए तो रजनी दस सफलतम प्रतिभागियों में छठवें नंबर पर थी. यह एक ऐसी उपलब्धि थी, जिसका विश्वास किसी को नहीं था. रजनी जिस परिवेश में पली-बढ़ी थी, जिन पारिवारिक और सामाजिक विषमताओं का सामना किया था और जिन आर्थिक कठिनाइयों में जीवन जिया था, उसमें ऐसी प्रतिभा का विकास उसके अंदर हुआ था; यह एक चमत्कार से कम नहीं था.

रजनी के कॉलेज के प्रबन्धन और अध्यापकों ने मिलकर उसका सम्मान समारोह आयोजित किया. शहर के गणमान्य व्यक्तियों के साथ-साथ रजनी के मां-बाप, उसकी बहनों और रिश्तेदारों को भी निमंत्रित किया गया. राजू और रामू

के साथ वे सभी अगली पंक्ति में बैठे थे. बड़ा ही अभिभूत और हर्षविभोर कर देनेवाला दृश्य था. रजनी मंच पर गणमान्य अतिथियों के बीच में बैठी थी. उसको आज ऐसी जगह पर देखकर उसकी मां-बाप के आंखों में रजनी के बचपन के दिन गुजर रहे थे. उसके पीड़ित और दयनीय बचपन के बारे में सोच-सोचकर वह अंदर ही अंदर दहल रहे थे. उन्होंने अपनी सगी बेटी को कभी सगी बेटी नहीं समझा. उसके ऊपर कितने अत्याचार किये और उसी के कारण उन्हें कितना सम्मान मिल रहा था.

कॉलेज के प्रबंधक द्वारा सम्मान के बाद प्रधानाचार्य ने रजनी के बचपन से लेकर उसके अब तक के जीवन पर संक्षिप्त प्रकाश डाला. उसके जीवन की कटु सच्चाइयों को जानकर लोग आह-आह के साथ वाह-वाह कर उठे. जब लोग तालियां बजा रहे थे, तब रजनी के मां-बाप और उसकी बहनों के सिर झुके हुए थे.

अंत में रजनी ने कहा, “आज मैं जिस मकाम पर पहुंची हूं, उसका पूरा श्रेय मेरे मां-बाप और बहनों को जाता है. मैं अपने मां-बाप की एक अवांक्षित संतान के रूप में पैदा हुई थी. बचपन में उनकी उपेक्षा और बहनों के दुर्व्यवहार के कारण मेरे मन में विद्रोह के बीज पनपने लगे. मेरा रंग-रूप भी अच्छा नहीं था. इससे मैं सभी की आंखों में कांटे की तरह चुभती थी. अपने ही घर में मैं एक कीड़े की तरह पल-बढ़ रही थी. बिना किसी गलती के मैं घर के हर सदस्य से पिटती. जैसे-जैसे मैं बड़ी हो रही थी, मां-बाप और बहनों के मेरे ऊपर होनेवाले अत्याचारों के कारण मेरी समझ में आ रहे थे. लड़की का पैदा होना उसके हाथ में नहीं होता. उसका रंग-रूप भी कुदरत की देन है. इसमें उसका क्या कसूर है. खैर, उपेक्षा, अत्याचार और क्रूरता जब हद से ज्यादा बढ़ गयी तो मैं पांच साल की उम्र में घर से भाग गयी. तभी मैंने तय कर लिया था मैं कुछ ऐसा करके दिखाऊंगी जिससे मेरी सारी कमियां अच्छाइयों में बदल जाएं. मैं एक ऐसा उदाहरण बनकर सबके सामने आना चाहती थी, जिससे लोग बेटों के प्रति मोह छोड़कर बेटियों की खूबियों की तरफ भी ध्यान दे सकें.

“मेरे जीवन के दस साल अनाथालय में किस तरह गुजरे, यह एक अलग कहानी है, परन्तु मैंने किसी भी मोड़ पर हार नहीं मानी. अनाथालय में जवान लड़कियों से देह-व्यापार करवाया जाता था. मैं जब यौवन की देहलीज पर पहुंची और मुझे लगा कि किसी भी दिन मेरी अस्मिता के साथ खिलवाड़ हो सकता है, तो मौका देखकर मैं वहां से भी भाग निकली और फिर से अपने मां-बाप के घर

आ गयी. यहां कुछ भी नहीं बदला था, सबका व्यवहार मेरे प्रति वही रहा. बस इतना ही हुआ कि बड़ी होने के कारण अब मेरे साथ मार-पीट नहीं होती थी. अनाथालय में रहते हुए मैंने दसवीं पास कर ली थी, परन्तु अब क्या करती? आगे पढ़ाई के लिए पैसा चाहिए था. मैंने एक रास्ता खोज लिया, जिसमें मेरे जीजा ने मेरी मदद की. मैं इस कॉलेज में चपरासी के रूप में काम करने लगी. यहीं से मेरे जीवन में एक और मोड़ आया. कालेज की प्रिंसिपल महोदया और मास्टर्स के प्रोत्साहन और सहयोग से मैंने बी.ए. किया और प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी करने लगी. यही मुझे मेरे पति मिले और आप सबके सहयोग, प्रोत्साहन और प्रेरणा से आज मैं जो हूँ, वह सब आपके सामने है. मैं आप सभी की बहुत-बहुत आभारी हूँ. मेरे जीवन को बनाने में आप सभी का, जो मेरे जीवन से जुड़े हुए हैं, कोई-न-कोई योगदान रहा है; परन्तु जो अभूतपूर्व योगदान मेरे मां-बाप और बहनों का है, वह मुझे न मिला होता तो आज मैं भी किसी के घर में झाड़ू-पोंछा कर रही होती.

“अंत में विशेष तौर पर मैं प्रधानाचार्या महोदया श्रीमती तनूजा चौधरी, कॉलेज के समस्त अध्यापकों और सहकर्मियों की मैं आभारी हूँ. मैं अपने जीजा का भी बहुत-बहुत धन्यवाद करती हूँ, जिनके कारण मुझे इस कालेज में नौकरी मिली और मेरे जीवन में इतने सारे बदलाव आए. इनके कारण ही रामू जैसे पति मुझे मिले, जिन्होंने दाम्पत्य-जीवन की जिम्मेदारियों से मुझे मुक्त रखते हुए मेरे लिए पढ़ने के अवसर उपलब्ध कराए. मैं आप सभी का आभार मानते हुए धन्यवाद देती हूँ.”

सभागार तालियों की गड़गड़ाहट से बहुत देर तक गूँजता रहा.



खेल

उसका मन आजकल बहुत चंचल हो गया है. इधर-उधर भागता है. उन चीजों की तरफ़ दौड़ता है, जो उसके लिए समाज द्वारा वर्जित हैं. ऐसा नहीं होना चाहिए. परन्तु क्या करे वह? कोशिश करने पर भी मन को नहीं रोक पाती है. तमाम तरह के विचार उसके मन में आते ही रहते हैं, अनवरत...जैसे बाढ़ का पानी बिना किसी रुकावट के बहता रहता है. भावनाएं बहकती हैं, इच्छाएं मचलती हैं. कोई इन पर रोक लगा सकता है क्या? वह भी नहीं लगा पाती. छोड़ देती है अपने मन को बेलगाम? मन को मारकर कैसे जिन्दा रहे वह? कितना रोके वह अपने मन को? कोई बूढ़ी तो हो नहीं गयी. बूढ़ी भी हो जाए तो क्या उसका अंतर्मन मर जायेगा? हृदय नहीं धड़केगा?

एक साल हो गया, उसने अपने मन को मारकर रखा था. समाज कहता है कि वह विधवा है. उसे इधर-उधर नहीं उठना-बैठना चाहिए, किसी पुरुष की तरफ़ नज़र उठाकर नहीं देखनी चाहिए, बुरे ख़याल मन में नहीं लाने चाहिए. बुरे ख़याल क्या होते हैं? कोई उसे बताए तो सही. क्या कोई स्त्री पुरुष के बारे में नहीं सोचती या पुरुष स्त्री के बारे में नहीं सोचता? जो ख़याल उसके मन में आते हैं, वही दूसरों के भी मन में आते होंगे. फिर उसके ख़याल बुरे कैसे हो सकते हैं?

इसी संसार में स्त्री-पुरुष रहते हैं. क्या वह नहीं देखती कि वह एक दूसरे से मिलते-जुलते हैं, आपस में हंसी-टिठोली करते हैं. स्त्री और पुरुष- पति-पत्नी ही नहीं, अन्य लोग भी- आपस में क्या-क्या करते हैं, क्या वह नहीं जानती? और लोग कहते हैं कि उसे किसी पुरुष के बारे में नहीं सोचना चाहिए. किसी की तरफ़ नज़र उठाकर नहीं देखना चाहिए. यह कहां का इंसाफ़ है भला?

वह विधवा है तो क्या इंसान नहीं है, स्त्री नहीं है, जवान नहीं है? लोगों को उसका विधवापन दिखता है, जवानी नहीं दिखती. वह अपने जवान मन को

बांधकर कैसे रखे? समाज के नियम और प्रतिबंध क्या किसी के मन को बांध सकते हैं, जवानी के प्रवाह को रोक सकते हैं? नहीं, तभी तो इस संसार में व्यभिचार है, अवैध प्रेम-संबंध हैं. लोग क्यों किसी के मन को बांधकर और जवानी पर रोक लगाकर रखते हैं? इन प्रतिबंधों के कारण ही तो ऐसे अवैध संबंधों का जन्म होता है? वह विधवा हो गयी, तो क्या वह जवानी से भी हाथ धो बैठी. मर्यादा और परम्परा के नाम पर उसको विधवा मान लिया, उसको दूसरी शादी करने से वंचित कर दिया. दूसरी शादी नहीं करेगी तो अपनी जवानी को कहां खपाएगी. किसी न किसी पुरुष के साथ संबंध बनाएगी ही, वरना उस पर पागलपन के दौरे पड़ेंगे और एक दिन वह किसी मानसिक चिकित्सालय में पड़ी-पड़ी सड़ जाएगी. दुनिया के निष्ठुर लोग इस सत्य को क्यों नहीं समझते?

नहीं, वह अपने साथ ऐसा नहीं होने देगी. अभी उसकी उमर ही क्या है? पच्चीस की भी तो नहीं हुई. अब उसे याद नहीं आता, वह कितने साल की हो गयी. पिछले एक साल से वह सब भूली पड़ी थी. किसी भी चीज़ की तरफ उसका मन नहीं जाता था. उसने अपने मन को मार लिया था, परन्तु अब और नहीं मारेगी. वह सोचने लगी, एक साल हो गया उसे विधवा हुए. तब से वह मायके में है. ससुरालवालों ने ज़बरदस्ती उसे मायके भेज दिया. वह उनके लिए मनहूस थी, क्योंकि वह उनके जवान बेटे को खा गयी थी. उसकी समझ में नहीं आता कि वह किसी की मौत की ज़िम्मेदार कैसे हो सकती है?

वह पढ़ने में तेज़ थी, परन्तु इंटर करने के बाद उसकी मां ने उसे आगे पढ़ने नहीं दिया. पिताजी चाहते थे कि बेटी आगे पढ़े, परन्तु मां पुराने खयालों की थीं. आजकल लड़के-लड़कियों के बीच बढ़ते प्रेम-प्रसंगों और बलात्कार के मामलों के कारण उसकी मां आशंकित रहती थीं. उन्हें डर लगा रहता था कि बेटी कहीं किसी के साथ भाग न जाए, या आते-जाते कोई उसका अपहरण न कर ले. अतः जैसे ही वह अटारह की हुई, एक अच्छा-सा घर और वर देखकर मोटा दहेज़ देकर उसकी शादी कर दी गई. मां-बाप ने तो उसके लिए अच्छा घर देखा था, परन्तु अच्छे घरवालों ने उसके बाप से मोटा दहेज़ लिया था और जहां तक अच्छे वर की बात है, वह तो उसकी तरफ देखता ही न था. धीरे-धीरे उसे पता चला था कि वह किसी दूसरी लड़की के प्यार में फंसा हुआ था. उसके साथ शादी तो घरवालों के दबाव में की थी, मोटा दहेज़ लेने के लिए. उसके पति ने इतना अच्छा काम किया कि जब उसकी प्रेमिका की कहीं दूसरी जगह शादी हो गयी तो ट्रेन के आगे कूदकर

अपनी जान दे दी. अब बताओ, इसमें उसका क्या कसूर? वह कैसे मनहूस हो गयी अपनी ससुराल के लिए. उसके पति ने उस लड़की के लिए जान दी, जो ब्याहकर दूसरी जगह चली गयी थी और अपनी ससुराल में सुख से रह रही थी. और एक वह है, जो वैधव्य का कलंक झेल रही है. इसमें कौन किसके लिए मनहूस है, कौन तय करेगा? लोग दूसरों के लिए सज़ा तय कर देते हैं, परन्तु यह नहीं देखते कि कसूर किसका है?

वह सुनती रहती है, कि वह सनातनी ब्राह्मण है और सनातन धर्म का पालन करना उनका कर्तव्य है. धर्म और कर्तव्य क्या एक हो सकते हैं. आज बाल-विवाह प्रथा समाप्त हो गयी, सती प्रथा समाप्त हो गयी, फिर सनातन धर्म में विधवा-विवाह की मान्यता क्यों नहीं है. समाज बदल गया, लोगों की सोच नहीं बदली. उसके पिता तो कभी-कभी कहते हैं, “जवान बेटी कब तक घर में बैठी रहेगी. न हो तो उसका दूसरी जगह ब्याह कर दें. आज लोगों की सोच बदल गयी है, कानून में भी इसकी मान्यता है. कोई न कोई लड़का लतिका से शादी करने के लिए राज़ी हो जाएगा.”

परन्तु मां मना कर देती, “तुम भी कैसी अधर्म की बातें कर रहे हो? कानून कुछ भी कहे, धर्म-कर्म तो अपने हाथ में हैं. उसका ब्याह करके हम पाप के भागीदार क्यों बने? उसका जैसा भाग्य...हम उसे घर से नहीं निकाल रहे, यह क्या कम है, वरना उसे काशी या मथुरा भेज देते.”

मां कर्कशा हैं, सभी जानते हैं. पिताजी बहुत अधिक तर्क नहीं दे पाते. देते भी तो मां नहीं मानतीं. मान जातीं तो छोटी अवस्था में लतिका का विवाह ही क्यों होता? वह विधवा ही क्यों होती? आज कहीं पढ़-लिखकर नौकरी कर रही होती और समाज में गर्व से अपना सिर ऊंचा करके जीती. तब मां-बाप उसकी राह में रोड़ा बनकर तो न खड़े होते. सोचते-सोचते वह माथा पीट लेती है, ऐसे मां-बाप के घर में जन्म लिया.

वह सोचती रहती है, रात-दिन सोचती है, उसकी सोच में कोई विराम नहीं लगता. सोच के साथ-साथ उसका मन भागता है, चारों तरफ...जहां-जहां वह जा सकता है, अपने मन को भेजकर काल्पनिक सुख प्राप्त कर लेती है. आजकल घर के बाहर उसका मन भागने लगा है. वह घर की खिड़कियों, दरवाजों से बाहर देखती रहती है. कभी-कभी बाहर सहन में भी चली जाती है, जहां से वह पूरी सड़क को देख सकती है, आते-जाते लोगों को देख सकती है. सड़क के पार दूकानों को देख सकती है और सामने की मोबाइल की दुकान पर बैठे उस जवान छोकरे को देख

सकती है, जिसकी निगाहें अक्सर उसकी तरफ़ आती हैं, होंठ मुस्कराते हैं. उस लड़के की निगाहों से साफ़ झलकता है जैसे वह उसे ही तलाश कर रही थीं. यह महसूस करते ही वह सिहर जाती है, फिर अपनी निगाहें नीची करके अंदर चली आती है. यह खेल अभी दो-चार दिन से ही शुरू हुआ है. उसे अच्छा लगता है.

एक जवान सुन्दर नारी, अपनी देह की ज़रूरतों को कैसे पूरा करे, अपनी इच्छाओं को कहां जलाकर राख कर दे. देह जल जाती है, परन्तु इच्छाएं कहां मरती हैं. सनातन धर्म की दुहाई देनेवालों को यह क्यों नहीं दिखता, लेकिन जब मौका मिलता है तो वह इसी विधवा नारी की सुन्दर, सुगठित देह को भोगने से नहीं चूकते. तब उनका धर्म भ्रष्ट नहीं होता, उनके ऊपर कोई पाप नहीं लगता. अगर पापी बनती है तो नारी. उसे ही पतिता की उपाधि से नवाज़ा जाता है, उसे ही बदचलन कहा जाता है और समाज से बहिष्कृत करने में वहीं लोग आगे रहते हैं, जो बहला-फुसलाकर उसे वासना के गर्त में गिराते हैं. नारी तो अपने मन को मारकर चुप भी बैठी रहे, परन्तु पुरुष उसे न केवल लुभाते हैं, बल्कि उसकी कामनाओं को भड़काने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं.

घर में पांच लोग हैं...एक वह, उसके मम्मी-पापा और भाभी-भैया. उसको छोड़कर सभी जोड़े में हैं. मम्मी-पापा बूढ़े हो गये हैं, परन्तु अभी तक साथ लेटते हैं. साथ लेटते हैं, तो क्या कुछ करते नहीं होंगे. वह सब समझती है. इतनी पढ़ी-लिखी और समझदार तो है ही. मरते दम तक कामेच्छाएं समाप्त नहीं होतीं. भाभी-भैया तो जवान हैं. वह दोनों तो घर में खुलेआम गंदी हरकतें करते रहते हैं. इतना भी ध्यान नहीं रखते कि घर में जवान विधवा बहन या ननद है. उसके सामने ही भैया भाभी को आगे-पीछे से पकड़ लेते हैं, उसके नाजुक अंगों को दबा देते हैं. उनको शरम नहीं आती, परन्तु वह शरमा जाती है. मुंह छिपाकर इधर-उधर हो जाती है, परन्तु उसकी सांस गरम हो जाती है, हृदय तेजी से धड़कने लगता है, बदन कांपने लगता है. फिर किसी कोने में छिपकर वह भैया-भाभी को आपस में लिपटते-चिपकते और चूमते-चाटते देखती रहती है. तब उसका तन-बदन सनसना जाता है. उसका मन करता है, कोई उसके बदन को चकनाचूर कर दे, उसके बदन की आग टंडी कर दे, या सारी दुनिया को आग लगा दे.

जब से उसने भैया-भाभी को खुलेआम प्रेमाचार करते देखा है, तब से उसकी कामेच्छाओं में भयंकर आग लग गयी है. रात में नींद नहीं आती, उठकर बैठ जाती है, कमरे में इधर-उधर टहलती है, परन्तु मन की आग फिर भी टंडी नहीं होती.

मन नहीं मानता, फिर भी वह चुपके से बाहर आकर भैया-भाभी के कमरे के दरवाजे पर कान लगाकर अंदर की आवाज़ें सुनती है. अंदर जैसे तूफ़ान मचलते रहते हैं. अंदर से आ रही आहों-कराहों और सिसकियों को सुनकर उसकी आग और तेज़ी से भड़कती है. फिर वह भागकर बाथरूम में जाती है और ठंडे पानी से बदन को नहलाती है, परन्तु यह आग पानी से और ज़्यादा भड़क उठती है.

किसी को उसकी परवाह नहीं है, उसकी भावनाओं के बारे में कोई नहीं सोचता, न सोचे...सबने उसे मजबूर बना दिया है, परन्तु वह मजबूरी में बंधकर नहीं रहेगी. सारे बंधन तोड़ देगी. इसके लिए उसे ही कुछ करना होगा, वरना वह इस देह की आग में जलकर भस्म हो जाएगी. दूसरों को कोई फ़र्क़ नहीं पड़नेवाला, परन्तु वह हिस्टीरिया की मरीज़ बनकर नहीं जीना चाहती, पागल होकर अस्पताल नहीं जाना चाहती है. कोई कुछ करे या न करे, उसे ही कुछ करना होगा. भाड़ में जाए सनातन धर्म और मां-बाप की मर्यादा और नैतिकता. उसकी आंखों के आगे सारे लोग मज़े लूट रहे हैं और उसे विधवा बनाकर उसके पांवों में धर्म, नैतिकता और मर्यादा की बेड़ियां डाल दीं. यह कहां का न्याय है? सभी स्वार्थी हैं, मन की मुरादें पूरी कर रहे हैं, देह की भूख शान्त कर रहे हैं, तो वह खुद इस सबसे क्यों वंचित रहे? उसने कौन-सा पाप किया है? रोटी-दाल खाकर कब तक वह अपनी भूख शान्त करेगी. पेट की भूख के बाद दूसरी भी भूख होती है...देह की भूख. इस भूख को बुझाने के लिए उसे ही जतन करना होगा, परन्तु कैसे...? समाज के सारे रास्ते तो बंद हैं?

उसका बड़ा भाई उच्च शिक्षित है, मल्टी नेशनल कंपनी में नौकरी करता है. बीवी भी पढ़ी-लिखी है, परन्तु मां के धार्मिक आदर्शों (पाखण्डों) के आगे उनकी पढ़ाई भी धूल चाटने लगती है. विधवा बहन घर में पड़ी है, खा-पी रही है, बदले में नौकरानी की तरह काम करती है. बस इससे ज़्यादा उसे और क्या चाहिए. कमीना भाई, निर्लज्ज भाभी...उसके मुंह से दोनों के लिए गालियां निकलती हैं. खुद तो कुत्तों की तरह एक दूसरे को चूमते-चाटते रहते हैं, रात में पलंग तोड़ते हैं; परन्तु उसकी इच्छाओं की तरफ़ किसी का ध्यान नहीं. ढोंगी और पाखण्डी ब्राह्मण...एक दिन कालिख पुतेगी सबके मुंह पर. तब अपने सनातन धर्म का दाह-संस्कार भी नहीं कर पाएंगे.

सामने की दुकानवाला लड़का उसे अच्छा लगता है. उसी की उमर का होगा. हो सकता है, एकाध साल कम ही हो. चेहरे में अभी भी बचपना झलकता है, परन्तु

जवान है और उसकी आंखों को भा गया है. उसको देखने के लिए उसका मन हर पल तड़पता रहता है, परन्तु दिन में बहुत कम मौका मिल पाता है उसे. जब भैया और पिताजी ऑफिस चले जाते हैं, भाभी अपने कमरे में घुस जाती हैं या कहीं बाहर चली जाती हैं और अम्मा रसोई या किसी अन्य किसी काम में व्यस्त होती हैं, तभी उसे दो-चार पल के लिए दरवाजे पर खड़े होने का मौका मिल पाता है. आंखें चुराकर लड़के को ताकती है? मुस्कराती है और आंखों ही आंखों में बहुत कुछ कह जाती है. लड़का भी उसके हाव-भाव पहचान गया है. उसको उसी के तरीके से जवाब देता है. उन दोनों की निगाहों और हाव-भाव का आदान-प्रदान दिन में एकाध-बार ही होता है और वह बहुत कम समय के लिए होता है, क्योंकि मां की आंखें बिल्ली की तरह उसके पीछे लगी ही रहती हैं. वह भी सतर्क रहती है और जैसे ही आभास होता है कि मां दरवाजे की तरफ आ रही हैं तो वह झटपट अंदर भागकर कोई काम करने का दिखावा करने लगती है. इसमें अब वह काफी उस्ताद हो गयी है. प्यार के मामलों में लड़कियां बड़ी आसानी से मां-बाप की आंखों में धूल झोंक देती हैं.

प्रेम केवल आंखों तक ही सीमित नहीं रहता. जब यह हृदय के अन्दर प्रवेश करता है, तो कुछ और चाहता है. एक दूसरे का सामीप्य और सहवास. लतिका अब ऐसी स्थिति में पहुंच चुकी थी कि आत्मिक या मानसिक प्रेम से कोई सुख नहीं प्राप्त हो सकता था. एक दूसरे को देखकर आंखों को शीतलता अवश्य मिलती थी, परन्तु देह जलने लगती थी. उसको कैसे ठण्डा करे वह? जहां चाह, वहां राह...प्रेम के मामले में लड़कियां मिलन की राह निकाल ही लेती हैं.

उसने बहुत कुछ सोचा-विचारा, फिर रात में एक पर्ची में कुछ लिखा और दूसरे दिन दरवाजे पर खड़ी होकर उस लड़के की तरफ देखा, उसने भी देखा. उसने अपने हाथ को उठाकर पर्ची दिखाई. लड़के की आंखों में प्रश्नात्मक भाव उभरे. वह मुस्कराई और उस पर्ची को दरवाजे के एक किनारे खास जगह पर रख दिया. लड़का देख रहा था. वह जानती थी, लड़का उस पर्ची को अवश्य उठाकर ले जाएगा, पढ़ेगा और फिर...वह मन ही मन हर्षित होती हुई अंदर चली गयी.

वह सारा दिन रोमांचित होती रही. बार-बार बाथरूम जाकर वहां लगे शीशे में अपना रूप निहारती, उसके चेहरे में वैधव्य की छाया होने के बावजूद सुंदरता का विशिष्ट लावण्य था. अपना रूप देखकर वह बार-बार रीझती और फिर शरमा जाती, जैसे सुहाग-सेज पर बैठी दुल्हन पति के इंतज़ार में विचारमग्न शरमाती रहती है.

उस रात उस घर का दरवाजा खुला था. आधी रात के बाद जब उस घर के चार शख्स अपने-अपने कमरों में बन्द थे, एक प्रेम में अति उत्साही विधवा लड़की दरवाजे पर खड़ी होकर किसी का इंतज़ार कर रही थी. उसका इंतज़ार लंबा नहीं था. वह जितना बेताब थी, उससे कहीं ज्यादा बेताबी उसने किसी और के हृदय में पैदा कर दी थी. दरवाजे पर खुटका हुआ तो उसने बाहर की हल्की रोशनी में उसको पहचान लिया. फिर हल्की-सी सीटी बजाकर उसने उस शख्स को अपनी तरफ आने का इशारा किया और वह शख्स बिजली की तेज़ी से घर के अंदर दाखिल हो गया. बिना किसी आवाज़ के दरवाजा अंदर से बंद हो गया.

उस घर के किसी भी कमरे में उस रात कोई अकेला नहीं था. तीनों कमरों में तीन जोड़े थे. एक नया जोड़ा था. उस जोड़े की सांसें गर्म थीं, बदन सुलग रहे थे और फिर धीरे-धीरे उनके बदन मोम की तरह पिघलने लगे. फिर पूरी तरह पिघलकर बिस्तर पर फैल गये.

वह रात और फिर कई रातें...यह सिलसिला अनवरत चलता रहा. वह दोनों जवां मर्द और स्त्री इसी तरह मोम की तरह हर रात पिघलते रहे और घर के किसी अन्य शख्स को इस सिलसिले का पता नहीं चला. किसी को भनक तक न लगी कि उनके घर के अंदर उनके बगल के कमरे में कोई विचित्र खेल खेला जा रहा है, ऐसा खेल जो सामाजिक नैतिकता की सीमाओं से परे था. उन्हें कैसे पता चलता, क्योंकि वह स्वयं रात-भर अपने-अपने खेल में व्यस्त रहते थे. परन्तु हर खेल का एक न एक दिन कोई अंत होता है. पारियां चाहे जितनी खेल ली जाएं. खेल का परिणाम भी निकलता है. उस घर की जवान विधवा लड़की जो खेल खेल रही थी, उसका एक-न-एक परिणाम निकलना ही था. उसे गर्भ रह गया. उसने लड़के को बताया, उसने कुछ गोलियां लाकर दीं. लड़की ने खाई, परन्तु कोई परिणाम नहीं निकला. उसका गर्भ नहीं गिरा.

ज्यादा दिन चढ़ गये, तो लड़के ने रात में उसके घर आना बंद कर दिया. वह चिन्ता में पड़ गयी. दरवाजे पर खड़े होकर उसने देखा, रोज़-रोज़ देखा; परन्तु वह दुकान पर नहीं आता था. लगता था, कहीं भाग गया? कायर कहीं का, भागने के पहले एक बार बताता तो वह भी उसके साथ भाग जाती. अब इस कलंक को लेकर वह कैसे जिए, कैसे छिपाए? कब तक छिपाती. एक-न-एक दिन तो सबको पता चलना ही है. बाहर जाकर गिरवा भी नहीं सकती थी. कौन उसे बाहर जाने देगा. सब उसे उल्लू की तरह ताकते रहते हैं.

बड़ी बुरी स्थिति में फंस गयी थी. पर इसकी ज़िम्मेदार तो वहीं थी. वहीं क्यों, परिस्थितियाँ क्यों नहीं? वह तर्क देती है. वह अपने पेट को सहलाती रहती है. कुछ महीनों तक पेट छिपा सकती थी, परन्तु स्वाभाविक आचरण को कैसे छिपाती? जल्दी ही माँ को पता चल गया. उनकी आँखों में जिस तरह के हैरत के भाव आए, उनको देखकर लगता था, जैसे वह अपनी बेटी से पूछना चाह रही थीं, 'बिना पुरुष के तू गर्भवती कैसे हो गयी? क्या कुन्ती की तरह किसी भगवान को याद किया था, जो तुझे पुत्रवती होने का वरदान दे गया.'

माँ उससे इशारों-इशारों में पूछती हैं, परन्तु वह उपेक्षा से टाल जाती है. माँ को गुस्सा आता है, परन्तु दाँत किटकिटा कर रह जाती हैं. कर कुछ नहीं सकती थीं. फिर एक दिन जब गुस्सा बर्दाश्त नहीं हुआ, तो चिमटे से उसकी पीठ काली कर दी, "बता किसका है? किसके साथ मुंह काला किया है? कौन-सा भूत-प्रेत तेरे ऊपर चढ़ गया है? घर के बाहर नहीं जाती, बाहरी कोई मर्द घर में नहीं आता. फिर भी तूने मुंह काला कर लिया? क्या घर का कोई मर्द है?" उसने फिर भी नहीं बताया. माँ का मुंह टेढ़ा हो गया.

उसने तय कर लिया था किसी को कुछ नहीं बताएगी. सबने उसके ऊपर वैधव्य थोपने का अपराध किया है. वह इसकी सज़ा सबको देगी. चुप रहेगी. घर के लोग ज़्यादा सताएंगे तो भाग जाएगी. किसी लूले-लंगड़े के घर बैठ जाएगी, परन्तु घर लौटकर नहीं आएगी. जान भी नहीं देगी. क्यों दे जान वह? उसने कोई अपराध किया है, पाप किया है?

माँ बहुत परेशान रहने लगी हैं, उससे भी ज़्यादा. वह मन ही मन खुश होती है. अब भुगतो, धर्म का पालन करो. दूसरी शादी कर देती तो आज ये नौबत नहीं आती.

माँ शक् के ऐसे झूले में डोल रही थीं कि उनका शक् अपने ही पति के ऊपर होने लगा. और एक दिन माँ ने उसके सामने ही अपने पति पर सीधे आक्षेप लगा दिया, "कहीं तुमने तो नहीं बेटी के साथ मुंह काला कर लिया?" पापा के लिए तो डूब मरने की भी जगह नहीं बची थी. उनका मुंह सफ़ेद हो गया. पत्नी को ऐसे देखा, जैसे भूत देख लिया हो और मुंह घुमाकर अपने कमरे में चले गये. पापा कुछ नहीं बोले थे, इससे माँ का शक् और पुख्ता हो गया. उनकी नज़र में उनका पति ही उस घर में अकेला मर्द था, जो अपनी बेटी के साथ मुंह काला कर सकता था. बेटे की तरफ़ उनका ध्यान नहीं गया.

घर में एक अविश्वास, संदेह और आक्रोश का माहौल पनपने लगा था. एक दिन भाभी को भी पता चल गया उसकी करतूत के बारे में. भाभी उससे ज़्यादा बातें नहीं करती थीं. अब तो बोलने का सवाल ही नहीं उठता था, परन्तु उनकी शंका की गाज़ गिरी उनके अपने पति के ऊपर. उनको लगा कि सगे भाई ने ही अपनी बहन की इज़्ज़त तार-तार की थी और उसे अपने बच्चे की माँ बना दिया था. भैया-भाभी में इतनी तकरार हुई कि भाभी रूठकर मायके चली गयीं. भैया उनके पैर पकड़कर गिड़गिड़ाते रह गये, परन्तु भाभी नहीं रुकीं. हंसता-खेलता एक प्रेममय सुखी दाम्पत्य-जीवन बरबाद हो गया. किसके कारण...क्या उसके वैधव्य के कारण या उसकी काली करतूत के कारण, परन्तु ऐसी करतूत तो कोई भी कर सकता है. इसके लिए किसी स्त्री को विधवा होने की ज़रूरत नहीं पड़ती.

उसे घिन आती है इस घर के लोगों पर और हंसी आती है इनकी घटिया सोच पर...यह सब अपने को सनातनी ब्राह्मण कहते हैं. धर्म पर इनकी अटूट आस्था है, पूजा-पाठ और धार्मिक अनुष्ठान पूरी लगन और श्रद्धा से सम्पन्न करते हैं; परन्तु पिता और भाई के सगी बेटी और बहन के साथ पवित्र रिश्ते के बंधन पर तनिक भी विश्वास इन्हें नहीं है. कितनी आसानी से माँ ने बाप का रिश्ता बेटी के साथ जोड़ दिया और भाभी ने उसके भाई का रिश्ता बहन के साथ जोड़ने में एक पल भी नहीं गंवाया. कहीं भी सत्य और तर्क का स्थान नहीं है उनकी सोच में. ..ढोंगी और पाखण्डी. उसे अफ़सोस होता है कि इन लोगों के घर में पैदा हुई. किसी ग़रीब के घर में पैदा होती तो इस वैधव्य का अभिशाप भरा जीवन तो न जीना पड़ता. दूसरी जगह उसकी शादी हो जाती. निम्न जाति के लोगों में धर्म के नाम पर पाखण्ड तो नहीं है. वह ब्याहकर दूसरी जगह चली जाती तो देह की आग बुझाने के लिए उसे इधर-उधर मुंह नहीं मारना पड़ता.

भाभी के बिना भैया परेशान रहते हैं. बहन की तरफ़ से वह पूरी तरह से उदासीन और निश्पृह हैं, जैसे उसने जो काण्ड कर डाला है, वह पूरी तरह से जायज़ है. केवल भाभी ने जो किया है, मायके चली गयी हैं, वह ग़लत है. उसके लिए परेशान रहते हैं. भाभी इसी शहर की हैं. दिन में कई बार फोन करते हैं, मौक़ा पाकर ससुराल भी चले जाते हैं, उसे मनाते हैं; परन्तु वह हाथ नहीं धरने देती. हारकर भैया ने बहन के आगे हाथ जोड़ दिये, "तू मेरा घर-परिवार क्यों बरबाद करने पर तुली हुई है. बता क्यों नहीं देती कि किसका पाप अपने पेट में लेकर घूम रही है. शर्म नहीं आती तुझे?"

उसे क्यों शर्म आए? उसने कौन-सा पाप किया है. वहीं तो किया जो एक स्त्री-पुरुष आपस में करते हैं. इस क्रिया को कौन सम्पन्न नहीं करता. यह तो शरीर की ऐसी भूख है, जिससे संसार का कोई प्राणी नहीं बचा है. वैधव्य के नाम पर लोग एक औरत को चहारदीवारी में बन्द कर देते हैं. उस पर धर्म, झूठी मर्यादा और नैतिकता के हजार बंधन लगा देते हैं. आंखों के हजार पहरे उस पर लगे होते हैं; परन्तु उसकी वासना, यौनेच्छा, मनोकामनाओं और शारीरिक इच्छाओं पर कैसे पहरे लगाए जा सकते हैं. हजार पर्दों के पीछे भी औरत अपनी यौनेच्छा की पूर्ति कर लेती है. इस पर भगवान भी रोक नहीं लगा सकते. मानवजन तो निरे पुतले हैं, पाप के भरे हुए...वह सोचती है.

घर के लोग परेशान और चिन्तित हैं. वह उस मनहूस और पापी औरत से छुटकारा पाना चाहते हैं, परन्तु समझ में नहीं आता किस तरह...? वह चिन्तित हैं, होते रहें. वह तो खुश है. उसे अपने किए पर अफसोस नहीं है, कोई पश्चाताप भी नहीं है. उसने वहीं किया, जो उसका तन मांग रहा था और जिसके लिए उसके मन ने कहा. कब तक बहते पानी को बांधकर रख सकती थी. बहुत दिन बांधकर रखा, परन्तु जब पानी बांध के ऊपर से बहने लगा, तो बांध भी धीरे-धीरे रिसने लगा और एक दिन टूट गया. बांध टूट गया, तो इसमें उसकी क्या गलती? प्रकृति अपने ऊपर किसी बंधन और प्रतिबंध को स्वीकार नहीं करती. मनुष्य को उसकी सज़ा भुगतनी ही पड़ती है. उस पर भी प्रतिबंध लगाये गये थे, तो अब परिणाम भुगतो.

घर में मनहूस सन्नाटा पसरा रहता है. इतना सन्नाटा तो उसके विधवा होने पर भी नहीं पसरा था. ऐसा लगता है, घर का हर व्यक्ति विधुर हो गया है और स्त्रियां विधवा. लेकिन यह सन्नाटा एक दिन अचानक ही टूट गया. मां ने उसका हाथ पकड़ा और बाहर की तरफ़ खींचकर ले जाते हुए कहा, “चल मनहूस!”

उसे पता नहीं था, मां उसे कहां ले जा रही थीं. वह बेजान चीज़ की तरह उनके साथ घिसटती चली गयी थी. और जब वह लौटी तो अधमरी-सी थी. उसके पेट से जैसे किसी ने हाथ डालकर आंतें निकाल ली थीं. मां समझती हैं, उन्होंने बेटी के पाप से छुटकारा पा लिया है, परन्तु उन लोगों ने उसके साथ जो पाप किया है, उससे कैसे छुटकारा पाएंगे. उसके जीवन को वैधव्य का अभिशाप देकर उन्होंने अक्षम्य अपराध किया है, परन्तु इस अपराध की कहीं सुनवाई नहीं है. यह अपराध वैयक्तिक है और इसकी कहीं सज़ा नहीं है. इसीलिए लोग ऐसे अपराध

अपनी बहन-बेटियों के साथ करते रहते हैं. समाज के ठेकेदारों को ये अपराध दिखाई नहीं देते?

उसका पेट खाली हो चुका है और वह मन से भी रीत चुकी है. फिर भी मन में विचार उमड़ते रहते हैं. इतनी छोटी-सी उमर में, पच्चीस साल की उमर में, एक सुन्दर जवान लड़की ने जीवन के सारे दुःख और कष्ट झेल लिये थे. क्या उसने इतने बुरे कर्म किये हैं कि उनकी ये सजा उसे मिलती? वह पढ़ना चाहती थी, परन्तु मां ने पढ़ने न दिया. छोटी उम्र में उसकी शादी कर दी. एक साल के अंदर वह विधवा भी हो गयी. इस सबमें उसका क्या कसूर था? कोई भी तो नहीं, क्या परिवार और समाज के लोग ज़िम्मेदार नहीं थे? फिर सारे कसूरों की उसे ही क्यों सज़ा मिली? वह सोचती है, तर्क देती है, परन्तु दुनिया के किसी विधान में उसको अपने प्रश्नों के उत्तर नहीं मिलते. वह निरुत्तरित रह जाती है.

वह विधवा हो गयी थी, तो किस विधान के तहत उसे बेड़ियों में जकड़कर रखा गया? क्यों उस पर प्रतिबंध लगाए गए. एक अच्छी-भली, चंगी, सुन्दर और सुगठित नारी को क्यों नपुंसक बनाकर रखा जाता है. यह किस विधान के अन्तर्गत उचित है? उसे लगता है, दुनिया के सारे विधान झूठे हैं और सांसारिक लोगों ने इन्हें केवल अपने स्वार्थ के लिए गढ़ा है. सारे मर्द झूठे, मक्कार और स्वार्थी हैं.

स्वार्थी तो वह भी निकला. उसके बदन को चूसकर चला गया. बड़ा डरपोक निकला. वह जीवन भर के लिए उसका साथ चाहती थी. घर बसा लेती उसके साथ, चाहे घर से भागना पड़ता. कौन सा आसमान टूट पड़ता. न जाने कितनी लड़कियां घरों से भाग जाती हैं. लड़कों के साथ घर बसा लेती हैं. वह भी ऐसा कर लेती, तो कौन सा आसमान टूट पड़ता. उसे तो कोई ढूंढ़ने भी नहीं आता.

वह हर तरफ़ से ख़ाली हो चुकी है, तन से भी, मन से भी. अब उसके अंदर कुछ नहीं बचा, जीवन के प्रति सारी लालसा खत्म हो गयी, कोई चाह बाकी नहीं रही. उसे लग रहा था कि अब जीवन ऐसे ही गुजरता जाएगा, एक घुटन में, शांत नीरव और सीलन भरे कमरे की दीवारों के बीच...तभी उसे एक झटका लगा.

घर में होने वाली सुगबुगहाहटों के बीच पता चला कि उसके दूसरे ब्याह की तैयारियां हो रही हैं. पापा ने मम्मी को मना लिया है और मां के सनातनी धर्म के सारे नियम समय की आंधी के आगे टूट गये हैं. वह मन ही मन हंसी...अब जब वह ख़ाली हो चुकी है, तो मम्मी उसके लिए वर ढूंढ़ रही हैं. हां सच, कितनी अजीब बात है. जब उसे पति की ज़रूरत थी, तब सबने उसके पांवों में धर्म, परम्परा,

नैतिकता और मर्यादा की बेड़ियां डाल रखी थीं और अब जब उसकी सारी इच्छाएं और कामनाएं मर चुकी हैं, उसके लिए पति की तलाश की जा रही है. लगता है, मम्मी को अब उसके ऊपर विश्वास नहीं रहा, या उनको अपने पति के ऊपर नहीं रहा. वह हर हाल में उसे घर से बाहर निकाल बाहर कर देना चाहती हैं. वह नहीं चाहती कि लतिका अब दुबारा उनके घर में यह खेल खेले. अब उनके लिए सनातन धर्म के कोई मायने नहीं रह गये हैं. धर्म को अंगूठा दिखाकर वह उसकी दूसरी शादी करना चाहती हैं.

सोचकर उसे दुःख होता है. उसने जो खेल खेला, वह दुनिया की नज़रों में ग़लत है, परन्तु इसी दुनिया के लोगों का तथाकथित भगवान उसके साथ जो खेल खेल रहा है, वह क्या उचित है? उसके मन में तमाम प्रश्न हैं, परन्तु उत्तर नहीं हैं. कोई इनका उत्तर दे भी नहीं सकता, क्योंकि धार्मिक अंधविश्वास ने सभी के ज्ञान के ऊपर मनो मिट्टी डाल रखी है.

वह जानती है, उसके लिए वर मिलना मुश्किल नहीं है. दुनिया अब उतनी दकियानूसी नहीं रही. लोगों के दिमाग के पर्दों की धुंध छंट चुकी है, उनकी सोच बदल चुकी है. विधवा विवाह या दूसरे विवाह को लोग मान्यता दे रहे हैं. उसके मम्मी-पापा जैसे लोग अब दुनिया में इक्का-दुक्का ही होंगे.

कुंवारा पति तो उसे नहीं मिलेगा, परन्तु अथेढ़-बूढ़े रंडुवों की इस संसार में कमी नहीं है. मां किसी ऐसे ही पैसे वाले बूढ़े के पल्ले उसे बांध देगी और यह समझेंगी कि उन्होंने बेटी के तन को फिर से बांध दिया है, उसके ऊपर नैतिकता और मर्यादा के पहरे बिठा दिये हैं.

परन्तु क्या कोई ऐसा कर पाया है? वैधव्य का अभिशाप मिट जायेगा, परन्तु.. उसका मन दहल जाता है, रुलाई फूट पड़ती है. ख़ाली मन और टूटे तन को लेकर अब वह कहां जाएगी?



खुली आंखों के सपने

मम्मी शादी कर रही हैं!

हां, यहीं तो कहा था मम्मी ने फोन पर! ख़बर जितनी अविश्वसनीय थी, उतनी ही सच! एक कटु सच्चाई थी यह, जिस पर सहज विश्वास नहीं किया जा सकता था, परन्तु अविश्वास का कोई कारण नहीं था. स्वयं मम्मी ने फोन पर यह बात बताई थी. वह कैसे अविश्वास करती?

उसका दिमाग झनझनाकर रह गया था. ख़बर किसी विस्फोट से कम नहीं थी. मम्मी का फोन रखने के बाद न जाने कितनी देर तक वह माथे पर हाथ रखे, मेज पर कोहनी टिकाए बैठी रही थी. कई बार फोन की घंटी बजी, मोबाइल की घंटी बजी, परन्तु उसने फोन नहीं उठाया. जिस मानसिक स्थिति से वह गुजर रही थी, उसमें किसी से सामान्य ढंग से बात कर पाना उसके लिए संभव नहीं था.

दिमाग का बोझ कुछ हल्का हुआ तो उसने घंटी बजाई और अर्दली के आने पर उससे ड्राइवर को गाड़ी लगाने के लिए कहा.

“मैडम, आज इतनी जल्दी! तबीयत ठीक नहीं है क्या?” अर्दली ने स्नेहभाव से पूछा. वह एलिसन से उम्र में काफी बड़ा था. अगले साल रिटायर होनेवाला था.

“नहीं, बैजू! बस यूं ही मन भारी सा है. घर जाकर आराम करूंगी.” उसने कुर्सी से उठते हुए कहा. बैजू मैडम का सामान पहले ही उठा चुका था. यह रोज़ का नियम था. बैजू मैडम का सामान लेकर गाड़ी तक छोड़ने जाता था.

एलिसन को ऑफिस के पास ही दो कमरों का ट्रांजिट हॉस्टल अलॉट हुआ था. कहने को ट्रांजिट हॉस्टल था, परन्तु उसमें बड़े-बड़े अफसर सालों से कब्ज़ा जमाये बैठे थे. सरकारी बंगला अलॉट होने के बाद भी वहां नहीं गये थे, क्योंकि यह हॉस्टल सेंट्रल दिल्ली में था और सरकारी कार्यालय परिसर के बिल्कुल पास में था. इसके अतिरिक्त रेलवे स्टेशन और हवाई अड्डा भी सामान्य-सी दूरी पर थे.

इसके आसपास इंडिया गेट, खान मार्केट, लाजपत नगर, डिफेंस कालोनी, एम्स, सफदरजंग जैसे सम्प्रांत और सुविधासंपन्न इलाके थे। ऐसे में प्रगति विहार जैसे हॉस्टल को छोड़कर कौन अन्य इलाके में जाना पसंद करता।

कमरे पर पहुंचकर एलिसन ने स्वयं अपने लिए चाय बनाई। काम करने के लिए एक बाई रखी हुई थी, परन्तु वह केवल सुबह-शाम आती थी। अभी तो चार ही बजे थे। बाई छह बजे के बाद आती थी। एलिसन का सिर भारी-भारी सा लग रहा था, अतएव चाय के साथ सेरिडॉन की एक टिकिया खाकर बेडरूम में लेट रही। नींद तो कहां से आनी थी। जब दिमाग में विचारों का कारवां चल रहा हो, सोच के पंख आसमान तक फैले हों, तो नींद पलकों में कहां से आकर ठहर सकती थी। वह आंखें बंद किए चित लेटी विचारों के गांव में अकेली भटक रही थी। भटकते-भटकते वह बहुत दूर अपने बचपन में पहुंच गयी थी।

...तब वह दस साल की रही होगी। अपने मम्मी-पापा की इकलौती बेटी, दुलारी और प्यारी। बड़े सुखद दिन थे वे, जब मम्मी-पापा की छत्रछाया में वह अपने बचपन के दिन गुजार रही थी। मम्मी और पापा दोनों ही सरकारी नौकरी में थे। उनके जीवन में कोई अभाव नहीं था, परन्तु पता नहीं उनके सुखद जीवन में किसकी काली छाया पड़ गयी कि एक ही झटके में बसा-बसाया नीड़ उजड़ गया।

उसे याद है, उसके पापा को पीने की लत थी और यह लत धीरे-धीरे इतनी ज्यादा बढ़ गयी थी कि वह दिन में भी पीने लगे थे। इसी चक्कर में वह अक्सर दफ्तर से छुट्टी लेकर घर में पड़े रहते थे। मम्मी रोज टोंकती थी, मना करती थीं, परन्तु उनकी समझ में कुछ नहीं आया। उनके दोस्त भी समझाते, परन्तु जब किसी के बुरे दिन आते हैं, तो वह विवेक से काम लेना बंद कर देता है। यही एलिसन के पापा के साथ भी हुआ। न किसी के समझाने से वह सुधरे, न अपने विवेक से काम लिया और शराब के अति सेवन से उनके लिवर में सूजन आ गई। वह लिवर सिरोसिस के शिकार हो गये। डॉक्टरों ने चेतावनी दी, परन्तु वह सुधरने के बजाय और बिगड़ते गये। कई बार अस्पताल में भर्ती हुए, परन्तु अस्पताल के बाहर आते ही फिर पीना शुरू कर देते। नतीजा यह हुआ कि लिवर ने खून बनाना बंद कर दिया। उनके पेट में पानी भर गया। कई बार डॉक्टरों ने उनके पेट से पानी निकाला, परन्तु जब लिवर खून ही नहीं बना रहा था, तो धमनियों में कहां से दौड़ता। पूरे शरीर में पानी के सिवाय कुछ नहीं बचा था। मृत्यु से कुछ दिन पहले उनको पीलिया भी हो गया था। यह खतरनाक स्थिति थी। वह बच नहीं सके और

एक दिन अपनी पत्नी सिल्विया और बेटी एलिसन को इस दुनिया में अकेला छोड़कर महाप्रयाण पर निकल गये।

एलिसन के दिमाग में उन दिनों की हल्की छाया थी। वह बहुत दुख भरे दिन थे, परन्तु जीवन सदा एक सा नहीं रहता। धीरे-धीरे सब कुछ सामान्य हो जाता है। उसकी मम्मी ने अपने को संभाल लिया। खुद नौकरी करती थीं, पैसे की परेशानी नहीं थी, परन्तु बेटी को संभालने वाला घर में कोई नहीं था। नगरीय जीवन में सबको अपनी पड़ी रहती है। रिश्तेदार भी एक दूसरे के काम नहीं आते। बहुत सोच-विचारकर सिल्विया ने बेटी को एक कान्वेन्ट स्कूल में डाल दिया। वहां वह हॉस्टल में रहती थी।

एलिसन बचपन से ही पढ़ने में कुशाग्र थी। अपना अधिकतर समय वह पढ़ने में व्यतीत करती। मम्मी हर रविवार को उससे मिलने आती थीं और उसे बाहर घुमाने के लिए ले जाती थीं। उन्होंने कभी उसे पापा की कमी महसूस नहीं होने दी। इण्टर करने के बाद जब वह कॉलेज में गयी तो हॉस्टल छोड़कर अपने घर आ गयी। अब वह इतनी बड़ी हो गयी थी कि स्वयं को संभाल सकती थी और घर के कामों में मम्मी की मदद भी कर सकती थी। छोटे से परिवार में फिर से खुशियां लौटकर आ गई थीं।

एलिसन जब अपने घर लौटकर आई थी, तभी उसने देखा था कि उनके घर पर लगभग हर रविवार को एक पुरुष आता था। मम्मी उससे बड़ी आत्मीयता से मिलतीं और वह दोपहर का खाना उनके साथ ही खाता था। एलिसन ने जब उसके बारे में पूछा तो मम्मी ने बताया कि वह उनके गांव का व्यक्ति था और आजकल शहर में रहकर अपना कोई कारोबार कर रहा था। गांव के नाते हर रविवार को उनके यहां आ जाता था, परन्तु मम्मी उसके घर कभी नहीं जाती थी। न एलिसन को लेकर कभी उसके घर गयीं।

एलिसन इस मामले में तटस्थ-सी बनी रही। उसने मम्मी के व्यक्तिगत जीवन में कभी हस्तक्षेप नहीं किया। वह इतनी बड़ी हो गयी थी कि स्त्री का अकेलापन महसूस कर सकती थी। उसने मन ही मन सोचा- मम्मी संभवतः उस व्यक्ति के साथ भावनात्मक रूप से जुड़ी थीं। स्त्री को अगर किसी पुरुष का सहारा नहीं मिलता है तो वह टूट जाती है, बिखर जाती है। फिर उसे संभालना मुश्किल हो जाता है। मम्मी के अकेलेपन के कारण एलिसन ने कभी मम्मी के उस पुरुष के साथ संबंधों को लेकर कोई प्रश्न नहीं किया। वह अपनी पढ़ाई में लगी रही। वह

यूपीएससी की परीक्षा पास कर सिविल सर्विसेज में जाना चाहती थी. पढ़ाई के अलावा किसी अन्य चीज़ की तरफ़ उसका ध्यान भी नहीं जाता था. वह चाहती भी नहीं थी कि फालतू की बातों में अपना समय गंवाये.

लगन और निष्ठा के साथ वह अध्ययन में लगी रही तथा मम्मी के प्यार-स्नेह की छत्रछाया में आगे बढ़ती रही. ग्रेजुएट होते ही उसने प्रतियोगी परीक्षाओं के फार्म भरने शुरू कर दिये थे. उनकी तैयारी पहले से ही कर रही थी. पहले ही प्रयास में उसने यूपीएससी की सिविल परीक्षा का मेन निकाल लिया था. उसे विश्वास था कि वह इंटरव्यू भी निकाल लेगी और उसने निकाल भी लिया. बस एक कमी रह गयी कि मेरिट लिस्ट में नाम नीचे होने के कारण उसे सिविल सेवा की सम्बद्ध (allied) नौकरी मिली. उसकी पहली पोस्टिंग दिल्ली में हुई. दिल्ली में पोस्टिंग होने के कारण उसे अधिक दुख नहीं हुआ, क्योंकि यहां रहकर वह अगली प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी अच्छी तरह से कर सकती थी. वह यूपीएससी की परीक्षा देकर आइएएस या आइपीएस बनना चाहती थी.

मम्मी को रांची में छोड़कर वह दिल्ली आ गई. मम्मी की अपनी नौकरी थी. उनके दिल्ली आने का सवाल ही नहीं उठता था.

कुछ दिन बाद ही एलिसन को प्रगति विहार हॉस्टल में दो रूम का सेट अलॉट हो गया. दिल्ली में वह अकेली थी, परन्तु खुश थी. नौकरी के साथ-साथ वह यूपीएससी की परीक्षा की तैयारी भी करती जा रही थी. उसे विश्वास था कि अगली बार वह प्रथम श्रेणी की सेवा के लिये चयनित हो जाएगी. ऑफिस के काम और परीक्षा की तैयारियों में वह इस कदर व्यस्त थी कि उसे अपने व्यक्तिगत जीवन के लिए समय ही नहीं बचता था, परन्तु मनुष्य चाहे कितना भी व्यस्त क्यों न हो, जीवन के किसी न किसी मोड़ पर उसका दिल किसी अन्य पुरुष या स्त्री के लिये धड़कता है. तब उसे प्रेम की आवश्यकता महसूस होती है. हर व्यक्ति प्यार प्राप्त करना चाहता है और बदले में दूसरों को प्यार देना चाहता है.

एलिसन ने अपने जीवन के पच्चीस वर्ष व्यतीत कर लिये थे. कॉलेज के दिनों में लड़कों द्वारा उसे बहलाने-फुसलाने की चालू किस्म की हरकतों को छोड़ दें, तो उसने कभी गंभीरता से किसी के प्रेम प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया. उन दिनों प्रेम उसके लिए इतना आवश्यक नहीं था कि वह अपने लक्ष्य को भूलकर लड़कों के साथ मटरगस्ती करती फिरती. उसने कॉलेज के दिनों में लड़कों के प्रेम-प्रस्तावों को विनम्रता से ठुकरा दिया था और एकाकी जीवन व्यतीत करती हुई अपने लक्ष्य को

प्राप्त करने के लिए जुटी रही. तब लड़कियों और लड़कों ने उसे घमण्डी तक कहा, परन्तु उसने किसी की आलोचना की परवाह नहीं की. परवाह करती तो अपने लक्ष्य की तरफ़ नहीं बढ़ सकती थी. जो लोग अपने ऊपर होनेवाली छींटकशी और आलोचनाओं से निर्विकार रहते हैं, वहीं बीहड़ रास्तों को पार करते हुए अपनी मंज़िलों तक पहुंच पाते हैं. ऐसे लोग अपने साहस और हौसले से विपरीत परिस्थितियों में भी अपना मुकाम बनाने में सफल होते हैं.

उसकी निगाहों में उसकी मम्मी का त्यागपूर्ण जीवन एक उदाहरण बनकर खड़ा था. जब उसके पापा मरे थे, तब मम्मी मुश्किल से बत्तीस-तैंतीस साल की रही होगी. यह उम्र किसी औरत के वैधव्य की नहीं होती. इस उम्र में औरतों की आकांक्षाएं और कामनाएं न तो कम होती हैं, न मरती हैं; बल्कि और अधिक बलवती होती हैं. परन्तु सिल्विया ने अपनी बेटी के भविष्य के लिए अपनी इच्छाओं का दमन कर लिया. नहीं भी किया तो उन्हें अपने हृदय के अन्तस्तल में इतने गहरे दबा दिया कि वह अपने फन नहीं फैला पा रही थीं.

उसकी मां ने खुले तौर पर ऐसा कुछ नहीं किया कि लोग उनकी तरफ़ उंगली उठाकर कुछ कह सकते. यह तो केवल एलिसन ही जानती थी कि उनका संबंध एक व्यक्ति से था, परन्तु उस रिश्ते में कितनी गहराई थी और वह कितना पाक-साफ़ था, यह एलिसन को पता नहीं था. उसके घर में भी उसने कभी मम्मी को उस व्यक्ति के साथ हल्का व्यवहार करते या उससे लिपटते-चिपटते नहीं देखा. उनके व्यवहार में एक परिपक्वता और गरिमापूर्ण गांभीर्य था. वह दोनों कहीं बाहर मिलते थे, वह एलिसन को पता नहीं था.

और आज मम्मी ने फोन पर बताया था कि वह शादी करने जा रही थीं. अपने एकाकी जीवन से वह बहुत ऊब चुकी थीं और अब अपने जीवन में वह खुशियों के कुछ रंग भरने जा रही थीं. किसी भी स्त्री या पुरुष के लिए एक दूसरे का साथ बहुत ज़रूरी है. मनुष्य तो सामाजिक प्राणी है, परन्तु जानवर भी अकेले काफ़ी दिनों तक जिन्दा नहीं रह पाते हैं.

मम्मी के प्रेम-प्रसंग को एलिसन ने कभी अधिक महत्व नहीं दिया था, परन्तु आज उनके शादी करने के निर्णय से उसे अवश्य दुख हुआ था. अब जब वह स्वयं किसी के प्रेम में गिरफ़्तार थी और अपने जीवन को एक स्थायित्व देना चाहती थी, तब मम्मी की शादी की बात पर उसे आश्चर्य ही नहीं, दुख और क्षोभ भी हुआ था.

परन्तु फोन पर वह मम्मी से कुछ भी न कह सकी थी. उसकी जुबान को जैसे लकवा मार गया था.

एलिसन के विचार दूसरी तरफ़ मुड़ गये. वह अपने बारे में सोचने लगी. उसके दिल में प्रेम की चिंगारी तब भड़की जब उसने रवीन्द्र को पहली बार देखा था. वह एलिसन के ऑफिस में अपने किसी काम से आया था. नीचे वाले कर्मचारी उसका काम नहीं कर रहे थे. तब उसने एलिसन से मुलाकात करके अपनी परेशानी उसे बताई थी. एलिसन ने तुरन्त उसका काम करवा दिया था. एलिसन के व्यवहार से रवीन्द्र बहुत खुश हुआ था और वह उसका धन्यवाद करते नहीं थकता था.

उस दिन रवीन्द्र के व्यक्तित्व से एलिसन बहुत प्रभावित हुई थी. वह उससे लगभग एक साल ही बड़ा होगा. उठता हुआ कद था, गोरा-चिट्ठा पंजाबी मुंडा. उसके मुंह से पंजाबी मिश्रित हिन्दी बहुत मधुर लगती थी. एलिसन उसके सौम्य व्यवहार, मीठी वाणी और हंसमुख व्यक्तित्व से इतनी ज़्यादा प्रभावित हुई थी कि उसने रवीन्द्र को अपना मोबाइल नंबर देकर कहा था, “कभी कोई परेशानी हो तो मुझसे सीधे संपर्क कर लेना.” वह धन्यवाद करके चला गया और एलिसन काफी देर तक उसके मधुर व्यक्तित्व के आकर्षण में खोई-खोई सी बैठी रही.

एलिसन जब भी दफ़्तर में होती, वह प्रतीक्षा करती कि या तो रवीन्द्र स्वयं किसी न किसी काम के बहाने उसके पास आएगा, या उसका फोन आएगा, परन्तु रवीन्द्र ने उससे दुबारा संपर्क नहीं किया. इस बात से एलिसन के दिल को थोड़ी ठेस पहुंची और उसने अपने आत्म-सम्मान को आहत महसूस किया, परन्तु वह दिल के हाथों मजबूर थी. रवीन्द्र उसके खयालों से निकलता ही न था.

एलिसन एक ऐसे पद पर थी, जहां रोज़ाना उसे अनगिनत लोगों से मुलाकात करनी पड़ती थी. सभी अलग-अलग चरित्र और उम्र के होते थे. उसकी अपनी कॉलोनी में युवा अधिकारी थे. कई तो अविवाहित और अकेले थे. अक्सर आते-जाते उनसे मुलाकात हो जाती थी, बातें भी होती थीं, परन्तु किसी व्यक्ति ने उसे इतना प्रभावित नहीं किया था, जितना रवीन्द्र के व्यक्तित्व ने उसे किया था. वह उसके बारे में सोचने पर मजबूर हो गयी थी. जिस दिन उससे मिली थी, रात भर उसके बारे में सोचती रही थी और अपने दिल में एक मीठी कसक महसूस करती रही थी. इस मीठी कसक ने उसके युवा दिल में तरंगें भर दीं, आंखों में रंगीन सपनों की एक बगिया सजा दी. उस दिन पहली बार उसे महसूस हुआ कि जागती हुई रातों भी कितनी खूबसूरत होती हैं. उसके बाद वह कई रातों तक जागती रही थी,

रवीन्द्र की बातों को याद करती हुई. दिन तो ऑफिस के काम में बीत जाता, परन्तु रात उसकी अपनी होती. रात के साथ-साथ वह भी अकेली होती, तब वह रवीन्द्र के साए से अपने को अलग नहीं कर पाती थी. वह करना भी नहीं चाहती थी. यह उम्र ही ऐसी होती जब एक युवा लड़की किसी युवक के सपनों में खो जाना चाहती है, किसी की मजबूत बांहों में सिमट कर अपने अस्तित्व को भुला देना चाहती है.

अपने अस्तित्व को एक पूर्णता देने के लिए उसने स्वयं पहल की और एक दिन ऑफिस में लंच के टाइम उसने पूरे होशोहवाश में रवीन्द्र को फोन किया. उधर जैसे ही फोन की घंटी बजी, एलिसन का कलेजा जैसे हलक से बाहर आ गया. वह बहुत मजबूत इरादोंवाली लड़की थी, परन्तु प्रेम के मामलों में अक्सर दिल मीठी अनुभूति से धड़कता है, तो घबराहट से बेचैन भी हो जाता है. उस समय एलिसन का दिल कुछ ऐसी ही स्थिति से गुजर रहा था, परन्तु उसने फोन बंद नहीं किया. एक बार खयाल तो आया कि रवीन्द्र क्या सोचेगा? वह एक अधिकारी है, उच्च पद पर है और वह मात्र एक व्यापारी है. वह हजार बार अपने काम के लिए उसके पास आएगा, परन्तु एलिसन का कोई भी व्यक्तिगत या सरकारी काम उसके पास नहीं हो सकता था.

ऐसे खयाल केवल कुछ पल के लिए उसके मन में आए और जब तक निर्णयात्मक तौर पर वह उन गौर करती, तभी उधर से फोन पर आवाज आई, “हैलो, मैडम नमस्ते!”

तो रवीन्द्र ने उसका नंबर अपने फोन पर संचित कर रखा है. इससे उसके दिल को कुछ तसल्ली हुई. उसने हल्की-सी सांस ली और मन को मजबूत करती हुई बोली, “हैलो रवीन्द्रजी, कैसे हैं आप?”

“मैं बिल्कुल ठीक हूं, आप कैसी हैं मैम?”

“ठीक हूं, आपने फिर दुबारा संपर्क नहीं किया? आपका काम-काज़ ठीक चल रहा है न! कोई परेशानी या...”

“नहीं मैम, कोई दिक्कत या परेशानी नहीं. आपने एक बार नीचे कह दिया तो अब कोई मेरा काम नहीं रोकता. आपकी बहुत मेहरबानी!”

“अच्छा तो इसका मतलब आप मेरे दफ़्तर आते रहते हैं, परन्तु मुझसे कभी नहीं मिले?”

“वह क्या है मैम,” उधर से थोड़ी हिचकिचाहट के साथ रवीन्द्र ने कहा, “आप इतनी बड़ी अधिकारी हैं और मुझे अक्सर किसी न किसी काम से एक दफ़्तर से दूसरे दफ़्तर जाना ही पड़ता है. हर छोटी-बड़ी बात के लिए आपको क्या परेशान करना?”

“इसमें परेशानी की क्या बात? कभी यूँ ही औपचारिक तौर पर मिलने आ जाते.” एलिसन के स्वर में शिकायती भाव था, जैसे रवीन्द्र ने उससे न मिलकर कोई गुनाह कर दिया हो.

उधर से रवीन्द्र ने अपराधबोध से कहा, “ठीक है मैम, अगली बार जब भी आपके दफ़्तर आया, आपसे अवश्य मिलूंगा.”

कहावत है कि जो चीज़ हमारी पहुंच से दूर होती है, पकड़ में नहीं आती है, वह हमें अधिक आकर्षक लगती है और हम उसे प्राप्त करने के लिए तमाम जतन करते हैं. रवीन्द्र से एक बार मिलने के बाद एलिसन की भी यही अवस्था थी. वह उससे मिलने के लिए बेचैन थी और उधर रवीन्द्र उसकी पहुंच से बहुत दूर था, पकड़ में नहीं आ रहा था. परन्तु एलिसन हार नहीं माननेवाली थी.

रवीन्द्र उससे दो दिन बाद मिलने आया. अर्दली ने जैसे ही बताया कि कोई रवीन्द्र उससे मिलने आए हैं, वह चौंक उठी और लगभग हड़बड़ाहट में कुर्सी से उठ खड़ी हुई और तत्परता से बोली, “बुलाओ उन्हें, जल्दी. बाहर क्यों रोक रखा है?”

वैजू मैडम की हड़बड़ी देखकर हैरान रह गया. मैडम को हो क्या गया है? वह अधिकारी हैं. उनसे लोग मिलने आते ही रहते हैं. कभी किसी का नाम सुनकर चौंकी हो, घबराई हों, या हड़बड़ाहट में उठ खड़ी हुई हों, ऐसा तो कभी नहीं हुआ. यह रवीन्द्र है क्या चीज़, जिसने मैडम के मन में हड़बड़ी पैदा कर दी है, वैजू सोचता रह गया. उसे याद आ रहा था, यह रवीन्द्र तो अक्सर उनके ऑफिस में आता रहता है. एक बार मैडम से मिलने भी आया था, तब तो मैडम ने ऐसा व्यवहार नहीं किया था. बड़ी शालीनता और ठंडे दिमाग से उससे मिली थी, परन्तु आज क्या हो गया था? उसकी समझ में नहीं आ रहा था. वह गया और रवीन्द्र को अन्दर भेज दिया.

रवीन्द्र जब तक अन्दर नहीं आया, एलिसन खड़ी ही रही और इस तरह खड़ी थी जैसे प्रतीक्षारत कोई मूर्ति हो. उसकी आंखों में सूना आसमान बिखरा था, जैसे वह किसी को ढूँढ़ रही थी. चेहरे पर अभूतपूर्व चमक थी और होंठ खुले थे, जैसे रसपान करने के लिए आतुर हों. रवीन्द्र ने एलिसन को इस तरह खोया-खोया देखा तो नमस्ते करना भूल गया. उसे क्या पता था कि एलिसन के मन में क्या चल रहा

था? एक पल के लिए अचंचित और स्तंभित रह गया, फिर अपने को संभाल कर बोला, “मैडमजी नमस्ते, मैं रवीन्द्र! पहचाना आपने?”

रवीन्द्र की आवाज़ पर वह हकबका गयी और संभलकर कुर्सी पर बैठते हुए बोली, “हां, हां, रवीन्द्रजी, कैसे हैं आप? बैठिए.” उसने अपने मन को संभाला और शरीर को व्यवस्थित किया. मेज पर हाथ रखकर दोनों हाथों को मुट्ठियों में बांधकर कहा, “आखिर आपको मेरी याद आ ही गयी. किसी काम से आए हैं या बस मिलने...?” उसने अपने मन और तन दोनों को संतुलित कर लिया था. अब उसमें एक अधिकारी की गरिमा आ गयी थी, हालांकि उसकी आवाज़ में हल्का व्यंग्य भी था, जिसे रवीन्द्र ने महसूस कर लिया था.

“मैडम, आप अधिकारी हैं, और मैं एक व्यापारी ठहरा. मेरा काम तो आपके यहां पड़ता ही रहता है. परन्तु इस बार केवल आपसे मिलने आया हूं, ताकि आपको कोई शिकायत न रहे.”

“हूं,” एलिसन ने कुछ सोचते हुए कहा, “तो फिर अधिकारी नाराज़ न हो, इसके लिए आपको मुझसे बराबर मिलने के लिए आते रहना पड़ेगा.”

“जी, मैं समझा नहीं!” वह सहमकर बोला.

“अरे कुछ नहीं, मैंने तो बस यूँ ही मज़ाक में कह दिया. जब आपकी इच्छा हो, आप आ जाइए.” एलिसन ने हंसते हुए कहा. रवीन्द्र ने पहली बार एलिसन को हंसते हुए देखा था. माहौल हल्का-फुल्का हो गया था. रवीन्द्र को एलिसन की हंसी बहुत अच्छी लगी थी. उसके दांत बहुत सुंदर, मोती जैसे थे, जैसे माला में पिरोये गये हों. उड़ती नज़र से रवीन्द्र ने एलिसन के पूरे चेहरे को गौर से देखा, वह सुन्दर थी. माथे से लेकर, आंख, नाक, होंठ और टुड्डी तक सभी कुछ सुडौल, सुन्दर और आकर्षक था, जैसे किसी मंदिर की सुगढ़ कलामूर्ति. रवीन्द्र का हृदय धड़क उठा, परन्तु फिर उसने अपने को धिक्कारा! बचू सोच-समझकर इस राह पर कदम बढ़ाना. वैसे भी प्रेम की डगर फूलों भरी नहीं होती और यह राह तो दूर से ही कांटों भरी नज़र आती थी. कहां प्रशासनिक अधिकारी और कहां व्यापारी. दोनों के बीच दिलों का मेल हो सकता है, परन्तु सामाजिक विसंगतियों को कैसे मिटाया जा सकता है. रवीन्द्र अपराधीभाव से सिर झुकाकर बैठा रहा.

एलिसन ने वैजू को बुलाकर चाय के लिए कह दिया था. इस बीच दोनों में कोई बात नहीं हुई. रवीन्द्र संकोच और शर्म में डूबा हुआ था कि उसने मैडम को चाहत भरी नज़रों से देखा था, परन्तु एलिसन को उसके भावों का पता नहीं था. वह तो उसे देखे जा रही थी, बस देखे जा रही थी. पल भर के लिए भी उसकी

निगाह रवीन्द्र के चेहरे से हटती ही न थी. ऐसा लग रहा था, जैसे रवीन्द्र लड़की हो और एलिसन लड़का, जो प्यार में पहल कर रहा था.

चाय पीते हुए हल्की-फुल्की बातें हुईं, कुछ मन की, कुछ घर की. रवीन्द्र ने एलिसन के पारिवारिक संबंधों के बारे में कोई सवाल नहीं किया, एलिसन ही उसके घर-परिवार और व्यापार के बारे में जानकारी लेती रही. पहली नज़र में प्यार होना अलग बात है, परन्तु पहली बार में प्यार का इज़हार करना आसान नहीं होता.

परन्तु जब मन में कामनाएं मचलती हैं तो सारे बंधन ढीले हो जाते हैं.

चलते-चलते रवीन्द्र ने कहा, “यूँ तो मैडम, मैं किसी लायक नहीं हूँ, परन्तु कभी अगर आपको किसी चीज़ की ज़रूरत तो मुझे याद कर लीजिएगा.”

एलिसन बस मुस्कराती रही.

रवीन्द्र उसे अच्छा लगा था, उसको देखकर पहली बार उसका हृदय धड़का था और उसके बारे में सोचने के लिए मजबूर हो गयी थी. यही तो प्यार था.

रवीन्द्र बड़ी उलझन में था. एलिसन जैसी अधिकारी उसको फोन करके मिलने के लिए बुलाती है, बिना किसी काम के...क्या मकसद हो सकता है उसका? एलिसन के व्यवहार से उसके मन में शंका के बादल उमड़ रहे थे. एक मन कहता, एलिसन उसको पसंद करने लगी है. दूसरा मन कहता, यह उसका भ्रम हो सकता है. जवान, जहीन, सुन्दर और ज़िम्मेदारी के पद पर आसीन लड़की के लिए लड़कों की क्या कमी? इस उम्र तक क्या उसे किसी से प्यार नहीं हुआ होगा, अवश्य हुआ होगा? तो फिर एलिसन का उससे मिलने का कोई दूसरा मकसद हो सकता है? क्या हो सकता है? कुछ रुपया-पैसा, अर्थ लाभ या और कोई भौतिक आवश्यकता. परन्तु उसके लिए मैडम को उससे मिलने की क्या ज़रूरत है? उनके नीचे के कर्मचारी क्या उनका हिस्सा नहीं पहुंचाते होंगे? ज़रूर पहुंचाते होंगे, सरकारी तंत्र में ऐसा ही होता है.

रवीन्द्र जितना सोचता, उसकी उलझन उतनी ही बढ़ती जाती, परन्तु किसी निष्कर्ष पर वह नहीं पहुंच पा रहा था.

प्रगति विहार रेजीडेंट वेल्फेयर एसोसियेशन महत्वपूर्ण उत्सवों और पर्वों पर सभा आयोजित करता था. बच्चों के रंगारंग कार्यक्रम के अलावा गायन, नाटक और चित्रकला प्रतियोगितायें भी आयोजित होती थीं. एलिसन नियमित रूप से इन कार्यक्रमों में भाग लेती थी. इसी बहाने कॉलोनी की औरतों और पुरुषों से परिचय भी हो जाता था और उसका समय व्यतीत हो जाता था. ऐसे ही कार्यक्रमों के दौरान

उसका परिचय सुशांत से हुआ था. वह निर्माण विभाग में डिप्टी डायरेक्टर था और दिल्ली में लगभग पांच साल से तैनात था. अभी शादी नहीं की थी. वह अपने बुजुर्ग माता-पिता के साथ रहता था. संयोग से एलिसन और सुशांत कॉलोनी के एक ही ब्लॉक में रहते थे.

सुशांत एक सुलझे हुए दिमाग का साधारण कद-काठी का युवक था. बुद्धिमत्ता के अलावा उसके पास ऐसा कोई आकर्षण नहीं था कि कोई लड़की पहली नज़र में उस पर फ़िदा हो जाए. परन्तु वह एक कर्मठ कार्यकर्ता था. कॉलोनी में होनेवाले सभी कार्यक्रमों को आयोजित करने में उसका बड़ा योगदान होता था. इस नाते वह पूरी कॉलोनी में लोकप्रिय था. वह हमेशा इस कोशिश में रहता कि एलिसन की भी कालोनी के कार्यक्रमों में पूरी भागीदारी रहे. इस दौरान दोनों के बीच बहुत सारी बातें होतीं. सुशांत उससे बहुत मीठी बातें करता, और उससे बातें करते हुए उसका चेहरा मुस्कराता ही रहता. एलिसन सामान्य भाव से उसके साथ बात करती थी.

एक राष्ट्रीय पर्व के अवसर पर सुशांत ने अपने कुछ दोस्तों के साथ मिलकर दिल्ली से बाहर जाकर पिकनिक मनाने की योजना बनाई. उसके कुछ दोस्त शादीशुदा थे, कुछ कुंवारे. उसने एलिसन को भी निमंत्रित किया. एलिसन सहमत हो गई. वह भी बाहर निकलकर घूमना-फिरना चाहती थी. यह उन दिनों की बाद है, जब वह रवीन्द्र के प्रभाव में थी और रात-दिन उसके बारे में सोचा करती थी. उसने सोचा-क्यों न रवीन्द्र को भी अपने साथ ले ले. इसी बहाने वह अपने दिल की बात रवीन्द्र के दिल तक पहुंचा सकती थी. उसने खुशी मन से रवीन्द्र को फोन किया, “रवीन्द्रजी, मैं एलिसन, कैसे हैं?”

“आपकी मेहरबानी...” उसने सशक्त भाव से कहा.

“कल आप क्या कर रहे हैं?”

“कुछ खास नहीं, कल छुट्टी है. घर पर ही रहूंगा या हो सकता है बिजनेस के सिलसिले में कुछ दोस्तों से मिलने चला जाऊं.”

“अगर आपको कोई परेशानी न हो, तो एक दिन काम-धंधे से छुट्टी ले लीजिए. कल मुझे कहीं जाना है, क्या मेरे साथ चल सकते हैं?” एलिसन के स्वर में उत्साह था.

“कहां?” उसने उत्सुकता से पूछा.

“बहुत दूर नहीं. बस यही फरीदाबाद के पास सूरजकुंड तक चलेंगे. हमारे कुछ परिचित पिकनिक मनाने के लिए जा रहे हैं. मैं भी उनके साथ जा रही हूं. सोचा, आपको भी साथ लेती चलूं. अच्छा रहेगा.”

रवीन्द्र एक पल के लिए चुप रह गया. वह एलिसन के साथ पिकनिक पर जाकर क्या करेगा? वहां सभी अधिकारी होंगे, अपने परिवार के साथ होंगे. वह अकेला बाहरी व्यक्ति होगा, क्या यह किसी को अच्छा लगेगा.

“क्या सोचने लगे?” उसे चुप पाकर एलिसन ने पूछा.

“मैडम, मैं यह सोच रहा था कि आप सभी अधिकारी हैं. आप लोगों का एक साथ घूमना-फिरना, पिकनिक मनाना अच्छा लगता है. मैं उनके बीच में एक अजनबी की तरह रहूंगा, कितना अजीब लगेगा.”

“आप उसकी चिन्ता छोड़ दीजिए. आप मेरे साथ चल रहे हैं. बस आप इतना बताइये कि मेरे साथ चल रहे हैं या नहीं.” एलिसन के स्वर में अधिकार भाव आ गया था.

रवीन्द्र ने मन मारकर कहा, “मैं आपको कैसे मना कर सकता हूं. मैं अपनी गाड़ी से आपके यहां आ जाऊंगा. कितने बजे आना है?” वह अच्छी तरह जानता था कि एलिसन एक ऐसी पोजीशन में थी कि उसका बिगड़ा काम बना सकती थी और बना-बनाया काम बिगाड़ भी सकती थी. वह उसे नाराज़ करने का जोखिम नहीं उठा सकता था. परन्तु पिकनिक पर अपने साथ ले जाने के पीछे एलिसन की क्या मंशा थी, यह अभी तक रवीन्द्र पर प्रकट नहीं हुई थी. अब वह जानने के लिए बेताब था. इसीलिए पिकनिक पर जाने के लिए सहमति दे दी थी.

“तो ठीक है, कल सुबह प्रगति विहार के ई-ब्लॉक गेट पर आ जाना. मैं वहीं आ जाऊंगी.” एलिसन ने उसे बताया.

दूसरी सुबह रवीन्द्र समय पर प्रगति विहार पहुंच गया था. गेट पर पहुंचकर उसने एलिसन को फोन किया. एलिसन ने उसे घर पर नहीं बुलाया. उस वक़्त बाई काम करने के लिए आई हुई थी और एलिसन नहीं चाहती थी कि रवीन्द्र को घर पर बुलाकर बाई के मन में किसी प्रकार की शंका को जन्म दे. बाइयों का व्यवहार बड़ा विचित्र होता है. यह बिना जाने-समझे एक दूसरों के घरों की बातें इधर-उधर फैलाती रहती हैं और अनावश्यक अफवाहों को जन्म देती हैं. वह ऐसा कुछ नहीं चाहती थी.

उसने रवीन्द्र को गेट पर ही रुकने के लिए कहा. वहीं पर सबको इकट्ठा होना था.

वह जब तैयार होकर गेट पर पहुंची, तो लगभग सभी लोग इकट्ठा हो चुके थे. एलिसन को सजा-धजा देखकर सुशांत के दिल की धड़कन एक पल के लिए रुक गयी, परन्तु एलिसन ने उसकी तरफ़ ध्यान नहीं दिया. बस नमस्ते करके निगाहों ही निगाहों में रवीन्द्र को ढूंढने लगी. वह गेट के परली तरफ़ अपनी गाड़ी से सटकर खड़ा था. एक पल में ही दोनों की निगाहें आपस में मिलीं और दोनों के दिल एक साथ धड़क उठे. एलिसन के चेहरे की रौनक और आंखों में आई चमक ने रवीन्द्र के दिल को हिलाकर रख दिया. रवीन्द्र भी नीले रंग के सूट में किसी फिल्मी हीरो से कम नहीं लग रहा था.

सुशांत को जब पता चला कि एलिसन अपने किसी पुरुष मित्र के साथ पिकनिक पर चल रही है तो उसका चेहरा बुझ गया. उसके चेहरे पर उदासी की ढेर सारी बर्फ़ बिछ गयी, दिल के भीतर वीरान रेगिस्तान पसर गया, परन्तु बातों से उसने व्यक्त नहीं किया. उसके दिल पर क्या बीत रही थी, यह तो वहीं जानता था. न जाने कितने दिनों से वह इस दिन का इंतजार कर रहा था कि कभी एलिसन के साथ दो पल एकान्त में गुजार सके, उसके मन को टटोलकर उसकी बात जान सके और अपने मन को खोलकर एलिसन के सामने रख सके. यह मौक़ा आया भी तो ऐसा आया, जैसे बाढ़ और सूखा एक साथ लेकर आया था.

पिकनिक में रवीन्द्र सबसे कटा-कटा ही रहा, क्योंकि एलिसन के अलावा वह किसी को नहीं जानता था. सबके सामने वह एलिसन से भी अधिक बात नहीं कर रहा था, जैसे उसे वहां पकड़कर लाया गया था, परन्तु एलिसन जिस उद्देश्य से उसे लेकर अपने साथ गयी थी, उस मक़सद में वह काफ़ी हद तक सफल हो गयी थी. अपने आत्मीय व्यवहार से उसने रवीन्द्र के दिल में एक खास जगह बना ली और उसने रवीन्द्र पर यह जाहिर कर दिया था कि वह उसकी चिन्ता करती है और उसके लिए वह बहुत ‘खास’ है.

दोपहर का खाना खाने के बाद जब सभी लोग आराम कर रहे थे, तो एलिसन ने रवीन्द्र को एक तरफ़ चलने का इशारा किया. सुशांत देख रहा था. एलिसन सुनसान पेड़ों के झुण्ड की तरफ़ बढ़ रही थी और रवीन्द्र उसके पीछे-पीछे धिसटता-सा चल रहा था. एलिसन और रवीन्द्र को एकान्त की तरफ़ जाते देखकर सुशांत के दिल पर बर्छियां चलने लगीं, परन्तु वह कुछ करने की स्थिति में नहीं था.

चारों तरफ़ सन्नाटा था. झील का पानी शांत था. पेड़ भी शांत खड़े थे, जैसे वह एलिसन और रवीन्द्र के अभिसार में कोई विघ्न नहीं डालना चाहते थे. पेड़ों

के नीचे नर्म घास पर एलिसन बैठ गयी. रवीन्द्र खड़ा रहा तो एलिसन ने निःसंकोच उसका हाथ पकड़कर नीचे बिठा लिया.

“क्या बात है, कोई डर सता रहा है क्या?” उसने मुस्कराते हुए कहा.

रवीन्द्र खिसियाया-सा बोला, “नहीं, तो...”

“तो फिर खुलकर बात क्यों नहीं करते, कितना अच्छा मौसम है. धूप में नर्मी है और हवा ठहरी सी है. ऐसे में क्या आपको किसी लड़की का साथ अच्छा नहीं लग रहा है.”

रवीन्द्र चुप रह गया. उसने गौर से एलिसन की आंखों में देखा. उनमें एक अनोखी चमक थी. उस चमक में बहुत सारे संदेश थे... एक आमंत्रण था. उसकी आंखों के संदेश और आमंत्रण को पढ़कर वह कांप गया. क्या एलिसन के हृदय में रवीन्द्र के लिए प्यार का सागर उमड़ रहा था. अगर यह सच था, तो बहुत खतरनाक सच था.

रवीन्द्र की निगाहें अपने आप झुक गयीं. बोला, “अच्छा तो लग रहा है, परन्तु आप जानती हैं कि मेरी और आपकी स्थिति में कितना अंतर है.”

“हो सकता है, परन्तु हम पढ़े-लिखे लोग हैं. आज का समाज काफी आधुनिक है, हम चाहें तो सामाजिक विषमताओं और दूरियों को मिटा सकते हैं.” एलिसन ने आत्मविश्वास से कहा.

परन्तु रवीन्द्र उसकी बात से सहमत नहीं हो सका. वह अपनी सामाजिक और पारिवारिक परिस्थिति से अच्छी तरह वाकिफ था. उसके संस्कारों में जड़ता थी. वह शिक्षित था, अतः इस बात को अच्छी तरह समझता था. उसके समाज में परम्पराओं और जातिगत संस्कारों का पालन ईमानदारी और निष्ठा के साथ किया जाता था. शादी-ब्याह पूरी तरह से समाज और परिवार के संरक्षण में किये जाते थे. प्रेम-विवाह उनके समाज में न के बराबर थे.

रवीन्द्र को चुप देखकर एलिसन ने कहा, “जरा खुलकर बात करो, इतने सहमे-सहमें से क्यों हो?”

“मैं भविष्य के बारे में सोच रहा था.”

“उसके लिए अभी बहुत समय पड़ा है. भविष्य हमारे लिए क्या लेकर आता है, इसके बारे में हम नहीं जानते. फिर उसके बारे में सोचकर क्यों परेशान हों. परिस्थितियां और मनुष्य के कर्म उसके भाग्य को गढ़ते हैं, उसके जीवन को बनाते हैं; अतः हमें अपने कर्म निष्ठा, ईमानदारी और लगन से करते चलना है. जो होगा, अच्छा ही होगा.”

एलिसन की बातों में निश्चलता थी, भोलापन था और आशाओं का विशाल आसमान था. काश, उसके सपने कभी न टूटें, रवीन्द्र ने सोचा.

उन दोनों के मन के पर्दे उस दिन थोड़ा-थोड़ा खुले. वह एक दूसरे के दिल के दरवाजे पर दस्तक दे रहे थे. एक तरफ चंचलता थी तो दूसरी तरफ संकोच और अनिश्चितता की दीवार, जिसकी वजह से एक दूसरे के दिलों में प्रवेश करने में थोड़ी रुकावट आ रही थी, परन्तु यह रुकावट बहुत झीनी थी. प्यार हर तरह की दीवार को गिरा देता है. रवीन्द्र के संकोच की दीवार भी एक दिन गिरनी ही थी. एलिसन के प्यार की कशिश के सामने वह पिघलती हुई बर्फ के समान था.

एलिसन और रवीन्द्र के बीच की नजदीकियों ने सुशांत को एलिसन से काफी दूर कर दिया.

उस सारा दिन सुशांत काफी बेचैन सा रहा. वह एलिसन से बात करना चाहता था, परन्तु वह उसकी तरफ बिल्कुल ध्यान नहीं दे रही थी. उसका पूरा ध्यान रवीन्द्र के ऊपर केन्द्रित था. वह एलिसन का ध्यान आकर्षित करने की कोशिश करता तो वह एक फीकी सी मुस्कान उसकी तरफ फेंककर फिर रवीन्द्र से बात करने लगती. वह चोट खाए नाग की तरह अंदर ही अंदर फुंफकार मारता और शांत हो जाता. वह समझ गया, एलिसन और रवीन्द्र के बीच बहुत कुछ पक रहा था. इससे उसके दिल को चोट पहुंची और वह मन मसोहकर रह गया.

रवीन्द्र और एलिसन की अगली मुलाकात एक होटल की लॉबी के जगमगाते रेस्तरां में हुई.

बाहर शाम गहराने लगी थी, परन्तु सड़क की रोशनी से सब कुछ जगमग था. रेस्तरां के अंदर भी रोशनी की जगमगाहट थी. अंदर बैठे लोगों को पता नहीं चलता था कि बाहर रात कितनी गहरी हो गयी है. एलिसन खुश थी कि आज उसे अपने ‘प्रियतम’ के साथ पहली बार एकांत मिल रहा था. वहीं रवीन्द्र भी खुश था. एलिसन जैसी लड़की किसी लड़के को भाग्य से ही मिलती है, परन्तु उसके मन से अभी तक यह आशंका दूर नहीं हुई थी कि एलिसन का प्यार पता नहीं उसे कहां ले जाएगा? वह स्वयं उसका कितना साथ निभा पाएगा. प्यार करने के लिए कोई प्रतिबंध नहीं था, क्योंकि इसमें किसी को परिवार की स्वीकृति नहीं लेनी पड़ती है, परन्तु जब बात प्यार के आगे शादी तक बढ़ती है, तो समस्याओं का पहाड़ सिर उठाने लगता है. परिवार ही नहीं, समाज भी प्यार के बीच में बाधा बनकर खड़ा हो जाता है. लोग अलग से विरोध के स्वर बुलंद करने लगते हैं.

रवीन्द्र ने उसे बताया, “मैं आपका बहुत शुक्रगुजार हूँ, परन्तु मेरे मन में एक डर है. मैं एक रूढ़िवादी परिवार का लड़का हूँ. दिल्ली में रहते हुए भी हम परंपरावादी संस्कारों में जकड़े हुए लोग हैं. हम दोनों का रिश्ता कहां जाकर समाप्त होगा, मैं नहीं बता सकता. बस अनुमान लगा सकता हूँ.”

एलिसन गौर से उसके चेहरे के भावों को पढ़ने का यत्न कर रही थी. फिर बोली, “पता तो मुझे भी नहीं है. वास्तव में युवावस्था में होनेवाले प्यार के परिणाम के बारे में कोई भी निश्चित तौर पर कुछ नहीं कह सकता. हम प्यार करते हैं, क्योंकि हमारे दिल की भावनाओं में प्रेम का ज्वार उठता है. हम उसे दबा नहीं पाते. स्वाभाविक है कि हमें एक दूसरे से प्यार हो जाता है. इसके बाद हम सोचते हैं कि प्यार की क्या परिणति होगी...हम इसको किस अंजाम तक पहुंचा सकते हैं. इसलिए अभी हमको किसी दुश्चिन्ता से अपने आपको हैरान-परेशान करने की ज़रूरत नहीं है. जैसा चल रहा है, चलने दीजिए. हो सकता है, अंत में इसका हल भी निकल आये.”

“वैसे प्यार का अंत बहुत दुःखदायी होता है.” रवीन्द्र ने गुरु गंभीर स्वर में कहा.

“अच्छा, क्या आपको इसका अनुभव है?”

“हां,” रवीन्द्र ने स्वीकारोक्ति की, “कॉलेज के दिनों में मुझे एक लड़की से प्यार हुआ था, उसे भी मुझसे बहुत प्यार था. हम दो साल तक एक दूसरे को प्यार करते रहे. परन्तु कॉलेज समाप्त होते ही वह अपने मां-बाप के साथ दूसरे शहर चली गयी. बड़ी ही आसानी से उसने टाटा-बाय-बाय कह दिया और बिना किसी परिणाम के मेरा प्यार बरसात की पहली बूंद की तरह धूल में मिल गया. वह दिन बड़े कष्ट भरे थे. फिर किसी तरह मैंने अपने को संभाला और व्यापार में मन लगा दिया. पापा चाहते थे कि मैं पोस्ट ग्रेजुएशन करूं, परन्तु फिर मेरा मन पढ़ाई में नहीं लगा. मैंने प्यार के साथ-साथ कॉलेज को भी अलविदा कह दिया.”

एलिसन चुप रही. उसने कोई टिप्पणी नहीं की. बस वह सोचती रही, पता नहीं उनके प्यार को कौन सी मंज़िल मिलेगी. कहीं यह भी बिना किसी अंजाम के आंसू बहाता न रह जाए. विद्वानों ने सही कहा है कि प्यार की परिणति आंसुओं में होती है. बहुत कम ऐसे सौभाग्यशाली होते हैं, जो अपने प्यार की मंज़िल को प्राप्त कर खुशियों के राजमहल में रहते हैं.

समझदार लोग राह चलने के पहले उसमें आने वाली कठिनाइयां और मुसीबतों के डर से घर में नहीं बैठे रहते हैं. एलिसन ने अपने दिमाग में चलने वाले बुरे विचारों को झटक दिया और मुस्कराते हुए रवीन्द्र का दायां हाथ पकड़कर कहा, “सुख के पलों में दुःख के बारे में न सोचें तो बेहतर होगा. चलो, खुशनुमा मौसम की बातें करें, रंगीन सपनों की बातें करें, उज्ज्वल भविष्य की बातें करें, बहारों की बातें करें, चहाचहाती चिड़ियों की बातें करें. अभी पतझड़ बहुत दूर है.” कहते-कहते उसकी आंखों में जैसे उन्माद छा गया, उसके स्वर में मादकता झलकने लगी और कुछ पलों के लिए उसकी आंखें जैसे सुख के अहसास से बंद हो गयी थीं.

रवीन्द्र ने उसके स्वप्निल संसार को नहीं तोड़ा.

दिन अब खूबसूरत हो गये थे. रूखे-सूखे तो पहले भी नहीं थे, परन्तु अब हवा में एक मादक गुनगुनाहट सुनाई देती थी, वातावरण महकता सा लगता था, आसमान खुला-खुला था और उसका नीलापन आंखों को सुखद ठंडा अहसास देता था. दिन खयालों में बीतते थे, तो रात में सपने आंखों में आकर नृत्य करते थे. प्यार एक ऐसी सुखद अनुभूति है, जो हमें मार्ग में आनेवाली कठिनाइयों और परेशानियों की तरफ सोचने भी नहीं देती.

एलिसन का व्यवहार घर में काफी हद तक बदल गया था. वह उठते-बैठते कुछ सोच-सोचकर मुस्कराती रहती, कभी-कभी कुछ गुनगुनाने भी लगती थी.

सुख-सपनों के संसार में खोई एलिसन को पता ही नहीं चल रहा था कि उसके बहुत पास में कोई उसको लेकर रात-दिन चिन्तित रहता है. रवीन्द्र के साथ जुड़ने के बाद उसका ध्यान भी उसकी तरफ नहीं गया था.

एक दिन सुशांत से कॉलोनी के गेट पर उसकी मुलाकात हो गयी. दोनों अपनी-अपनी गाड़ियों से उतर रहे थे. नज़रें मिलीं, तो दोनों के चेहरों पर मुस्कराहट तैर गयी. एलिसन की मुस्कराहट खिली-खिली थी तो सुशांत की मुस्कराहट में रुआंसे बादल छाये हुए थे. आपस में नमस्कार करने के बाद सुशांत ने ही पूछा, “कैसी हैं आप?”

“बिल्कुल ठीक, आप कैसे हैं? कोई नया कार्यक्रम नहीं हो रहा है?” दोनों ब्लॉक की तरफ चलते हुए बात कर रहे थे.

“हां, दीवाली आनेवाली है. उसके बाद हमारे प्रदेश का विशेष त्योहार छठ आनेवाली है. दीवाली के मौके पर जमघट के दिन हम लोगों ने सोचा था, कोई कार्यक्रम रखते, परन्तु इस बार किसी ने कोई उत्साह नहीं दिखाया, अतः मैं भी पीछे

हट गया. हां, अगर आप दीवाली में यही हैं, तो मैं छट वाले दिन आपको अपने घर पर आमंत्रित करना चाहता हूँ.”

“अरे, आप क्यों तकलीफ़ उठाते हैं?” एलिसन ने सहज भाव से कह दिया.

“देखिए, यह हमारा महत्वपूर्ण त्योहार है, परन्तु अगर आप मेरा अनुग्रह और अनुरोध मानकर घर पर आएंगी तो हमें बहुत अच्छा लगेगा. आपको मैं व्यक्तिगत तौर पर कभी घर नहीं बुला सका. यह एक मौका आया है. इसी बहाने आप मेरी मां और पापा से मुलाकात कर पाएंगी. आपको घर जैसा लगेगा.”

एलिसन ने कुछ सोचा और फिर चहककर मुस्कराते हुए कहा, “ठीक है, अगर आपको इससे खुशी मिलती है तो मैं ज़रूर आऊंगी.”

सुशांत के चेहरे पर कई रंगों के फूल खिल गये.

छट वाले दिन एलिसन सुशांत के घर गयी. सुशांत ने बहुत गर्मजोशी से उसका स्वागत किया. उसको देखकर सुशांत के हृदय के तार झनझना उठे थे, हालांकि वह बहुत साधारण तरीके से सज-धजकर गयी थी, परन्तु पुरुष जिस स्त्री को प्यार करता है, वह उसे हर प्रकार से सुन्दर लगती है. सुशांत के मां-पापा से मिलकर भी एलिसन को ऐसा नहीं लगा जैसे उनसे पहली बार मिल रही है. दोनों बहुत सुसंस्कृत और आत्मीय थे.

खान-पान के दौरान सभी ज़बरदस्ती उसे खिला रहे थे, ‘यह भी लो,’ ‘इसे चखकर देखो, यह नया पकवान है,’ ‘इसे कभी नहीं खाया होगा,’ ‘तुम तो कुछ खा भी नहीं रही हो,’ ‘मेरे घर से भूखी जाओगी तो हमें अच्छा नहीं लगेगा.’ आदि-आदि. प्यार और स्नेह में एलिसन कुछ ज़्यादा ही खा गयी.

खाना खाने के बाद वह एलिसन को छोड़ने उसके फ्लैट तक गया. गैलरी में चलते हुए सुशांत ने पूछा, “मेरे मम्मी-पापा कैसे लगे?”

“बहुत ही अच्छे, ऐसा लग रहा था जैसे वह मेरे ही मम्मी-पापा हों. आपके घर जो लड़की आएगी, वह ऐसे सास-ससुर पाकर धन्य हो जाएगी.”

सुशांत ने अर्थपूर्ण नज़रों से एलिसन को देखा, उसकी आंखों के भावों को देखकर एलिसन पल भर के लिए सकते में आ गयी. सहमकर पूछा, “ऐसे क्यों देख रहे हो, क्या मैंने कुछ ग़लत कह दिया?”

“नहीं, तुमने बिल्कुल सही कहा, परन्तु सवाल ये है कि वह कौन भाग्यशाली लड़की है?”

“क्या आपके मन में कोई नहीं है?” एलिसन ने धड़कते दिल से पूछा.

“है तो, परन्तु मुझे नहीं पता कि उसके दिल में भी मेरे लिए कुछ है. अतः कह नहीं सकता कि वह कभी मेरे घर की शोभा बनेगी.” सुशांत ने सिर झुकाकर उदास स्वर में कहा.

एलिसन कुछ कह न सकी. कई बार उसने महसूस किया था कि उसके प्रति सुशांत के मन में कोमल भाव हैं, परन्तु उसने अपने अंतरमन से उनको निकाल दिया था, क्योंकि वह किसी और से प्रभावित थी. उसका मन दूसरी दिशा में दौड़ रहा था. सुशांत को भूलकर वह रवीन्द्र से दिल लगा बैठी.

रात गहराने लगी थी और हवा में ठंडक थी. उसने सड़क की तरफ़ देखा. कुछ गाड़ियां चीखती हुई अपने गंतव्य की तरफ़ भागी जा रही थीं, सड़क की पीली-सफ़ेद रोशनी चारों तरफ़ जगमगा रही थी. एलिसन का मन भी अचानक उदास हो गया. उदासी का कोई कारण नहीं था, परन्तु सुशांत की बातों का अर्थ उसे बखूबी मालूम था. वह समझ रही थी कि मन ही मन वह उसे प्यार करने लगा है. पिकनिक वाले दिन भी वह कितना उदास रहा था, परन्तु तब एलिसन रवीन्द्र को अपने मन में बसाये एक ऐसे उड़नखटोले में उड़ रही थी, जहां से धरती की कोई चीज़ उसे दिखाई नहीं पड़ रही थी. उसकी आंखों में खुला आसमान था, वह उड़ रही थी, परन्तु उसे पता नहीं था कि वह उड़कर कहां पहुंचेगी? लड़कियों की आंखों में जब आसमान भर जाता है, तो उनकी सोच का विस्तार इतना बड़ा हो जाता है कि उन्हें अपने पैर कहीं टिकते दिखाई नहीं देते. लड़कियां चाहे शिक्षित हों या अशिक्षित, सबके साथ यही होता है, क्योंकि प्यार के मामले में लड़कियां ज्ञान से काम नहीं लेतीं.

एलिसन के घर के दरवाजे से सुशांत ने उसे विदा किया. एलिसन ने उसे धन्यवाद देते हुए कहा, “गुडनाइट, सुशांतजी, आपकी मेहमाननवाज़ी के लिए बहुत-बहुत शुक्रिया. आप वाकई बहुत अच्छे इंसान हैं.”

सुशांत की आंखों में चमक के साथ-साथ एक गीलापन दिखाई देने लगा था, जैसे उसकी आंखें कह रही थीं, इस अच्छे इंसान को तुम्हारी तलाश है.

सुशांत का उसके प्रति अनुराग उसे कहीं भटका न दे, इसलिए उसने तय किया कि वह रवीन्द्र से जल्दी ही शादी की बात करेगी. मम्मी को उसने अभी तक कुछ नहीं बताया था. अभी-अभी तो उसका प्रेम प्रगाढ़ हुआ था, थोड़ा और परिपक्व हो जाता तो अच्छा होता. प्रेम और शादी के मामले में जल्दबाजी अच्छी नहीं होती. और फिर अभी एलिसन पच्चीस की ही हुई थी, सिविल सर्विसेज की तैयारी भी कर रही थी. शादी करने के बाद उसे तैयारी करने का मौका मिलेगा या नहीं, वह कह नहीं

सकती थी, क्योंकि रवीन्द्र के पारिवारिक परिवेश के बारे में उसे अधिक जानकारी नहीं थी।

एलिसन साफ दिल की कोमल हृदय लड़की थी। वह नहीं चाहती थी कि उसे लेकर सुशांत अपने मन में कोई गलतफहमी पाल ले और बाद में उसे मानसिक कष्ट हो, अतएव उसने जल्दी ही रवीन्द्र से बात की।

“शादी के बारे में आपका क्या ख्याल है?” एलिसन ने रवीन्द्र से पूछा।

रवीन्द्र उसके इस प्रश्न से चौंका। इस बारे में उसने अभी तक सोचा नहीं था। उसने एलिसन के चेहरे को देखा। उसके चेहरे पर निश्चल मुस्कराहट तैर रही थी, उसकी आंखों में चमक थी और उस चमक में आशा की किरणें थीं।

रवीन्द्र एलिसन की बात क्या जवाब दे। उसके मन में हिचकिचाहट थी। मन में सैकड़ों विचार एक साथ गुजर गये। वह बनिया परिवार का लड़का था। उसका परिवार ही नहीं, पूरा समाज स्त्रिवादी परम्पराओं में जकड़ा हुआ था। उनके अपने नैतिक मूल्य थे और एक सामाजिक मर्यादा थी, उसी का अनुपालन करते हुए वह जीवन पथ पर अग्रसर होते थे।

एक क्रिश्चियन लड़की के साथ उसके विवाह को न तो उसका परिवार स्वीकार करेगा, न समाज, यह बात वह अच्छी तरह जानता था। भागकर प्रेम विवाह कर लेना अलग बात थी, परन्तु पारिवारिक धन-दौलत को लात मारकर कौन बेवकूफ इतनी बड़ी गलती करेगा।

“तुमने कुछ जवाब नहीं दिया?” उसे चुप देखकर एलिसन ने उसे टहोका मारा। वह अपने विचारों से चौंकर बाहर आया, और बेचारी के भाव से कहा, “इस बारे में मैं क्या बताऊँ? मम्मी और पापा ही इस बारे में कोई निर्णय लेंगे।”

एलिसन ने गंभीरता से कहा, “तुम्हारा अपना कोई निर्णय नहीं है? देखो, अब मैं तुम्हें लेकर काफ़ी सीरियस हूँ। तुम मेरा पहला प्यार हो, यह उतना ही सच है, जितना सूरज और चांद, धरती और आकाश।”

“जानता हूँ, परन्तु मेरा परिवार कहीं आड़े न आ जाए।” रवीन्द्र के अंदर का डर बाहर आ गया।

“मेरे भी मन में कभी-कभी यह खयाल आता है कि तुम मेरे प्रति उतने सीरियस नहीं हो। अपने मम्मी-पापा से एक बार बात करके देखो, मेरा खयाल है, उन्हें एक पढ़ी-लिखी और प्रतिष्ठित पद पर स्थापित बहू पाकर खुशी ही होगी।”

रवीन्द्र ने अफसोस के साथ सोचा- काश, ऐसा हो सकता। एलिसन बहुत भोली और मासूम है। वह नहीं जानती है कि हिन्दू धर्म में कितनी जटिलताएं हैं। वह क्रिश्चियन समाज की खुले दिमाग की लड़की है, उसने खुला परिवेश देखा है, साफ-सुथरा आसमान देखा है, परन्तु तंग गलियों का अंधेरा उसने नहीं देखा है। उनके परिवेश और रवीन्द्र के परिवेश में ज़मीन-आसमान का अन्तर है और इस अंतर को बिना भोगे नहीं समझा जा सकता था। एलिसन ने जो अपने समाज में देखा था और जो कुछ उसने किताबों में पढ़ा था या फिल्मों में देखा था, वह वास्तविक दुनिया से बहुत दूर की चीज़ थी।

एलिसन का दिल न टूटे, इसलिए उसने कह दिया, “मैं बात करूंगा।” बस इतना ही, एलिसन को संतोष नहीं हुआ। उसने उसकी बांह पकड़ते हुए कहा, “तुम एक बार मुझे अपने घर ले चलो। मैं स्वयं तुम्हारे मम्मी-पापा से बात करूंगी।”

...यह इतना आसान नहीं है, उसने मन ही मन सोचा, परन्तु ऊपरी तौर पर कहा- “अच्छा, मैं किसी दिन ले चलूंगा।” वह जानता था, वह दिन कभी नहीं आनेवाला था। उसे अपने परिवार के बारे में पता था, अपने संस्कार उसे ज्ञात थे और अपने इर्द-गिर्द की सामाजिक संरचना से वह पूरी तरह से वाकिफ़ था। उसके मन में कोई गलतफहमी नहीं थी, परन्तु वह एलिसन को भ्रम में रखे हुए था, उससे प्यार का दिखावा कर रहा था। हां, यह मात्र दिखावा ही था। एक प्रेमिका से अधिक एक अधिकारी के रूप में एलिसन उसके हृदय में अधिकार जमाकर बैठी थी। वह किसी तरह से एलिसन को नाराज़ नहीं कर सकता था।

वह उस दिन का इंतज़ार करने लगा, जब उसके मन में इतना साहस आ जायेगा कि वह एलिसन को सबकुछ खुलकर बता सके। इधर रवीन्द्र अपने मन को मजबूत बना रहा था, उधर एलिसन उस दिन का इंतज़ार कर रही थी, जब वह रवीन्द्र के घर जाकर उसके परिवारवालों से मिलेगी, उसके साथ अपनी शादी की बात करेगी। प्रेम में पड़ने के बाद लड़कियों को हर रास्ता सुगम और सरल लगता है, परन्तु यथार्थ में ऐसा नहीं होता है।

वह दिन आने के पहले ही मम्मी का फोन आ गया था। उन्होंने कहा था कि वह शादी कर रही हैं। एलिसन के शांत जीवन में अचानक ही खलबली मच गयी थी। शांत झील का जल अचानक ही ऊंची-ऊंची तरंगें भरने लगा था, लहरें बेकाबू होती जा रही थीं।

इतना बड़ा झंझावात एलिसन के जीवन में पहली बार नहीं आया था. एक बार पहले भी ऐसा ही झंझावात उसके पिता की मृत्यु के रूप में उसके जीवन में आया था. परन्तु जब उसके पिता गुजरे थे, तब वह बहुत छोटी थी और उसके पास मां का सहारा था. आज मांरूपी चट्टान ही ढहने जा रही थी. फिर भी आज वह इतनी बड़ी थी कि समझदारी से हादसों को टाल सकती थी, सुलझा सकती थी, परन्तु अचानक हुए इस अकल्पनीय घटनाक्रम से वह चकित और हतप्रभ रह गयी थी. उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि ऐसी स्थिति में वह करे तो क्या करे? किसी को बता भी तो नहीं सकती, रवीन्द्र को तो बिल्कुल नहीं. वह और उसके परिवारवाले क्या सोचेंगे? जिस उम्र में बेटी शादी के ख्वाब देख रही हो, उस उम्र में उसकी मां अपनी शादी रचाने जा रही हो, तो बेटी के दिल पर क्या गुजरती होगी, यह एलिसन के सिवा कौन समझ सकता था.

बचपन से लेकर जवानी तक की एक-एक घटना एलिसन के दिमाग में दौड़ने लगी थी.

बहरहाल, उसने किसी को कुछ नहीं बताया और अन्दर ही अंदर अपना दर्द पीने का प्रयास करती रही. मां ने उसे आने से मना किया था. वह जाना भी नहीं चाहती थी. मां बुलातीं तब भी नहीं...वह अपने नए बाप का मुंह नहीं देखना चाहती थी. पता नहीं कौन था? क्या वहीं, जो उसके सामने उसके घर में आया करता था? जो भी हो, उससे एलिसन का कोई वास्ता नहीं था.

मानसिक संताप के कारण एलिसन ने एक सप्ताह की छुट्टी ली और घर पर आराम करती रही. रवीन्द्र मिलने आया, तो उसने बुखार और सिरदर्द का बहाना बना दिया, परन्तु उसे अपने मन की बात नहीं बताई. बताती तो भी वह कुछ नहीं कर सकता था. यह दर्द उसका अपना दर्द था और इसे किसी को बांटा नहीं जा सकता था. सुशांत भी शायद उसकी दिनचर्या की टोह में रहता था. उसे ऑफिस आते-जाते नहीं देखा, तो उससे मिलने उसके घर आ गया. एलिसन को बुरा नहीं लगा. आखिर वह उसका शुभचिंतक था. उसने उसका मुस्करा कर स्वागत किया. काफी देर तक वह बैठा रहा, उसका हाल-चाल पूछा और अपनी सीधी-सरल बातों से उसका मन बहलाता रहा.

उसी सप्ताहांत में फिर मम्मी का फोन आया. उन्होंने बताया कि वह रविवार को चर्च में शादी कर रही हैं. वह बेटी का कष्ट समझ सकती थीं, इसीलिए उसे बुला नहीं रही थीं, परन्तु उन्होंने वायदा किया कि जब कभी मौका मिला तो वह बेटी

के सामने अपने मन को खोलकर रख देंगी और तब एलिसन को पता चलेगा कि उम्र के आखिरी पड़ाव में क्यों एक नारी को पुरुष को या एक पुरुष को नारी की आवश्यकता महसूस होती है. एलिसन ने मां की किसी बात का जवाब नहीं दिया था और वह चुपचाप उनकी बात सुनती रही थी. अंत में उन्होंने कहा था कि शादी के बाद अगले दिन वह अमेरिका चली जाएंगी, जहां उनके पति का अच्छा कारोबार था. भारत के मकान को फिलहाल ताले के अंदर कैद रखा जाएगा और अगर एलिसन चाहेगी तो उसे अपने पास रखेगी या उसे बेच कर उससे प्राप्त आय को अपने तरीके से खर्च कर सकती थी. उन्होंने कहा था कि अगर घर में नहीं तो एयरपोर्ट पर ही आकर एक बार मां से मिल ले, परन्तु एलिसन ने हां या ना कुछ नहीं कहा और उसकी मम्मी को यह अहसास हो गया कि एलिसन नहीं आएगी. तब उन्होंने कहा कि वह घर की चाभी कूरियर से उसके पास भेज देंगी.

एलिसन के दिल पर यह एक और प्रहार हुआ था, जिसे उसने चुपचाप सह लिया. उसके पास बस रवीन्द्र के प्यार का सहारा था. परन्तु उस प्यार में भी जंग लगने के आसार दिखाई पड़ने लगे थे.

कुछ दिन और बीते तो उसने महसूस किया कि रवीन्द्र उससे मिलने में कतराने लगा है. कारोबार की व्यस्तता वह समझ सकती थी, परन्तु छुट्टियों के दिन भी वह अति व्यस्त रहने का बहाना बनाता था. एलिसन उसके साथ फिर भी नर्म व्यवहार करती रही. प्यार में कठोरता से कोई लाभ नहीं मिलता, यह बात वह जानती थी. जोर-जबरदस्ती से किसी का प्यार नहीं हासिल किया जा सकता है. यह एक ऐसी अनुभूति होती है, जो अगर किसी के दिल में नहीं पनपती तो मुंह से बोला जानेवाला प्यार मात्र एक दिखावा है, किसी का शरीर पाने का एक बहाना.

एलिसन ने रवीन्द्र से दो टूक बात करने का निश्चय किया. अगले रविवार को उसने रवीन्द्र को मिलने के लिए बुलाया. वह आया, परन्तु उसका चेहरा इस तरह सूख गया था जैसे आग के शोलों के बीच से निकलकर आ रहा हो.

सारा दिन वह इधर-उधर घूमते-फिरते रहे, बीच-बीच में किसी लॉन में बैठकर सुस्ता लेते और फिर घूमने के लिए निकल पड़ते. एलिसन के मन में बहुत कुछ चल रहा था और वह रवीन्द्र से बहुत सारे सवाल पूछना चाहती थी. वह अपने मन को दृढ़ कर रही थी. एलिसन की भावभंगिमा से रवीन्द्र अपने को बहुत असहज महसूस कर रहा था. दोनों के मन में विचारों का संग्राम हो रहा था, परन्तु कोई अपने मन को पहले खोलना नहीं चाहता था. रवीन्द्र जानता था, अगर उसने अपने मन को खोला तो एलिसन का दिल टूट जाएगा और एलिसन समझती थी कि अगर उसने

रवीन्द्र से कुछ पूछा, तो संभवतः उसकी आशाओं का महल भरभराकर टूट जाएगा. दोनों ही अपने-अपने डर को अपने हृदय के अंदर दबाए एक दूसरे को धोखा देने का प्रयास कर रहे थे.

रात कुछ अधिक गहरा गई थी. वह दोनों फुटपाथ पर निरुद्देश्य घूम रहे थे. कुछ पलों बाद उन्हें एक दूसरे से जुदा हो जाना था. एलिसन ने ही अपने दिल को मजबूत करते हुए कहा, “रवि, मैं तुमसे कोई शिकायत नहीं करूंगी, परन्तु मुझे लगता है कि मैं तुम्हारे क़ाबिल नहीं हूँ.”

रवीन्द्र का अन्तर्मन कांप गया. जिस चीज़ से वह डर रहा था, वह सामने आने के लिए बेताब हो रही थी. एलिसन के समक्ष वह स्वयं को बहुत कमजोर पा रहा था. वह अभी तक यह नहीं समझ पाया था कि वह एलिसन को प्यार करता था या एलिसन के प्यार के कारण वह उसकी तरफ आकर्षित हुआ था. इस बीच उसके घर में जो कुछ घटा था, उससे उसका आत्मबल टूट गया था और वह एलिसन के किसी भी प्रश्न का उत्तर देने में घबरा रहा था.

एलिसन के कहने पर उसने मां-बाप को अपने प्यार के बारे में बताया था, परन्तु बहुत ही कमजोर स्वर में. पहले तो उसके मम्मी-पापा ने ध्यान से उसकी बात सुनी. लड़की क्लास वन आफिसर है, इससे उनको बहुत खुशी हुई, परन्तु जैसे ही रवीन्द्र ने उसका नाम बताया, उसके पापा चौंक गए-

“एलिसन, क्या लड़की क्रिश्चियन है?” मां भी चौंकी.

“हां,” उसने मरे हुए स्वर में जवाब दिया, जैसे उसने कोई बहुत बड़ा अपराध कर दिया था.

“क्या तुम्हारा दिमाग फिर गया है. एक हिन्दू लड़की के बारे में तो हम सोच भी सकते हैं, परन्तु ईसाई लड़की...तुम क्या समझते हो, यह इतना आसान है. हमें समाज से बाहर कर दिया जाएगा. कोई हमारे घर में रिश्ता नहीं करेगा. हमारी सामाजिक प्रतिष्ठा, रूतबा और व्यापार सब चौपट हो जाएगा.”

रवीन्द्र ने प्रतिवाद नहीं किया. चुपचाप खड़ा रहा.

“बेटा, बुढ़ापे में क्यों हमारे सिर की पगड़ी उतार रहे हो. मानता हूँ, जवान हो, परन्तु प्यार करने के पहले एक बार तो सोच लेते कि इसका परिणाम क्या होगा. समाज से अलग होकर हम नहीं रह सकते.”

तभी मम्मी ने कहा, “वह एक अधिकारी है, कहीं हमारे ऊपर कोई केस न कर दे. शादी करने के लिए देखा नहीं, आजकल लड़कियां किस प्रकार लड़कों पर बलात्कार का आरोप लगाकर जेल भिजवा देती हैं.” मां के स्वर में चिन्ता झलक रही थी.

पापा ने गुस्से से उसकी तरफ देखा, “तुमने उस लड़की के साथ कोई ग़लत काम तो नहीं किया कि लेने के देने पड़ जाएं.”

रवीन्द्र ने नकारात्मक भाव से सिर हिलाया और कहा, “वह ऐसी लड़की नहीं है कि बदला लेने के लिए कोई घटिया क़दम उठाए. आप उससे मिलकर एक बार देखिए, वह आपको पसंद आएगी.” रवीन्द्र के विवेक ने एक बार फिर जोर मारा, परन्तु उसके पापा ने उसकी सभी आशाओं पर पानी फेर दिया, “मैं मिलकर क्या करूंगा. किसी दूसरे धर्म की लड़की के साथ तुम्हारी शादी के बारे में तो हम सोच भी नहीं सकते. भूल जाओ. अगर नहीं भूल सकते तो इस घर-परिवार और व्यापार से तुम्हारा कोई नाता नहीं रहेगा. जो मर्जी आए, करो.” पापा ने एक प्रकार से उसे धमकी दी.

घर से बेदखल होने की बात से ही उसकी आत्मा कांप गयी. बिना किसी आधार और पैसे के दाम्पत्य जीवन आरंभ करना कितना कठिन होगा. माना कि एलिसन नौकरीशुदा थी, जीविका के लिए बहुत हाथ-पैर नहीं मारने होंगे. उसे किसी व्यापार में स्थापित भी कर सकती थी, परन्तु अपने परिवार से अलग होकर यह सब करना उसके बस की बात नहीं थी. उसकी सोच इस मोड़ पर आकर कमजोर पड़ गयी. परिवार उसके लिए अहम् था, एलिसन और उसका प्यार नहीं. उसने अपने मां-बाप की इच्छा के आगे सिर झुका दिया.

घर में जो कुछ घटा था, वह एलिसन को नहीं बता सकता था. फिर भी उसे एलिसन की बात का उत्तर देना ही था. वह समझ गया था कि आज एलिसन अपने प्यार की परिणति चाहती थी.

“नहीं एलिस, सच तो ये है कि मैं ही अपने आपको आपके क़ाबिल नहीं समझता.”

“क्या तुमने अपने घर में बात की है?”

“नहीं,” पता नहीं उसके मुंह से कैसे निकल गया. अपने ‘नहीं’ पर उसे आश्चर्य हुआ कि इतनी आसानी से उसके मुंह से झूठ कैसे निकल गया. उसके मन में चोर था. वह एक कमजोर आदमी था. परिस्थितियों का सामना करने का साहस उसमें नहीं था. एलिसन से झूठ बोलकर वह वह अपने आपको बचा रहा था.

एलिस कुछ-कुछ समझ गई. उसने रवीन्द्र की आंखों में क्रोध भरी नजरों से देखा, जैसे उसके झूठ को पकड़ने की कोशिश कर रही थी. रवीन्द्र ने आंखें चुराते हुए मुंह दूसरी तरफ घुमा लिया.

“तुम सच कह रहे हो?” उसकी आवाज़ में गुर्राहट थी. रवीन्द्र फिर एक बार कांप गया.

उसने अपने दिल में साहस को समेटा. वह जानता था कि एलिस को कुछ बताकर कोई फायदा नहीं होगा, अतएव अपने झूठ पर कायम रहा, “एलिस, मैंने घर में बात नहीं की है. मेरी हिम्मत ही नहीं हुई परन्तु मैं जानता हूँ कि घर में बात करने का कोई फायदा नहीं होगा.” रवीन्द्र ने आगे सिर झुकाकर कहा. कुछ पल के वह चुप रहा जैसे अपने मन में शब्द बटोर रहा हो कि बात को किस तरह संभालना है. एलिस के हृदय में अचानक ही तेज गति से धुकधुकी होने लगी थी. इसके साथ ही उसकी सांसों की गति भी तेज हो गयी, जैसे कोई उसे दौड़ा रहा हो. सच में वह दौड़ ही तो रही थी, रेगिस्तान में मरीचिका की परछाइयों के पीछे. ..जिन्हें वह तपती हुई धूप में पानी की सतह समझ रही थी, वह एक भ्रम था. उसके चारों तरफ चमचमाती हुई सूखी ज़मीन थी, जो पानी का भ्रम दे रही थी.

“क्या इसलिए कि मैं एक क्रिश्चियन लड़की हूँ?” उसके स्वर में दयनीय भाव उपजा.

“संभवतः...इसीलिए मेरी घर में बात करने की हिम्मत नहीं हुई. मुझे अपने समाज की परम्पराओं और संस्कारों के बारे में अच्छी तरह पता है. कोई भी तुम्हें बहू के रूप में स्वीकार नहीं करेगा और तुम एक उपेक्षित जीवन जीने पर मजबूर हो जाओगी. मैं तुम्हें कोई कष्ट नहीं दे सकता, इसलिए मुझे क्षमा करना.”

एलिसन को लगा कि उसके हृदय को किसी ने पत्थर के बीच रखकर कुचल दिया है. वह तड़प रही है, रो रही है; परन्तु उसके कष्ट को कोई समझ नहीं रहा है. उसकी आंखों से बहते आंसुओं को कोई नहीं देख रहा है.

“क्या मैं इतनी बुरी हूँ और क्या ईसाई होना कोई गुनाह है?” उसने बस इतना ही कहा और बैठ गयी. उसके शरीर की सारी शक्ति निचुड़ गयी थी.

रवीन्द्र ने उसकी पीठ पर हाथ रखकर सात्वना के भाव से कहा, “एलिस, मैं जानता हूँ, तुम एक अच्छी लड़की हो और किसी भी परिवार के लिए एक अच्छी बहू साबित होगी, परन्तु तुम हमारे सामाजिक बंधनों, संस्कारों और रूढ़िवादी परम्पराओं से पूर्णतया अनभिज्ञ हो. उसमें तुम्हारे जैसी लड़की का कोई बसर नहीं है. तुम्हें केवल एक ही तरीके से मैं अपनी पत्नी बना सकता हूँ और वह है परिवार तथा समाज से विद्रोह...परन्तु विद्रोह करने की शक्ति मुझमें नहीं है. मुझे माफ़ करना, एलिस, तुम्हारा दिल तोड़कर मुझे अच्छा नहीं लग रहा है, परन्तु और कोई चारा नहीं है. हम दोनों के रास्ते विपरीत दिशा में जाते हैं, वह कभी नहीं मिल सकते.”

एलिस ने एक निःश्वास ली. हां, उसने अपने जीवन के लिए ग़लत पथ का चुनाव किया था. इसमें रवीन्द्र का कोई दोष नहीं था, दोष था तो केवल उसका. प्यार की डगर पर पहला क़दम उसी ने बढ़ाया था.

उसने अपने को सम्भालते हुए कहा, “रवि, मुझे लगता है, प्रेम के मामले में मैंने दिमाग के बजाय दिल से काम लिया था. यह पहली नज़र का प्यार था, जिसमें शारीरिक आकर्षण की प्रमुखता होती है. सच तो ये है कि केवल मैंने तुमसे प्यार किया था, तुम तो महज मेरे प्रभाव से मेरे प्यार को स्वीकार करने का दिखावा कर रहे थे. तुम्हें मुझसे कोई प्यार नहीं था, यह मैंने महसूस किया था. परन्तु सोचती थी, शायद समय बीतने के साथ-साथ तुम्हारे मन में मेरे लिए कोमल भाव उत्पन्न हो जाएंगे. परन्तु ऐसा न हो सका. सामाजिक परम्पराएं, संस्कार तो ढकोसला है, जिसे आसानी से दूर किया जा सकता है. परन्तु यह अपवाद है. तुम्हारा कहना भी सच है कि समाज अभी भी कई वर्गों में बंटा हुआ है और हम इसके बीच की दरारों को पाट नहीं सकते, न शिक्षा से, न पाश्चात्य सभ्यता के अनुपालन से...ऊपरी तौर पर बहुत कुछ बदल जाता है, परन्तु हमारी मानसिकता वही पुरातनपंथी होती है.”

“समाज में बहुत से बदलाव आए हैं, परन्तु हमारे समाज में अभी भी शिक्षा के अतिरिक्त कुछ नहीं बदला है, अतः...” रवीन्द्र सफाई देता सा लगा, परन्तु एलिसन ने उसकी बात काट दी-

“रवि, चिन्ता मत करो, मैं तुमसे विद्रोह करने के लिए नहीं कहूंगी, मैं तुमसे कोई त्याग भी नहीं चाहती. प्रेम के मामले में जोर-जबरदस्ती नहीं चलती. इसमें प्रारब्ध का बड़ा हाथ होता है. अगर हम उसको स्वीकार कर लेते हैं, तो सुखी रह सकते हैं, वरना दुःख, पीड़ा और निराशा के अलावा इसमें हाथ क्या आता है? रवि, मैं अपने को संभाल लूंगी, तुम अपना ख्याल रखना. किसी के नहीं रहने पर जीवन समाप्त नहीं होता, बल्कि किसी आत्मीय के बिछड़ जाने से हमें और अधिक दृढ़ता के साथ अपने जीवन-पथ पर बढ़ना चाहिए, मैं इसी धारणा पर विश्वास करती हूँ.”

“तुम बहुत संयमी और आत्मबल की धनी हो, काश, मैं तुम्हारे लिए कुछ कर सकता.”

एलिसन हंसी, उसकी हंसी में आहत-भाव था, परन्तु रवीन्द्र को लगा, जैसे उसकी हंसी में विद्रूपता के साथ-साथ चिढ़ाने का भाव था. अपराधी मन सदा उल्टा ही सोचता है.

प्यार सुख कम दुख ज़्यादा देता है.

एलिसन को लगातार यह दूसरा मानसिक झटका लगा था. यह पहले से ज़्यादा दुखदायी था. वह बीमार पड़ गई, बुखार या किसी बीमारी से नहीं, बल्कि मानसिक संताप से. हर पल उसका दिल डूबता-सा लगता, हर चीज़ उसे काटने को दौड़ती. कोई काम उसे अच्छा न लगता, न किसी की बातें अच्छी लगती. उसने फिर एक सप्ताह की छुट्टी ली और बिस्तर से लग गई. उसकी बाईं परेशान थी कि पता नहीं मैडम को बार-बार क्या हो जाता है, इतनी जल्दी बीमार कैसे हो जाती हैं? बीमार रहती हैं, परन्तु किसी डॉक्टर के पास नहीं जातीं, न कोई इलाज़ करवाती हैं?

चिन्ताग्रस्त जीवन अपने आप में एक बड़ी बीमारी है. एलिसन बिस्तर पर पड़े-पड़े बस सोचा करती. बचपन से लेकर जवानी तक की बातें एक-एक करके उसके मन के पर्दे पर आती रहतीं. कुछ यादें उसके मन को पल भर के लिए खुश कर देतीं, परन्तु कुछ यादें उसके मन को घोर कष्ट देतीं और वह विचलित हो जाती. अपने जीवन में जान-बूझकर उसने किसी को कोई कष्ट नहीं दिया था, किसी को परेशान नहीं किया था. जहां तक संभव हुआ, दूसरों की मदद की. फिर उसके साथ ऐसा क्यों हो रहा था कि उसे उसकी चाहत नहीं मिल रही थी. उसने भगवान से बहुत कुछ नहीं चाहा था. बस थोड़ा-सा प्यार मांगा था. इस दुनिया में सभी प्यार करते हैं और अपने प्यार को प्राप्त करते हैं. फिर उसके साथ ही ऐसा क्यों हुआ कि जिसे उसने चाहा, वही उसका न हुआ.

हो भी कैसे सकता था? वह मन ही मन अपना विश्लेषण करने लगी. आरंभ से अंत तक...जब उसने पहली बार रवीन्द्र को देखा, जब पहली बार उसके दिल में रवीन्द्र के लिए धड़कन उठी थी और फिर जब रात-दिन वह खुली आंखों से उसके सपने देखने लगी थी और फिर जब वह उसका इंतज़ार करने लगी थी, उसके फोन का इंतज़ार और उसके स्वयं के आने का, मिलन का. उसने भावुकता में आकर प्रेम नहीं किया था, क्योंकि वह परिपक्व उम्र की लड़की थी. रवीन्द्र के प्रति उसका प्यार मात्र शारीरिक आकर्षण नहीं था. उसके प्रेम में वासना नहीं थी, बल्कि एक प्रौढ़ सोच थी और वह चाहती थी कि उसके प्रेम को कोई मंज़िल मिले, किसी परिणाम तक वह पहुंचे, परन्तु रवीन्द्र...वह गंभीर नहीं था.

आज सब कुछ खत्म हो जाने के बाद जब उसका मस्तिष्क उसके विगत का विश्लेषण कर रहा था तो वह अच्छी तरह महसूस कर रही थी कि रवीन्द्र कभी भी उसके प्रति गंभीर नहीं रहा था. वहीं उसे टूटकर चाहती थी, क्योंकि उसने सच्चे मन से उस व्यक्ति को प्यार किया था. रवीन्द्र संभवतः उसके पद और हैसियत के

कारण उसके दिल को तोड़ना नहीं चाहता था, इसीलिए उसके साथ प्यार का दिखावा कर रहा था, उसका मन रख रहा था, बस...वह भी इसलिए, क्योंकि रवीन्द्र का काम अक्सर उसके कार्यालय से पड़ता रहता था.

सोच-सोचकर एलिसन और अधिक बीमार पड़ती जा रही थी, परन्तु वह किसी डॉक्टर के पास नहीं गई. उसके चेहरे पर पतझड़ के लक्षण प्रकट होने लगे थे. स्नान न करने के कारण उसके बाल इतने रूखे हो गये थे, जैसे भेड़ के बाल और त्वचा बिल्कुल रूखी-सूखी, जैसे पापड़ जिन्हें हल्के से दबाओगे तो दरक जाएंगे. उसकी हालत देखकर बाईं नितांत परेशान हो गई थी, परन्तु उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह अपनी मालकिन के लिए क्या करे.

एक दिन बाईं की भेंट सुशांत से हो गई. वह दुकान से सौदा लेकर लौट रही थी. सुशांत ने उससे एलिसन के हाल-चाल पूछे, तो बिना किसी हिचक के उसने सूरते-हाल बयान कर दी. बाईं के साथ सुशांत भी एलिसन के घर पर आ गया. उसकी हालत देखकर सुशांत कांपकर रह गया...कांतिहीन चेहरा, बुझी-बुझी आंखें, आंखों के नीचे काले घेरे, रूखे उड़े-उड़े से बाल, पपड़ाएँ होंठ...अपनी उम्र से दस साल बड़ी दिखने वाली यह लड़की क्या वही एलिसन है, जिसके चेहरे पर चांद जैसा ओज था और होंठों पर अमिट मुस्कराहट का साम्राज्य, जिसे देखकर हर व्यक्ति के दिल में फूल खिलने लगते थे, होंठों पर प्यार भरा गीत सजने लगता था और उसे प्यार करने का मन करने लगता था.

“एलिसजी, क्या हुआ है आपको?” सुशांत ने घायल स्वर में पूछा.

“कुछ नहीं, बैठिए!” उसने सुशांत को बैठने का इशारा करते हुए कहा. खुद एक सोफे पर बैठ गई.

बैठते हुए सुशांत ने कहा, “कुछ क्यों नहीं, आप भले न बताएं, परन्तु आपकी हालत देखकर क्या मैं नहीं समझ सकता कि आपके साथ कुछ बहुत बुरा हुआ है.”

“ऐसी तो कोई बात नहीं है.” एलिसन ने मुस्कराने की कोशिश की, परन्तु उसकी मुस्कराहट पर हजारों पत्थर पड़े हुए थे. उसमें कोई जान नहीं थी. ऐसी मुस्कराहट किसी से सच छिपाने के लिए चेहरे पर आती है, परन्तु उससे सच और ज़्यादा उजागर हो जाता है. उसकी मरी हुई मुस्कराहट पर सुशांत को बहुत दुख हुआ. उसे लगा, जैसे कोई उसका हृदय मरोड़ रहा था.

“मैं जोर नहीं देता...मन करे तो बता देना, परन्तु मैं समझ सकता हूं कि आपको कोई बीमारी नहीं है; बल्कि कोई दुःख आपको अंदर ही अंदर खाए जा रहा

है. आप घुट रही हैं, परंतु किसी को बता नहीं रही हैं. अपनी परेशानी किसी को बता तो सकती हैं; बिना बताए अकेले घुटती रहेंगी, पिछली बार भी ऐसा ही किया था, चुपचाप घर में पड़ी रही. न किसी को बताया, न डॉक्टर के पास गई.” कहते-कहते अचानक सुशांत को लगा कि वह बहुत ज़्यादा बोल गया था, उसका स्वर ऊंचा हो गया था. वह चुप हो गया, फिर धीमे स्वर में बोला—

“एलिसजी, मुझे खेद है. मेरा कोई हक़ नहीं बनता कि मैं आपके व्यक्तिगत जीवन में दखल दूं, परंतु मैं आपको जानता-पहचानता हूं. हम एक ही कॉलोनी में रहते हैं. आप यहां अकेली रहती है. क्या मुसीबत में मानवता के नाते आपकी मदद नहीं कर सकता?”

एलिस को सुनकर अच्छा लगा. सुशांत के स्वर में उसके प्रति गहरी चिंता झलक रही थी. ऐसी चिंता उनके दिलों में होती है, जो किसी के साथ दिल की गहराइयों तक जुड़े होते हैं. इस तरह की चिंता तो रवीन्द्र ने भी उसके प्रति कभी प्रकट नहीं की, तब भी नहीं जब वह मां की शादी के प्रसंग के दौरान चिन्तित और निराशाजनक स्थिति से गुजर रही थी. तब रवीन्द्र का आचरण और व्यवहार औपचारिता निभाता-सा लगा था, जबकि सुशांत उसे अपना-सा लगा था. जब वह उसके पास पहली बार सांत्वना व्यक्त करने आया था, तब उसने सुशांत की अपने प्रति चिंता और आत्मीयता को क्यों नहीं महसूस किया. ऐसा क्यों होता है कि जिसे हम हृदय के अंतरतम से चाहते हैं, प्यार करते हैं और अपना समझने की भूल करते हैं, वही एक दिन पत्थर की तरह कठोर, नीरस, बेजान और पराया लगने लगता है, जबकि जिसके प्रति हमारे मन में कभी कोई कोमल भाव नहीं जागते, संवेदना पैदा नहीं होती और बेगाना समझकर उसे ठोकर मारते रहते हैं, वही अचानक हृदय के साथ ऐसे जुड़ जाता है, जैसे अपने शरीर का ही कोई अंग हो.

एलिसन एकटक सुशांत को देखे जा रही थी, जैसे मंत्र-मुग्ध हो गयी हो. उसके चुप होते ही वह हौले से मुस्कराई. इस बार की मुस्कराहट में दर्द कम था. काफी दिनों बाद आज उसे लगा था कि कोई बहुत ही आत्मीयजन उसके पास है, उसके बारे में सोचने के लिए, उसकी चिंता करने के लिए और सबसे बढ़कर उसके लिए कुछ करने के लिए...उसके हृदय में किसी व्यक्ति के लिए दूसरी बार स्पंदन हुआ.

एलिसन की निश्चल मुस्कराहट देखकर सुशांत ने राहत की एक लंबी सांस ली, “थैंक माई गाड, आपके चेहरे पर खुशनुमां मुस्कराहट तो आई, परंतु क्या बता सकती हैं कि आपको कष्ट क्या है और क्या मैं आपकी कोई मदद कर सकता हूं.”

एलिसन का सिर झुक गया. शान्त भाव से बोली, “मेरा दुःख जानकर आप क्या करेंगे; इसे मेरे तक ही रहने दें तो अच्छा है. फिर भी आपकी मेरी प्रति चिंता देखकर मुझे अच्छा लगा. आपकी बातों से मुझे मानसिक बल प्राप्त हुआ. अब मैं ठीक हो जाऊंगी.”

“ऐसे कैसे ठीक हो जाएंगी. आप किसी डॉक्टर से सलाह क्यों नहीं लेती? अगर आप कहें तो मैं किसी डॉक्टर को घर लेकर आ जाता हूं. आपने शायद कई दिनों से आइने में अपना चेहरा नहीं देखा है.”

“देखा है, परंतु मन के आइने में. मैं जानती हूं मेरी क्या दशा है, परंतु मेरा इलाज किसी डॉक्टर के हाथों में नहीं है. मेरे दुःख या बीमारी का इलाज मेरे ही हाथों में है और मैं स्वयं ठीक हो जाऊंगी.”

“आप बुरा न माने तो एक बात कहूं, मैं मांजी को आपके पास भेज देता हूं. वह आपका पूरा ख्याल रखेगी और जब तक आप पूरी तरह से ठीक नहीं हो जाती, मां यहीं रहेगी.”

एलिसन ने कुछ सोचकर कहा, “ठीक है, मैं आपकी बात नहीं टालूंगी. गीता भी कई दिनों से रात में अपने घर नहीं गई है. मेरे कारण उसने बड़ी परेशानी उठाई है. आज वह घर चली जाएगी.”

गीता एलिसन की बाई का नाम था.

जहां प्यार, स्नेह और ममता की वर्षा होती है, वहां खुशियों के फूल हर मौसम में खिलते हैं. मनुष्य के जीवन में तब दुःखों और तकलीफों का पतझड़ कभी नहीं आता. सुशांत की मां सुषमा ने प्यार, स्नेह और ममता का ऐसा आंचल लहराया कि एलिसन के दुःखों का सागर दो दिनों में ही सूख गया. मांजी की वाणी की मधुरता एलिसन के दुःखी मन को आह्लादित कर देती. उनके शिक्षाप्रद वाक्य एलिसन के जीवन में उत्साह और उल्लास का संचार करते थे. मांजी के हाथ का स्वादिष्ट खाना खाकर उसकी भूख फिर से लौट आई थी.

दो दिन में ही सुषमा और एलिसन के बीच मां-बेटी का रिश्ता कायम हो गया. जब किसी के बीच इस तरह का पवित्र रिश्ता कायम हो जाए, तो क्या उनके बीच कुछ छिपा रह सकता है, या वह किसी से छल-कपट कर सकते हैं. मांजी ने अपनी ममता का वास्ता देकर उसके अंतर्मन को टटोला, तो एलिसन भी अपने हृदय के अंदर उमड़ रहे भावनाओं के सैलाब को नहीं रोक सकी. उसकी दृढ़ता का बांध प्यार और ममता के गीलेपन से टूट गया. वह खुल गयी, हृदय के अंदर का सब-कुछ उड़ेलकर उसने सुषमाजी के आगे रख दिया. इधर उसके मुंह से शब्द निकल रहे

थे, उधर उसकी आंखों से आंसू. मांजी ने दोनों को समेट लिया अपने स्नेह की छाया में और एलिसन को गले से लगाकर बोली-

“मुझे लगता है, अब तेरे दुःख के दिन बीतने वाले हैं.”

“वो कैसे मां जी?” एलिसन ने आश्चर्य से पूछा.

“बस, मेरा मन कह रहा है.” उन्होंने जोर से अपने अंक में समेट लिया- “तेरा दुःख दूर करनेवाला यहीं कहीं आस-पास है. बस तुझे पहचानने की ज़रूरत है.”

एलिसन के हृदय के तार झनझना उठे. उसकी आंखों के आंसू सूख गये और होंठों पर एक भेदभरी मुस्कान तैर गयी.

सुशांत सुबह-शाम नियमित रूप से एलिसन का हाल-चाल पूछने आता था. दोनों के बीच सामान्य-सी औपचारिक बातें होतीं. हालांकि एलिसन चाहती थी कि सुशांत उसके बारे में बात करे, उसके जीवन के बारे में बात करे, उसके दुःख का कारण जानने की कोशिश करे, परंतु सुशांत इस मामले में बहुत सावधान रहता था कि उसके मुंह से कोई ऐसी बात न निकले, जो उसकी दुःखती रंग को छुए और सूखते हुए घाव फिर से हरे हो जाएं. वह एलिसन को ठीक होते देख रहा था, उसके चेहरे की लौटती रौनक और होंठों पर नाचती स्मित हंसी उसके मन में खुशियों के हजार रंग भर देती, परंतु वह अपने मन की भावनाएं उस पर व्यक्त न करना.

वह पूरी तरह नहीं जानता था, परंतु पिकनिक वाले दिन जिस प्रकार एलिसन रवीन्द्र के साथ हंस-बोल रही थी, उसके साथ व्यवहार कर रही थी, उससे कहीं न कहीं सुशांत को लगता था कि वह एलिसन का चितचोर था, परंतु अब उसे लग रहा था कि दोनों के बीच कुछ-न-कुछ ऐसा हुआ है, जिससे एलिसन टूट गई है. उसके सपने बिखर गए हैं. उसकी इस धारणा का कारण स्पष्ट था, क्योंकि रवीन्द्र एलिसन से मिलने या उसका हाल-चाल जानने के लिए एक बार भी नहीं आया था. प्रेम में दिल टूट जाने के बाद ऐसा ही होता है, जैसा एलिसन के साथ हुआ था.

सुशांत के मन में बहुत सारे सवाल भरे हुए थे, परंतु उनके जवाब नदारत थे. सवालियों के ऊपर धूल की पर्तें जमती जा रही थीं, परंतु वह उन्हें हटाना नहीं चाहता था. एलिसन ठीक हो रही थी और उसके चेहरे पर सुबह के ताज़ा खिले फूलों जैसी ताज़गी आने लगी थी. वह अपनी किसी बात से एलिसन के फूल जैसे चेहरे पर पड़ी ओस की बूंदों को पोंछना नहीं चाहता था.

मांजी रात में एलिसन के घर पर रुकती थीं, परन्तु दिन में वह अपने घर का निबटाने के लिए आ जाती थीं, तब बाई एलिसन के पास रहती थी. एलिसन

के प्यार के दुखद अंत के बारे में जानने के बाद मांजी ने सुशांत से पूछा, “बेटा, तुझे एलिसन कैसी लगती है?”

सुशांत सुबह का नाश्ता कर रहा था. उसका दायां हाथ मुंह तक जाते-जाते रुक गया. उसके हाथ में कौर था. उसे उसने थाली में रख दिया और मां की तरफ देखकर पूछा, “यह कैसा सवाल है मां?”

मां ने भेदभरी मुस्कराहट के साथ कहा, “बेटा, मैं तुम्हारी नज़रों को पहचानती हूं. मैं तुम्हारी मां हूं और एक मां से अधिक अपने बेटे के दिल का हाल कौन जान सकता है. मैं जानती हूं कि तुम एलिसन को पसंद करते हो, परन्तु उसकी तरफ से कोई लगाव न होने के कारण तुम अपने मन को मारकर रहते हो.”

सुशांत चुप रह गया. अपने दिल का हाल उसे मालूम था, मां से क्या बयान करता? मां ने उसके सिर पर हाथ फिराते हुए कहा, “बेटा, एलिसन के साथ रहते हुए मैंने उसके घर-परिवार के बारे में अच्छी तरह जान लिया है. उसके मन को भी पढ़ लिया है, वह बहुत अच्छी लड़की है; परन्तु बिल्कुल अकेली.”

सुशांत ने आश्चर्य से मां की तरफ देखा. पूछना चाहता था, परन्तु पूछा नहीं. मां धीरे-धीरे स्वयं ही बता देंगी. एलिसन के बारे में जानने की उत्सुकता उसके मन में थी, परन्तु वह मां के सामने ज़ाहिर नहीं करना चाहता था. पहले वह एलिसन का मन पढ़ ले, फिर अगले कदम के बारे में सोचेगा.

मां ने बताया, “तुम्हें बहुत कुछ बताने की आवश्यकता नहीं है. धीरे-धीरे तुम स्वयं जान जाओगे. एलिसन अब ठीक हो गयी है, मैं चाहती हूं कि तुम उसे कहीं घुमा-फिरा लाओ. वह बहुत अकेली है. उसे मानसिक बल की ज़रूरत है. साथ-साथ धूमो-फिरोगे तो उसके मन को समझ जाओगे.”

“परन्तु मां, क्या आप जानती हैं कि वह ईसाई है.” सुशांत ने मां का दिल टटोलना चाहा.

मां ने हंसते हुए कहा, “बेटा, अब मैं इतनी अनपढ़ भी नहीं हूं. तुम अपने मन से सभी शंकाओं को मिटा दो. बस एलिसन के मन को पढ़ने का प्रयत्न करो. केवल दूसरे धर्म का होने से कोई बुरा नहीं हो जाता.”

“पापा को पता है?”

“वह तुम्हारे बाप हैं. मैं उनसे कोई बात छिपा सकती हूं? इसमें हम दोनों की सहमति है.”

सुशांत ने भी मूक सहमति दे दी.

एक हफ्ते के अंदर ही एलिसन पूरी तरह ठीक हो गयी, परंतु उसने छुट्टी बढ़वा ली; ताकि वह घर पर ही रहकर आराम कर सके. मम्मी के फोन अमेरिका से आते थे, परंतु उसने अपनी हालत के बारे में उनको कुछ भी नहीं बताया था. मम्मी के प्रति अब वह उदासीन हो गयी थी, परंतु रवीन्द्र के प्रति उसका मन कभी-कभी खटक जाता, पल भर के लिए उदासी उसके मन में घर कर जाती, चेहरा मुरझा जाता, परंतु फिर सुषमाजी और सुशांत की तरफ ध्यान जाता तो उसकी उदासी छूमंतर हो जाती. उसके होंठों पर एक प्यारी-सी मुस्कराहट तैर जाती.

इन्हीं थोड़े से दिनों में उसके जीवन में इतनी सारी उथल-पुथल हो चुकी थी और कभी-कभी वह सोचकर हैरान रह जाती कि किस प्रकार इन हादसों को उसने बर्दाश्त किया है, इतनी हिम्मत उसके अंदर किस प्रकार ईश्वर ने भर दी. वह ईश्वर की बहुत शुकुगुजार थी. किसी दिन चर्च जाकर वह ईश्वर का धन्यवाद अदा करना चाहती थी.

उसने छुट्टी बढ़वा ली तो सुषमाजी ने कहा- “ऐसे तो घर में पड़े-पड़े ऊब जाओगी. मैं सुशांत से कहती हूं, वह तुम्हें लेकर कहीं घुमा लाए.”

एलिसन सोच में पड़ गयी. इन दिनों उसका कहीं आने-जाने का मन नहीं करता था, परंतु अब वह ठीक हो गयी थी. घूमने-फिरने से अवसाद के जो कण उसके हृदय के अंदर सुप्त अवस्था में पड़े हुए थे, वह दूर हो जाएंगे. अतः उसने सहमति दे दी, “हां, मांजी, परंतु मैं स्वयं उनसे शाम को बात कर लूंगी.”

सुषमाजी मुस्कराकर रह गयीं.

शाम को सुशांत एलिसन से मिलने आया था तो अपेक्षाकृत कुछ अधिक खुश था. उसने आते ही मुस्कराते हुए कहा, “अब तो आप भली-चंगी हो गयी हैं. मन करता हो, तो कहीं घूमकर आएँ.”

“आपने तो मेरे मुंह की बात छीन ली.” एलिसन ने चहकते हुए कहा. एलिसन को खुश देखकर सुशांत के मन में गुब्बारे फूटने लगे. उसने चाहत भरी नज़रों से एलिसन को देखा. वह भी उसकी आंखों के मूक निमंत्रण को पहचान गयी. शरमाकर मुंह नीचे झुका लिया और कपड़े बदलने के बहाने बेडरूम में चली गयी.

पहले दोनों चर्च गए. यह एलिसन की इच्छा थी. दोनों चर्च की प्रार्थना में शामिल हुए. सुशांत पहली बार चर्च गया था. वह एलिसन की बगल में चुपचाप खड़ा था. एलिसन ने बाइबिल की छोटी पुस्तिका उसके सामने करते हुए प्रार्थना की लाइन पर उंगली रख दी. सुशांत उसके साथ ही लाइन को दोहराने लगा.

प्रार्थना समाप्त होने के बाद एकांत होने पर एलिसन ने झुककर क्रास को प्रणाम किया. फिर दोनों बाहर आ गए. दोनों चुप थे. चर्च के प्रांगण में साथ-साथ चलते हुए दोनों विचारों में मग्न थे. चारों तरफ शांत वातावरण विराजमान था, उसी तरह उनके मन भी शांत थे. एक पवित्र भावना सुशांत के मन में घर करती जा रही थी. चर्च जाने का पहला अनुभव उसके लिए बहुत सुखद रहा.

फुटपाथ पर खड़े होकर उन दोनों ने एक-दूसरे की आंखों में देखा. एलिसन की आंखों में चमक थी, होंठों पर हल्की मुस्कराहट थी, जबकि सुशांत की आंखों में एक प्रश्न था, “अब?”

एलिसन ने उसके मूक प्रश्न का जवाब दे दिया, उसने निःसंकोच सुशांत का दाहिना हाथ अपने दोनों हाथों में पकड़कर कहा- “आओ मंदिर चलें!”

दोनों के कदम एक साथ उठे और आगे बढ़ चले.



मवाद

सुनीता के जीवन में छोटे-मोटे दुःखों का अभाव नहीं था, परंतु इतनी बड़ी विपत्ति उसके ऊपर आ पड़ेगी, यह उसने कभी सोचा भी नहीं था. विपत्तियों का कोई अनुमान नहीं लगा पाता.

सुनीता का पति नन्दराम साप्ताहिक बाज़ार से लौट रहा था. आजकल गांव की संकरी सड़कों पर शहर से भी ज़्यादा तेज़ी से गाड़ियां दौड़ती हैं. हर युवा के हाथों में दहेज़ की मोटर साइकिल है, निजी वाहनों के अतिरिक्त टैम्पो और जीपें खचाखच सवारियां भरकर टूटी-फूटी सड़कों पर हवाई जहाज की तरह उड़ानें भरती हैं. ड्राइवर लटककर गाड़ी चलाते हैं. ब्रेक पर उनके पैर रहते ही नहीं, खड्डे और मोड़ उन्हें दिखाई नहीं देते. ऐसी हालत में सड़क में दुर्घटनाएं होना आम बात हो गयी है.

उस दिन नन्दराम भी एक ऐसी ही दुर्घटना का शिकार हो गया. एक जीप उसे टक्कर मारकर भाग गयी. बाज़ार का दिन था, इसलिए दुर्घटना का जल्दी पता चल गया. उसके गांव के लोग भी बाज़ार से लौट रहे थे. नन्दराम को भीड़ के बीच खून से लथपथ पड़ा देखकर उन्होंने तुरंत सुनीता को खबर कर दी. मोबाइल फोन का ज़माना होने के कारण आजकल गांवों में भी संचार व्यवस्था बहुत अच्छी हो गयी थी. ग़रीबी और महंगाई भले ही किसी के काबू में नहीं आ रही थी, परन्तु वक्त को लोगों ने हाथों में पकड़ रखा था.

सुनीता जिस हाल में थी, उठकर भागी. न बच्चों का होश था, न किसी और चीज का. बस घर में जो कुछ रुपये रखे हुए थे, आंचल के कोने में बांध लिए. खबर मिलते ही पास-पड़ोस की औरतें और मर्द इकट्ठा हो गए थे. कुछ मर्द साइकिल लेकर जाने को तैयार हो गये, तो सुनीता भी एक साइकिल के पीछे बैठ गयी.

घटनास्थल पर नन्दराम अभी तक पड़ा तड़प रहा था. किसी ने उठाने की ज़हमत नहीं की थी. सुनीता उसकी हालत देखकर रोने-पीटने लगी; परंतु नन्दराम उसको देखकर चिल्लाया, “कहां मर गयी थी रांड, अब आई है? मैं यहां दर्द से मरा जा रहा हूं और तू गुलछर्रे उड़ाकर अब आई है. कब का फोन करवाया था.”

सुनीता ने उसकी बातों पर न तो ध्यान दिया न उनका कोई जवाब...वह नन्दराम की आदत जानती थी. इस मुसीबत की घड़ी में, हाथ-पैर तुड़वाकर भी, वह अपनी आदत से बाज़ नहीं आ रहा था. दरअसल, यह नन्दराम का कसूर नहीं था. मनुष्य जाति की फ़ितरत ही ऐसी होती है. सुनीता गोरे रंग की सुंदर स्त्री थी, जबकि नन्दराम कृष्ण की तरह काला था. स्वभाव से लापरवाह, कामचोर और निठल्ला था. घर का काम करते उसके हाथ टूटते थे. खेत-खलिहान केवल दिशा-मैदान के लिए जाता था. घर में सुविधा होती, तो इसके लिए वह कभी बाहर नहीं जाता. हां, बाज़ार-हाट और मेला-ठेला जाने का शौक था, परंतु अकेले. बीवी को कभी साथ न ले जाता. उसे शक़ रहता, बीवी बाहर जाएगी तो किसी और से नैन-मटक्का करेगी.

यह शक़ तो उसके मन में तभी से बैठ गया था, जब से सुनीता ब्याहकर उसके घर में आई थी. उसका रंग-रूप देखकर बूढ़ी औरतें वाह-वाह करने लगीं, तो जवान औरतों के मन में ईर्ष्या और डाह का सांप लोटने लगा. काश, वह भी इतनी सुंदर होतीं. बीवी की सुन्दरता देखकर नन्दराम के मन में चिन्ता घर कर गयी कि इस रूप के खज़ाने को लोगों की बुरी नज़रों से बचाकर कैसे रखेगा. ग़रीबी की जोरू सारे गांव की भौजाई होती है. वह तो ग़रीब ही नहीं, खूबसूरत भी थी.

लिहाजा नन्दराम के घर से खुशियों ने जैसे तौबा कर ली. उसकी जगह कलह और मारपीट ने ले ली. नन्दराम खुद तो निकम्मा था, घर-बाहर के काम न करता; परंतु यदि सुनीता खेतों के काम के लिए बाहर जाती, वह उसके ऊपर लांछन लगाने लगता, किसी का भी नाम लेकर उसके साथ सुनीता का अपवित्र रिश्ता जोड़ देता. सुनीता कितना भी चुप रहने की कोशिश करती, परंतु नन्दराम ऐसी-ऐसी गालियां उसे देता कि उसका धैर्य जवाब दे जाता और फिर उसकी जुबान भी खुल जाती. इधर सुनीता की जुबान खुली नहीं कि नन्दराम के हाथ उठे और सुनीता पिटकर रह जाती. फिर रोना-धोना, कलपना और एक दूसरे को शाप देना...उन दोनों की कलह का अंत यही आकर होता था.

घर की हालत बहुत अच्छी नहीं थी. नन्दराम की कामचोरी और निकम्मेपन की वजह से हालत और पतली हो गयी थी. यह तो सुनीता के ही बस की बात थी कि तमाम परेशानियों के बीच नन्दराम की जली-कटी सुनते हुए भी घर को संभाले हुए थी. खेती का काम देखती, घर संभालती. एक भैंस और चार बकरियां पाली हुई थीं. घी-दूध और जवान बकरे कसाई को बेचकर घर में चार पैसे का प्रबंध हो जाता था, परंतु नन्दराम की हरकतों के कारण घर का वातावरण सुखमय नहीं था. रात-दिन गाली-गलौज और मार-पीट...सुनीता सचमुच नरक का जीवन व्यतीत कर रही थी, परंतु सनातन धर्म का पालन करते हुए अपने पातिव्रत्य को सुरक्षित रखे हुई थी.

अब तक सुनीता के एक बेटा और एक बेटा हो चुके थे. वह क्रमशः दस और आठ साल के थे. नन्दराम के बस में होता, तो हर साल उनके घर में बच्चा होता, परंतु सुनीता समझदार थी. दो बच्चों के बाद अस्पताल जाकर पहले उसने कौपर टी लगवा ली थी. कुछ दिन बाद गांव में आनेवाली एक नर्स की सलाह पर नसबंदी भी करवा ली. नन्दराम को पहले नहीं बताया था. जब उसे पता चला तो सुनीता को यह कहते हुए बहुत मारा था, कि यारों के साथ मौजू-मस्ती के लिए उसने नसबंदी करवाई थी.

इतने कष्ट और प्रताड़ना झेलने के बाद भी सुनीता के मन में अपने पति के प्रति मैल नहीं आया था. वह उसे पति परमेश्वर मानती थी, देवता समझकर पूजती थी, परंतु बदले में उसे गालियां और लांछन ही मिलते थे. इन्हें भी वह प्रसाद समझकर स्वीकार कर लेती थी.

घायल नन्दराम को पड़ोसियों की मदद से एक टेम्पो में डालकर सुनीता जिला अस्पताल लेकर आई. तब तक रात हो गयी थी. सुनीता को एक तरफ बच्चों की चिंता थी, दूसरी तरफ नन्दराम के इलाज की. नन्दराम के हाथ-पैर टूट गये थे, सिर फूट गया था, परंतु मुंह का ज़हर नहीं गया था. रास्ते भर उसे कोसता रहा था, “साली, कुतिया, तेरे कारण ही मेरी ये हालत हुई है. पूरे गांव में मुंह मारती फिरती है, उसी का शाप लगा है.” साथ के लोग उसे चुप रहने के लिए कहते, तो वह और भड़क जाता, “तुम्हीं लोगों ने तो उसे बर्बाद किया है. उसके साथ मौजू मारते हो, तभी तो साथ आए हो.” हारकर वह लोग चुप हो जाते. उन्हें नन्दराम के स्वभाव का पता था.

सरकारी अस्पताल में मुफ्त इलाज होता है, और वहां डॉक्टर तत्परता से मरीज का सही इलाज करते हैं, इस धारणा के तहत अगर कोई वहां मरीज को लेकर जाता है, तो वह निरा मूर्ख है. सरकारी अस्पतालों में बिना पैसा देखे वार्डब्याय अपनी जगह से नहीं हिलता, नर्स मुंह नहीं खोलती और डॉक्टर मरीज को हाथ नहीं लगाता. ऑपरेशन हो तो उसका अलग रेट है, जो एडवान्स में चुकाना होता है. नन्दराम बड़ी देर तक एमरजेन्सी के बाहर पड़ा रहा. उनकी कोई सुनने वाला नहीं था. किसी से कुछ कहते तो भी सुनता नहीं था. हारकर सुनीता के पड़ोसी जगतपाल ने कहा, “भौजी, ऐसे काम नहीं चलेगा. तुम्हारे पास कुछ पैसे हैं.” सुनीता ने पांच सौ का नोट निकालकर चुपचाप उसके हाथ में थमा दिया. जगतपाल गया और थोड़ी देर में एक वार्डब्याय को साथ लेकर आ गया. वार्डब्याय ने नन्दराम को स्ट्रेचर पर लादा और अंदर ले गया. वे सब भी साथ-साथ अंदर घुस गये.

रात में नन्दराम को देखने कोई डॉक्टर नहीं आया. नर्स ने आकर देखा और पर्चे में कुछ जानकारी भरकर चली गयी.

सुनीता और जगतपाल नन्दराम के पास बैठकर बातें करने लगे. जगतपाल ने कहा, “भौजी, यहां बिना पैसे के इलाज नहीं होनेवाला. कहने के लिए यह सरकारी अस्पताल है, परंतु खर्च प्राइवेट अस्पताल से भी ज्यादा होता है. हर बात के पैसे लगते हैं यहां. दवा, इंजेक्शन, खून, ग्लूकोज सब अपने पैसों से खरीदना पड़ेगा.”

सुनीता की समझ में नहीं आ रहा था कि पति के इलाज के लिए पैसों का इंतजाम कहां से होगा. मांग-जांचकर कोई चार-पांच हजार का इंतजाम हो जाएगा, परंतु नन्दराम के शरीर की सारी हड्डियां टूटी हुई थीं, बिना ऑपरेशन के इलाज नहीं हो सकता था. डॉक्टर हर दवाई और सामान उसी से खरीदवाएंगे, भले ही अस्पताल में सारी चीजें सरकार की तरफ से मुफ्त मरीजों को देने के लिए आती हैं, परंतु वह अस्पताल पहुंचने के पहले ही बिक जाती हैं. मरीजों को अपने पैसे से इलाज करवाना पड़ता है.

“भैया, आप कुछ पैसे का इंतजाम कर सकते हैं?” सुनीता ने जगत से पूछा.

जगत बगलें झांकने लगा, “भौजी, मेरी हालत इधर बड़ी पतली है. बहुत दिनों से शहर नहीं गया. आमदनी है नहीं, खर्चे उतने ही.”

“तब तो मुझे गांव जाना पड़ेगा.” सुनीता ने सोचते हुए कहा. शहर में उसका कोई रिश्तेदार तो था नहीं, जहां से पैसे का प्रबंध हो सकता. गांव के लोगों से ही उधार लेना पड़ेगा.

दूसरे दिन सुबह नन्दराम के पास जगत को छोड़कर सुनीता गांव चली गयी. उसके बच्चों को पड़ोस की एक औरत ने संभाल लिया था. जब वह घर पहुंची तो बहुत सारे लोग जानकारी लेने के लिए आ पहुंचे. एक मशीन की तरह वह सबकी बातों का जवाब देती रही थी. दिमाग तो उसका कहीं और उलझा हुआ था, पैसे का इंतज़ाम कहां से होगा? सरकारी अस्पताल है, तब भी बीस-तीस हजार खर्चा हो जाएंगे.

उधार मांगकर काम नहीं चलेगा, तो फिर...? एक बीघा खेत रेहन रखे, तो तीस हजार का जुगाड़ हो सकता है, परंतु तब गुजारा कैसे चलेगा? दो बीघा खेत हैं, तब तो गुजारा होता नहीं. एक बीघे में क्या पैदा करेंगे, क्या खाएंगे. मज़दूरी करके गुजारा करना पड़ेगा. वहीं अकेली मरेगी-खटेगी. यह मर्दुआ तो अभी भी बोझ है, तब भी बोझ बना रहेगा. अब तो हाथ-पैर टूट गए हैं, पता नहीं लंगड़ा होकर ही अस्पताल से निकले? तब तो मुसीबत ही बन जाएगा.

फिलहाल उसने तय किया कि पति के इलाज़ के लिए बच्चों को भूखा नहीं मारेगी. खेत रेहन नहीं रखेगी. उसने नहा-धोकर कुछ पकाया, बच्चों को खिलाकर खुद थोड़ा-सा खाया और कुछ खाना पति और जगत के लिए बांधकर पोटली में रख लिया. फिर गांववालों के पास पैसा मांगने के लिए निकल पड़ी. गांव में कई अमीर लोग थे. वह पैसा दे सकते थे, परन्तु पैसा बाद में देते, पहले उसके बदन से ब्याज वसूल लेते. क्या वह जानती नहीं? जब से ब्याहकर इस गांव में आई है, अमीर ही नहीं, टुच्चे आवारा लोग भी उसकी जवानी के पीछे दीवाने बने फिरते थे. वह उनकी बात मान जाती, तो आज हजारों रुपये उसे यूं ही बिना मांगे मिल जाते. सस्ती धोती में इस तरह भिखारन बनी न डोलती. महंगे-महंगे कपड़े पहनती और सोने-चांदी के जेवरों से लदी रहती. परंतु तमाम तरह के कष्ट झेलती हुई भी वह अपने ईमान से नहीं डिगी. गरीबी की इज्जतदार जिंदगी उसके लिए भली थी. बदनामी की बदबूदार अमीरी की चमक के लिए उसने अपने आपको नीचे नहीं गिराया.

आज भी जब वह उन्हीं धनी-मानी, लकालक सफेद कपड़े पहनने वाले इज्जतदार लोगों के पास उधार पैसा मांगने पहुंची, तो सबने फिर उसे यही लालच दिया, “एक बार कहना मान जाओ, फिर देखो, नोटों के अंबार तुम्हारे पति के इलाज़ के लिए लग जाएंगे.” आज सुनीता मजबूर थी, इसलिए गिड़गिड़ा रही थी, “आज मेरे आगे मुसीबत का पहाड़ खड़ा है. थोड़ी-सी मदद कर देंगे, तो आपका एहसान कभी नहीं भूलूंगी.” वह रो रही थी.

“तेरे अहसान से हमारा क्या भला होने वाला. तू कहना मान ले तो ब्याज क्या मूलधन भी छोड़ देंगे.” सबने यही कहा. उनकी बातें सुनकर उसे धिन आई. पति के इलाज़ के लिए क्या वह रण्डी बन जायेगी. नहीं, इतना नीचे नहीं गिरेगी. वह जानती थी, यह सब जीवन भर उसके शरीर को लूट-लूटकर अपनी वासना की भूख शांत करते रहेंगे, फिर भी उनका ब्याज और मूलधन कम नहीं होगा.

अंत में वह पंडित रामाधीन के पास गयी. वह थोड़ा भलामानस था. सुनीता को प्यास भरी नज़रों से देखता था, परन्तु कभी राह चलते बुरी बात न कहता. वह समझती थी कि रामाधीन पंडित औरों की तुलना में कम लम्पट था. उसको पाने की लालच में पैसे ज़रूर दे देगा. बाद में मूलधन भले न छोड़े, परन्तु उसको पाकर ब्याज तो छोड़ ही देगा.

सुनीता की पूरी बात सुनने के बाद रामाधीन ने कहा- “सुनीता आज तुम मुसीबत में हो, मैं तुम्हें बीस हजार रुपये देने को तैयार हूं, परन्तु तुम जानती हो कि मैं दिल से तुम्हें प्यार करता हूं. इतने दिन बीत गये, तुमने मेरी एक नहीं सुनी. आज मैं तुम्हारी मदद कर रहा हूं, तो तुम भी मेरा कहा मान लो.” रामाधीन के स्वर में मधु टपक रहा था. सुनीता जानती थी, यही होनेवाला है. उसके पास सोचने-विचारने के लिए वक़्त नहीं था. सारे गांव के लोगों के हाथों इज्जत गंवाने से अच्छा है, इसी को कुछ लटके-झटके दिखाकर काम बना लिया जाय.

“अभी आप मदद कर दीजिए, मुझे तुरन्त अस्पताल जाना है. बाद में बताऊंगी.” उसने सिर नीचा करके कहा.

“लौटकर मिलोगी न!” रामाधीन की बांछें खिल गयीं.

“हां,” उसने बिना आगा-पीछा सोचे कह दिया. रामाधीन तुरंत अंदर गया और पैसे निकाल कर ले आया. पैसे देते समय उसने सुनीता को पकड़कर अपने सीने से लगा लिया, जैसे अभी उसे चबा जाएगा. सुनीता ने प्यार से उसकी पकड़ को ढीला किया और स्वयं को छोड़ाकर भाग आयी. बीस हजार का प्रबंध हो गया था. काफी थे, उसने सोचा.

अस्पताल पहुंचते-पहुंचते उसे शाम हो गयी थी. जगताराम के प्रयासों से नन्दराम के दोनों पैरों के घावों में मरहम लगा दिया गया था. सिर में टांके लग गये थे. इस काम में पूरे पांच सौ उड़ गए थे. डॉक्टर ने कुछ दवाइयां लिखी थी, जो अभी लेनी थीं. नन्दराम के पैरों की हड्डियां भी टूटी थीं, क्योंकि वह अपने पैर हिला-डुला नहीं पा रहा था, परंतु डॉक्टर ने बताया था कि नन्दराम के पैरों में घाव

थे, इसलिए जब तक घाव सूख नहीं जाते, पक्का प्लॉस्टर नहीं चढ़ाया जा सकता था. पैरों का एक्स-रे भी अभी तक नहीं हुआ था.

उसने सबसे पहले नन्दराम और जगतपाल को खाना दिया. फिर हाल-चाल पूछे. खाना खाते-खाते नन्दराम ने पूछा, “पैसे लाई है?”

“हां,” सुनीता ने बस इतना ही कहा.

“किस यार ने दिए हैं.” उसने तीखे स्वर में पूछा.

“तुम ठीक हो जाओ, फिर बता दूंगी.” सुनीता ने भी पलटकर जवाब दिया. इस मरी हालत में भी ज़हर उगलने से बाज़ नहीं आ रहा था. पता नहीं, पिछले जनम में करिया नाग रहा होगा. अभी तक मुंह में ज़हर भरा हुआ है.

खाना खाकर जगतपाल बोला, “भैया, मैं तो अब चलूंगा. दो दिन हो गए. घर जाकर देखूं, वहां क्या हो रहा है. मेरी साइकिल भी दूसरे गांव में पड़ी हुई है.”

“हां, भैया, आप जाओ. बीच-बीच में आते रहना.” नन्दराम के बोलने के पहले ही सुनीता ने कहा.

सुनीता के जीवन का यह संघर्ष बहुत कठिन था. अस्पताल में कोई उसकी बात न सुनता. वार्डब्याय कुछ सुनता और करता था, तो बिना पैसे लिए नहीं. दवाई से लेकर ग्लूकोज तक उसे खरीदना पड़ता था. वही अकेले सबकुछ करती थी. नन्दराम तो अपाहिज था. उसका टट्टी-पेशाब भी पलंग पर ही होता था. नाते-रिश्तेदार देखने के लिए आते, परंतु वह हाल-चाल पूछकर चले जाते. उनका आना सुनीता के किसी काम न आता, बल्कि आकर परेशानियां और बढ़ा जाते.

दस दिन बीत गये. नन्दराम के पैरों के घाव सूख रहे थे, परंतु उसके टखनों में तेज दर्द होता था, जिससे यह पता चलता था, उसके पैरों की हड्डियां टूटी हुई थी. सुनीता बार-बार नर्स से गुज़ारिश करती थी, डॉक्टर के राउण्ड पर आने पर हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाती थी, वार्डब्याय की भी चिरौरी करती थी कि नन्दराम का एक्स-रे करवा दो. कोई न तो कुछ सुनने को तैयार था, न करने को. सुनीता परेशान हो गयी. नन्दराम की हालत भी ख़राब होती जा रही थी, वह अपना कोई भी पैर नहीं हिला पाता था. हल्की-सी हरकत होते ही वह तड़प उठता, जैसे मांस के अंदर हड्डी घुस गयी हो.

अस्पताल में समय-समय पर वार्डब्याय की ड्यूटी बदलती रहती थी. एक वार्डब्याय थोड़ा रंगीले स्वभाव का था. सुनीता को लगातार भीठी नज़रों से ताकता रहता था. जब भी बोलता, हंसकर बोलता. सुनीता उसके भावों को समझती थी.

थोड़ी-सी ढील देने पर बड़े काम का साबित हो सकता था. सुनीता ने उससे अकेले में हंस-हंसकर बात की. उसका नाम शिवराज था. सुनीता की हंसी पर मर मिटा. सुनीता ने नन्दराम के एक्स-रे के लिए कहा तो बोला, “वह तो अस्पताल में संभव नहीं है. मशीन खराब है. खराब न हो, तब भी एक्स-रे बाहर से ही करवाते हैं.”

“ऐसा क्यों? यह तो सरकारी अस्पताल है.”

“वह तुम नहीं समझोगी. तुम कहो, तो मैं डाक्टर से पर्ची बनवा लाता हूं. बाहर से एक्स-रे मैं करवा दूंगा. वहां का पैसा देना पड़ेगा. मैं अपना कमीशन नहीं लूंगा.” वह एहसान जताते हुए बोला.

सुनीता के पास और कोई रास्ता नहीं था. वह सदा के लिए अस्पताल में रहने के लिए नहीं आई थी. जितनी जल्दी हो सके, यहां के नरक से निकलना था. बच्चों को लावारिस छोड़ रखा था. पड़ोसी कब तक उनकी देख-रेख करेंगे. सबके अपने-अपने काम-काज़ होते हैं.

शिवराज की मदद से नन्दराम का एक्स-रे हो गया. इस अहसान का बदला वह सुनीता के बदन से चुकाना चाहता था. जब भी एकांत मिलता वह उसके नाजुक अंगों को दबा देता. सुनीता मुस्करा कर रह जाती, परंतु बोलती कुछ नहीं. जानती थी, यहां हंस-बोलकर ही काम निकाला जा सकता था. औरत होने का इसमें बड़ा फायदा था. वह गुड़ की ऐसी भेली होती है, जिसके ऊपर मर्दरूपी मक्खियां बिन बुलाये आकर बैठने लगती हैं. वह जानती थी कि अस्पताल के कर्मचारियों की थोड़ी-बहुत ज़्यादती सहनी ही पड़ेगी. पैसेवाली होती तो और बात थी. तब कोई उसके ऊपर नज़र डालने की हिम्मत न कर पाता.

अभी नन्दराम का ऑपरेशन बाकी था. शिवराज को नाराज़ करके वह अपने और पति के लिए मुसीबत मोल नहीं ले सकती थी. जब तक उसका इलाज़ सही तरीके से नहीं हो जाता, वह अस्पताल के कर्मचारियों की ज़्यादतियां सहने के लिए मजबूर थी.

उधर शिवराज उसको पाने के लिए पागल हो रहा था, इधर नन्दराम उसको शिवराज के साथ हंसता-बोलता देखकर जल-भुन जाता. उसके पास आते ही झल्लाकर कहता, “आ गयी आग बुझाकर. बड़ी गर्मी है तेरे में. एक बार ठीक हो जाने दे मुझे, फिर घर चलकर तेरी गर्मी उतारता हूं.”

सुनीता बात को न बढ़ाती. नन्दराम के शक्की स्वभाव को वह बदल नहीं सकती थी.

नन्दराम की एक्स-रे रिपोर्ट से पता चला कि उसके दाहिने जांघ की हड्डी टूट गयी थी. हड्डी के दोनों टुकड़े एक-दूसरे पर चढ़ गये थे. वहीं पर बाएं पैर का टखना टूटकर मांस में घुस गया था. दोनों पैर का ऑपरेशन होना था.

एक्स-रे होने के बाद भी डॉक्टर उसके ऑपरेशन में रुचि नहीं ले रहे थे. कई दिन बाद शिवराज ने बताया कि पहले दोनों पैर की हड्डियों को यथास्थान खिसकाकर प्लॉस्टर किया जाएगा और दोनों पैरों को ट्रैक्शन पर रखकर देखा जाएगा कि हड्डियां अपने आप जुड़ती हैं या नहीं. जुड़ जाएंगी तो ठीक, वरना ऑपरेशन करके अंदर रॉड डालकर हड्डी जोड़ने का उपाय किया जाएगा.

पहला प्रयास किया गया. दोनों पैर की टूटी हड्डियों को खींचकर एक-दूसरे के आमने-सामने जोड़कर प्लॉस्टर चढ़ाया गया, फिर दोनों पैरों को ट्रैक्शन पर रख दिया गया; ताकि वह अपने पैरों को हिला-डुला न सके.

इसी स्थिति में नन्दराम पन्द्रह दिन पड़ा रहा. ट्रैक्शन के कारण वह बिल्कुल हिल-डुल नहीं सकता था. सुनीता हर पल उसके पास बनी रहती, फिर भी किसी न किसी काम के लिए उसे नन्दराम के पास से हटना ही पड़ता. शिवराज ऐसे ही मौकों की तलाश में रहता. वह अकेले मिलती तो नौचना शुरू कर देता. वह किसी तरह बचकर आ जाती, परन्तु जैसे-जैसे वह बचने का प्रयास करती, शिवराज का दीवानापन बढ़ रहा था. एक दिन खीझकर बोला, “मैं तुम्हारे लिए इतना कर रहा हूं और तुम मुझसे दूर भागती रहती हो. आखिर मेरे मन की इच्छा कब पूरी करोगी?”

“तुम मेरी मजबूरी समझो. यहां अस्पताल में मैं ऐसा काम कैसे कर सकती हूं. मेरा मरद पलंग पर अपाहिज पड़ा है और मैं तुम्हारे साथ मज़ा लूटूं? क्या यह अच्छा लगता है. ऊपर से धर-पकड़ लेते हो, क्या यह काफी नहीं है?”

“देख लेना, अगर मेरा कहा न मानोगी तो तुम्हारा पति सचमुच अपाहिज हो जाएगा.” शिवराज ने एक प्रकार से उसे धमकी दी.

सुनीता ने असहाय भाव से शिवराज को देखा, जैसे गौरैया बाज़ के पंजों में फंसकर उसे देखती है. सुनीता को असमंजस में देखकर शिवराज ने उसे पकड़ लिया और उसके अंगों से खेलने लगा. वह सुनीता के अंगों को इस तरह दबा रहा था, जैसे वह उसे नोचकर ही खा जाएगा. वह बेबसी से शिवराज की बेजा हरकतों को देख रही थी, परन्तु कर कुछ नहीं सकती थी. शिवराज अति उत्तेजित हो गया. खड़े-खड़े उसने सुनीता की साड़ी पलटनी चाही तो वह तड़प उठी और अपने को शिवराज की पकड़ से आज़ाद कर लिया, बोली— “अभी नहीं...फिर किसी दिन?” और भाग आई. शिवराज तिलमिला कर रह गया.

इसी तरह शिवराज की हरकतों को झेलते और नन्दराम की जली-कटी बातें सुनते हुए पंद्रह दिन निकल गए. इस बीच सुनीता के दो-चार रिश्तेदार आए तो

दिन में उन्हें नन्दराम के पास रोककर वह घर भी हो आई. बच्चों को समझाकर और पड़ोसन से चिरौरी-विनती करके उनकी देख-रेख करने के लिए कहकर आ गयी. खेती तो पूरी तरह से चौपट होने की कगार पर आ गयी थी. समय पर पानी न मिलने से वह सूख रही थी. इसके अतिरिक्त गांव के हरहा-गोरू फसल को चरकर बर्बाद कर रहे थे. खेती की देखभाल करने के लिए उसके पास समय नहीं था.

पंद्रह दिन बाद नन्दराम के पैरों का फिर से एक्स-रे हुआ. परिणाम अच्छा नहीं था. प्लास्टर और ट्रैक्शन के बावजूद उसके पैरों की हड्डियां नहीं जुड़ी थीं. अब ऑपरेशन करना अनिवार्य हो गया था, परन्तु एक दूसरी समस्या पैदा हो गयी. टखने की हड्डी ने मांस में घुसकर गंभीर घाव पैदा कर दिया था. मांस के अंदरूनी घाव में मवाद बन गया था और वह अंदर ही अंदर बहकर घाव को सड़ा रहा था.

अब उसके घाव को ठीक करने की दवाई दी जाने लगी. जब तक घाव नहीं सूख जाता, ऑपरेशन नहीं हो सकता था.

सुनीता के पास वार्डब्याय से पूछने और कहने के अलावा और कोई रास्ता नहीं था, क्योंकि सरकारी नर्सों का मुंह हमेशा टेढ़ा ही रहता था. वह पूछने पर भी कुछ नहीं बताती थीं. अगर कोई नर्स दया करके कुछ बोल भी देती थी, तो इतना ही कहती, “डॉक्टर से पूछो.” और जब डॉक्टर राउण्ड पर आता तो इतना गंभीर रहता, जैसे किसी की गमी में आया हो. सुनीता फिर भी हिम्मत करके पूछ लेती, “डॉक्टर बाबू, ये कब तक ठीक हो जाएंगे.”

“पता नहीं?” डॉक्टर इतना-सा बोलने में अहसान-सा जताता लगता.

“डॉक्टर साहब, जल्दी कुछ कीजिए.” वह हाथ जोड़कर चिरौरी करने लगती.

“ज्यादा जल्दी हो तो किसी प्राइवेट अस्पताल ले जाओ.” कहकर डॉक्टर चला जाता.

‘अब’ के भाव से सुनीता शिवराज को तांकने लगती. शिवराज जानता था, सुनीता जितना बेबस होगी, उतना उसके क़रीब आएगी. वह लगभग रुआंसी हो गयी थी. ऐसी स्थिति में शिवराज सुनीता को इशारे से बुलाकर एकान्त में ले गया. उसकी बांह पकड़कर बोला, “देखो, अब समस्या गंभीर हो गयी है. केवल एक बार मेरी बात मान लो. फिर जल्दी से तुम्हारे पति के पांवों का ऑपरेशन करवा देता हूं.”

“करवा दोगे, सच कहते हो?” सुनीता ने अविश्वास से उसे देखा.

“हां, परन्तु डॉक्टर एक ऑपरेशन के पांच हजार लेता है. दो पांव का ऑपरेशन है, दस हजार से एक पैसा कम नहीं लेगा. दवाई और रॉड का खर्चा अलग से लगेगा.”

“फिर तुम किस काम आओगे?”

“तुम मुझे खुश करोगी, तो तुम्हारा काम बिना किसी रुकावट के हो जाएगा, वरना सालों इसी अस्पताल में पड़ी सड़ती रहोगी या बिना इलाज के तुम्हें एक दिन अस्पताल से बाहर फेंक दिया जाएगा.”

सुनीता की आंखों के सामने अंधेरा-सा छाने लगा. पांच हज़ार तो अब तक दवा-दारू और खाने-पीने में खर्च हो चुके थे. पंद्रह हज़ार बचे थे. दस हज़ार डॉक्टर ले लेगा. ऑपरेशन के बाद भी अस्पताल में रहना पड़ेगा. तब तक बाकी पांच हज़ार भी खर्च हो जाएंगे. क्या पता कम ही पड़ जाएं. फिर बाकी रुपयों का इंतज़ाम कहां से होगा? क्या दुबारा पंडित के पास जाना पड़ेगा. अपने बीस हज़ार का ब्याज वसूलने के लिए यह मगरमच्छ की तरह मुंह खोलकर बैठा होगा.

फिर उसकी आंखों के सामने दो छोटे बच्चों के चेहरे बिना मां के उदास, रोते-कलपते दिखाई पड़े. वह कब तक पड़ोसन के भरोसे रहेंगे? क्या पता उनको ठीक से खाना भी मिलता है या नहीं. सोचकर वह तड़प उठी.

बेचैन होकर उसने शिवराज को इस तरह देखा, जैसे कह रही थी, ‘जो करना है, करो; परंतु मेरे मरद का इलाज जल्दी से करवा दो.’

शिवराज उसकी मजबूरी और असहाय अवस्था को भली भांति समझ गया. अब वह न नहीं कर सकती थी. उसने सुनीता को अपने पीछे आने का इशारा किया. वह यंत्रवत चल पड़ी. शिवराज उसे दवाइयों के एक अंधेरे और सीलन भरे स्टोर रूम में ले गया. वहां दवाइयों के अंबार लगे हुए थे, परंतु उनमें से कोई दवाई मरीजों के लिए नहीं थी. स्टोर में एक पुरानी मेज पड़ी थी. शिवराज ने उतावली में सुनीता को उसी मेज पर गिरा दिया और पलभर में ही उसके अंदर उतर गया. सुनीता एक मरी हुई बकरी की तरह मेज पर पड़ी थी, जिसकी खाल उधेड़कर कसाई टुकड़े-टुकड़े कर रहा था.

सुनीता को अपने शरीर में केवल दवाइयों की गंध लिपटी हुई महसूस हो रही थी.

लस्त-पस्त हालत में जब सुनीता नन्दराम के पास पहुंची, तब वह आश्चर्य से उसको देखता ही रह गया. इसके पहले वह सुनीता को ताने मारता था, उसके चरित्र पर लांछन लगाता था, परंतु आज जब वह अपना सतीत्व लुटाकर आई थी तो उसके मुंह से कोई ताना-उलाहना नहीं निकला. उसने सुनीता पर कोई लांछन नहीं लगाया. वह केवल हैरान-परेशान-सा उसे देख रहा था, जैसे उसने कोई अद्भुत चीज देख ली थी. सुनीता को जैसे कोई होश नहीं था. वह पलंग के सिरहाने पड़े लोहे के स्टूल पर बैठकर लंबी-लंबी सांसें भरने लगी.

बड़ी देर बाद नन्दराम ने प्यार भरे स्वर में पूछा, “कहां गई थी, इतनी देर कर दी?”

अब तक सुनीता संभल गयी थी. उसने नन्दराम के चेहरे को देखा. उसका चेहरा बड़ा दयनीय लग रहा था, जैसे उसके मुंह पर किसी ने सौ जूते मारे हों; परंतु सुनीता को उसकी दयनीय हालत पर कोई दया नहीं आई, मुंह बनाकर बोली, “तुम्हारे इलाज का एडवान्स भरने गयी थी. अभी और न जाने कितना भरना पड़ेगा.”

नन्दराम सुनीता के तेवर देखकर चुप लगा गया. आदमी का स्वभाव बड़ा विचित्र होता है. वह झूठ को सच बनाकर बोलता है, परंतु जब वही झूठ सच्चाई में बदल जाता है, तो उसे स्वीकार करने से डरता है.

शिवराज ने अपना वायदा निभाया. डॉक्टर से विनती करके उसे नन्दराम के पैरों का ऑपरेशन करने के लिए मना लिया. उसके पहले नन्दराम के तमाम सारे टेस्ट करवाये गये. ये भी सब बाहर की पैथालॉजी में हुए. इसमें सुनीता का काफी पैसा खर्च हो गया. सारी रिपोर्टें देखने के बाद डॉक्टर ने बताया कि अभी केवल नन्दराम के दाहिने पैर की जांच में रॉड डाली जा सकती थी. दूसरे पैर का घाव अभी तक सूखा नहीं था और उसमें मवाद का बहना जारी था. फिलहाल डॉक्टर ने उसके दाहिने पैर में रॉड डालकर प्लास्टर चढ़ा दिया. शिवराज ने सुनीता की इतनी और मदद की कि अब उसे दवाइयां बाहर से नहीं खरीदनी पड़ती थीं.

दुर्भाग्य ग़रीब आदमी का कभी पीछा नहीं छोड़ता. मुसीबतें उसके आगे खड़ी ही रहती हैं. दुर्भाग्य और मुसीबतें ग़रीब आदमी का पीछा छोड़ दें, तो वह ग़रीब ही क्यों रहे.

दो महीने से ऊपर अस्पताल में हो गये थे. सुनीता के पास के सारे पैसे खत्म हो गये थे. नन्दराम का एक पैर अभी तक टूटा पड़ा था. पता नहीं, दवाइयां उसके शरीर में असर क्यों नहीं कर रही थीं. बाएं पैर का घाव अंदर ही अंदर सड़ रहा था. डॉक्टर ऑपरेशन करने को राज़ी नहीं था. नन्दराम के पैर का दर्द बढ़ता ही जा रहा था.

सुनीता का मन भी अस्पताल के नरक से ऊबने लगा था. अपनी इज्जत और पैसे गंवाकर भी वह नन्दराम को ठीक नहीं करवा पाई थी. बच्चे गांव में बेसहारा पड़े थे. फसल अलग से बर्बाद हो गयी थी. इधर शिवराज भी उसके शरीर से खेलने से बाज़ नहीं आता, जब भी मौका मिलता उसे स्टोर रूम में खींच ले जाता. ऐसे ही एक दिन जब वह उसे बुलाने आया, तो वह भड़क गयी, “मैं क्या यहां धंधा करने आई हूं. पति का इलाज तो किया नहीं, ऊपर से मुझे अपनी जोरू समझने लगे.

क्या करना है, साफ-साफ बता दो. मैं अपाहिज पति के साथ गुजारा कर लूंगी, परंतु इतनी गंदी जिंदगी जीकर मुझे क्या मिलेगा.”

सुनीता ने उखड़े तेवर देखकर शिवराज सहम गया. लगा, हाथ में आई चिड़िया फड़फड़ाकर उड़ने वाली थी. उसने लल्लो-चप्पो करते हुए कहा, “तुम गुस्सा क्यों होती हो. सब कुछ मेरे हाथ में थोड़े ही न है. इलाज़ करना तो डॉक्टर के हाथ में है. मेरे बस में जितना है, उतना मैं कर ही रहा हूं.”

“वो तो ठीक है, परंतु यहां क्या मैं सारी उमर पड़ी रहूंगी. डॉक्टर को बोलो, अगर ऑपरेशन नहीं करना, तो दवाई लिख दे, पांव में प्लास्टर चढ़ा दे. और हमें छुट्टी दे दे. जब बुलाओगे, फिर लेकर आ जाऊंगी.”

शिवराज ने कुछ सोचा, फिर बोला, “चलो, मैं इतना करवा देता हूं, परंतु मुझे भूलना नहीं.”

“अगली बार जब आऊंगी, तब देखूंगी. मैं बहुत परेशान हूं और ज्यादा परेशान न करो.” उसने चिड़िचिड़ाते हुए कहा.

नन्दराम के पैर में प्लॉस्टर चढ़वाकर अगले दिन सुनीता गांव लौट आई. पति को चारपाई पर लिटा दिया गया, फिर उसने अपने घर की तरफ ध्यान दिया. पूरा घर इस तरह गंदा और उजाड़ लग रहा था, जैसे वहां से कोई तूफान गुज़र कर चला गया था. कोना-कोना धूल-मिट्टी से अंटा पड़ा था. बच्चे मैले-कुचैले कपड़े पहने हुए थे. उनके मुंह सूख गये थे, जैसे कई दिनों से उन्हें खाना नहीं मिला था. मां को देखकर रोने लगे थे.

एक-दो दिन बाद जीवन पुरानी पटरी पर आ गया, लेकिन नन्दराम अब पूरी तरह से सुनीता की मेहरबानी पर जीवित था. चारपाई ही उसका घर था, वहीं उसका पाखाना और वहीं उसका खेत-पाट. उसकी सारी दिनचर्या लेटे-लेटे पूरी होती. सुनीता उसे हगाती-मुताती, बदन साफ करती और खाना खिलाती. फिर खेतों की तरफ जाती. बैटे-बैटे घर में अन्न का दाना नहीं आ सकता था. फसल तो बर्बाद हो गयी थी. वह दूसरों के खेतों में काम करके दो पैसे कमा लेती थी. बच्चों ने स्कूल जाना बंद कर दिया था और आवारा पिल्लों की तरह पूरे गांव में चक्कर लगाते रहते थे. सुनीता किस-किस का ख्याल रखती. बच्चों का ख्याल करती, रोजी-रोटी कमाती कि नन्दराम की तीमारदारी करती. अपाहिज होकर अब वह और ज्यादा चीखने-चिल्लाने लगा था, बहुत ज्यादा मुंहफट हो गया था. वह चारपाई से हिल-डुल नहीं सकता था. घर-बाहर में क्या हो रहा है, उसे पता न चलता. इसी कारण उसके

दिमाग में शक के तमाम कीड़े कुलबुलाने लगे थे. अब तो सुनीता घर के अंदर भी रहती तो उसे शक होता कि वह किसी के साथ बुरा काम कर रही थी.

इधर पंडित रामाधीन सुनीता को घेरने में लगा हुआ था. उसका ब्याज बढ़ता जा रहा था. जहां कहीं सुनीता को देखता, पैसों का तगादा करने लगता. सुनीता गिड़गिड़ाकर कहती, “पंडित जी, आप तो देख ही रहे हैं, हमारी क्या हालत है? अगली फसल तक कुछ न कुछ चुकता कर दूंगी.”

“तुम्हारी सारी फसल तो सूख गयी. मज़दूरी से खुद का पेट भी नहीं भरता, मेरा कर्ज़ कहां से चुकाओगी. पैसे लेते समय तुमने क्या कहा था, याद नहीं? मेरा कहना मानो, किसी दिन आकर ब्याज चुका दो, वरना मूलधन से ज्यादा ब्याज हो जाएगा.” रामाधीन जानता था कि वह किस ब्याज की बात कर रहा था और सुनीता भी उसकी बात का मतलब बखूबी समझ रही थी.

सुनीता की निगाहों के आगे शिवराज का चेहरा घूम गया. अस्पताल में अभी तक नन्दराम के इलाज़ का बिल भरके आई थी और अब यहां कर्ज़ का ब्याज भरने की नौबत आ गयी थी. हे भगवान! कितने पाप उसने पिछले जन्म में किए थे, जिनकी सज़ा इस जन्म में भुगतनी पड़ रही थी.

सुनीता अभी तक ब्याज चुकाने से कतरा रही थी. कोई न कोई बहाना बनाकर चली आती, परंतु कब तक बचती. एक दिन रामाधीन उसके घर पर आ धमका और चीख-चिल्लाकर धमकी देने लगा, “पैसा लेते वक़्त तो बड़ा रो-गिड़गिड़ा रही थी. और अब चुकाने के नाम पर आंखें चुराती फिर रही हो. साफ बताये देता हूं, अगर जल्दी ब्याज के साथ पैसा नहीं चुकाया तो तुम्हारा खेत जुतवा लूंगा.”

“पंडितजी, ऐसा जुलुम मत करना. हम सब भूखों मर जाएंगे. ग़रीब आदमी हैं, कहां जाएंगे.” सुनीता ने हाथ जोड़कर कहा.

“तो फिर शाम को आकर अपना हिसाब देख जाना.” रामाधीन इशारे में सुनीता को अपने घर आने की बात कहकर चला गया.

सुनीता बड़ी मुश्किल में पड़ गयी थी. उसके आगे कुआं था, पीछे खाई. भागकर जाती कहां? शाम को खेतों की तरफ जाने का बहाना बनाकर वह पंडित के घर पहुंच गयी. पंडित रामाधीन घर के बाहरी कमरे में बैठा था. उसे देखते ही पकड़कर, अंदर खींच लिया. आज वह कर्ज़दार थी, इसलिए बेबस थी. पंडित रामाधीन महाजन था, उसके पास सुनीता के ऊपर किए गये अहसान की ताक़त थी. उसी अहसान का ब्याज उसे वसूलना था.

सुनीता एक बार फिर बकरी की तरह हलाल कर दी गयी। पहली बार तो वह कटते समय कुछ तड़पी थी, इस बार उसके बदन में कोई हरकत नहीं हुई। मुर्दे की तरह लेटी लुटती रही। लुटने के बाद उसने अपने होश को संभाला और किसी तरह घर पहुंची। अंधेरे में कई बार वह गिरते-गिरते बची। घर के बाहर छप्पर तले नन्दराम चारपाई पर लेटा कुछ बड़बड़ा रहा था। वह नन्दराम की चारपाई पकड़कर नीचे ज़मीन पर बैठ गयी। उसे रुलाई आ रही थी, परंतु वह रो नहीं रही थी। अपने आपको रोक रखा था। उसने नन्दराम के चेहरे की तरफ़ इस तरह देखा, जैसे कह रही थी, 'तुम्हारे कारण अभी और कौन-कौन से नरक की आग में जलना पड़ेगा.'

उसके शरीर के अंदर से कुछ लिज़लिज़ा-चिपचिपा निकल रहा था। उसे लगा जैसे नन्दराम के शरीर का मवाद उसके अंदर से बाहर निकल रहा था। उसे घिन-सी आई और उल्टी होने लगी।

इस बार नन्दराम को उसकी हालत पर तरस नहीं आया। उल्टे गुस्सा करते हुए बोला, "कहां मर रही थी अब तक? अंधेरा हो गया, बच्चे भूखे बैठे हैं और तू बाहर मौज़-मस्ती करने गयी थी."

सुनीता का मन हुआ, नन्दराम के सिर पर कुछ उठाकर दे मारे। सबको अपनी-अपनी पड़ी थी। सबके अपने स्वार्थ थे। वह सभी उन स्वार्थों की पूर्ति उसके शरीर से कर रहे थे, उसके सुन्दर बदन को नोच रहे थे और उसकी बेबस आत्मा को लूट रहे थे। किसी को सुनीता के दुःख-दर्द और कष्ट का अहसास नहीं था। उसके मरने-जीने की किसी को परवाह नहीं थी। सभी अपनी हवस पूरी करने के लिए उसके शरीर के साथ खिलवाड़ कर रहे थे। वह भूखी है, प्यासी है, बीमार है, इसकी किसी को चिन्ता नहीं थी। सोचते-सोचते वह रोने लगी। उसके अंदर बहुत सारे घाव थे, सभी घाव सड़ गये थे और उन घावों से गंदा-बदबूदार मवाद बह रहा था।

उसको रोता देखकर नन्दराम और ज्यादा गुस्सा हो गया, "साली, छिनार, नखरा करती है, बता किस यार के पास गयी थी। इतनी देर से आयी है। मैं जानता हूं, अस्पताल में भी यहीं कुकर्म करती थी। तेरे ही कारण मेरा सही इलाज़ नहीं हुआ। तूने जान-बूझकर मुझे लंगड़ा कर दिया; ताकि बिना किसी रोक-टोक के अपनी मनमानी करती रहे। अब मैं अपाहिज हो गया हूं, तो तू आज़ाद हो गयी है। अपने मन की करेगी, मेरी कहां सुनेगी?"

सुनीता अपना रोना भूलकर खड़ी हो गयी और तमककर बोली, "हां, हां, मैं छिनार हूं, परंतु मुझे छिनार तूने ही बनाया है। तेरे ही कारण मैं बदचलन और कुल्टा

बनी। मुझे कोई शौक नहीं था कि पराये मर्दों के नीचे लेटती। तू मेरे लिए काफी था। तेरे अस्पताल जाने के पहले मैं एक पाक-साफ़, पतिव्रता औरत थी, परन्तु तेरे इलाज़ के लिए मैं छिनार, कुल्टा और बदचलन बन गयी, ताकि तू जिन्दा रहे। औरत का सबसे बड़ा सहारा उसका पति होता है, चाहे वह लूला-लंगड़ा और अपाहिज ही क्यों न हो। तू निकम्मा था, कामचोर था, मैं कुछ नहीं कहती थी। मेहनत मज़दूरी करके तेरा और तेरे पिल्लों का पेट भरती थी, परंतु तू हमेशा मेरे ऊपर शक़ करता रहा। आज तेरा शक़ सच्चा हो गया। अब तेरे कलेजे में टंडक पड़ गयी होगी। और तू जो बार-बार पूछता रहता है कि कहां गयी थी, तो कान खोलकर सुन ले। तेरे इलाज़ के लिए पंडित रामाधीन से बीस हजार रुपये उधार लिए थे। उसी का ब्याज आज चुकाने गयी थी और अभी तो पता नहीं कितनी बार ब्याज चुकाना पड़ेगा। मूलधन चुकाने की नौबत इस जनम में तो नहीं आएगी।" कहते-कहते सुनीता का गला भर्रा गया। वह फफककर रोने लगी।

नन्दराम के पास सच्चाई सुनने की शक्ति नहीं थी। उसके काम सुन्न हो गए थे।

सुनीता के अंदर से और ज़्यादा मवाद बहने लगा था।



नीलकंठ

स्वाति के मन में खुशी की लहर दौड़ रही थी. महीना चढ़े आज पंद्रह दिन हो गए थे और अब तो उसे उबकाई भी आने लगी थी. खट्टा खाने का मन करने लगा था. वह खुशी से झूम-झूम उठी थी, पर वह पूरी तरह आश्वस्त हो जाना चाहती थी. इतना जल्दी इस राज़ को वह किसी पर प्रकट नहीं करना चाहती थी, खासकर पति के ऊपर.

पंद्रह दिन और बीत गए. दूसरा महीना भी निकल गया. अब वह पूरी तरह आश्वस्त थी. वह सचमुच पेट से थी. शादी के दस वर्षों बाद वह मां बनी थी, परंतु मां बनने के लिए उसने क्या-क्या खोया था, यह केवल वही जानती थी. अभी तक उसके पति को भी मालूम नहीं था. पता चलेगा, तो कैसा तूफ़ान उसके जीवन में आएगा, वह अनुमान लगा सकती थी; परंतु मां बनने के लिए वह किसी भी तूफ़ान का सामना करने के लिए अटल चट्टान की तरह खड़ी रह सकती थी, हर प्रकार का त्याग करने को तैयार थी.

दस वर्ष के विवाहित जीवन में जितना कष्ट उसने सहा था, बांझ न होते हुए भी बांझ होने का दंश झेला था, सास की जली-कटी सुनी थी, परिचितों और रिश्तेदारों के व्यंग्य-बाण कानों के रास्ते अपने सीने पर झेले थे; मातृत्व-सुख से वंचित रहने का अहसास खोया था; आज उन सभी कष्टों, दुःखों, व्यंग्य भरे तानों और उलाहनों को अपने शरीर से चिपके घिनौने कीड़ों की तरह झटककर दूर कर देना चाहती थी, लोगों के मुंह बंद कर देना चाहती थी; सास के मुंह पर खुशी की झलक देखना चाहती थी और पति...पति को याद करते हुए उसके मन को झटका लगा, दिल में एक कड़वी-सी कसक पैदा हुई; परंतु फिर उसके सुंदर मुखड़े पर एक व्यंग्यात्मक हंसी दौड़ गयी. अपने होंठों को अपने दांतों से हल्के से काटते हुए सोचा. .पता नहीं आपको कैसा लगेगा? आपके दिल पर क्या गुजरेगी, जब आपको पता

चलेगा, कि मैं मां बनने वाली हूँ, हां, मां, परंतु किसके बच्चे की मां? क्या पीयूष इस सत्य को आसानी से स्वीकार कर लेगा, कि वह मां बनने वाली है. उसके दिमाग में धमाका नहीं होगा, उसका दिल नहीं फट जाएगा? क्या वह यह पूछने का साहस कर पाएगा कि स्वाति के पेट में किसका बच्चा पल रहा है, या वह अपने दिल और दिमाग के दरवाजे बंद करके अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा को बचाने के लिए एक चुप्पी नहीं साध लेगा? कुछ भी हो सकता है, परंतु स्वाति उसके बारे में चिंतित नहीं थी, क्योंकि उसने बहुत सोच-समझकर इतना बड़ा क़दम उठाया था और मातृत्व सुख प्राप्त करने के लिए, अपने माथे से बांझपन का कलंक मिटाने के लिए उसने परंपराओं का अतिक्रमण किया था, मर्यादा का उलंघन किया था और नैतिक मूल्यों का हनन किया था. परंतु उसने जो कुछ किया था, बहुत सोच-समझकर किया था. अपनी जगह पर वह सही थी और उसके मन में अपने किए के लिए कोई अपराधबोध नहीं था.

हर आम लड़की की तरह स्वाति की आंखों में भी रंगीन सपने भरे थे. वह अरमानों की डोली में बैठकर ससुराल आई थी. शादी के पहले उसने पीयूष को देखा था. वह सुदर्शन युवक था और उसे पसंद था. स्वाति और पीयूष की शादी दोनों परिवारों की सहमति से हुई थी. दोनों के परिवार संपन्न थे. उनके परिवारों में केवल एक ही अंतर था. स्वाति के माता-पिता प्रशासनिक सेवा में थे, वहीं पीयूष का परिवार कारोबारी था और उनका व्यापार देश के कई शहरों में फैला हुआ था.

शादी के वक्त स्वाति एक टी.वी. चैनल में न्यूज रीडर और एंकर थी. उसने मॉस कम्यूनिकेशन में डिग्री प्राप्त की थी. वह अपनी रुचि के अनुसार काम कर रही थी. परन्तु शादी के पहले ही पीयूष की मम्मी ने कह दिया था कि शादी के बाद वह काम नहीं करेगी. मन मारकर उसने यह शर्त मंजूर कर ली थी. पीयूष ने एम. बी.ए. किया था. एम.बी.ए. पूरा होते ही वह अपने पिता के साथ उनके व्यापार में सहयोग देने लगा था. दुर्भाग्य से उन्हीं दिनों उसके पिता की असामयिक मौत हो गयी. उसके बाद उसने अपने पिता का कारोबार संभाल लिया था. उन दोनों की शादी के समय पीयूष के पिता जीवित नहीं थे.

दोनों की शादी धूमधाम से सम्पन्न हुई. दोनों पक्षों की तरफ से किसी को कोई शिकायत नहीं थी. स्वाति भी खुश थी कि उसको अपने सपनों का राजकुमार मिल गया, परंतु सुहागरात को ही उसकी खुशियों पर तुषारापात हो गया, उसके

अरमान बिखर गये और सपनों के पंख टूट गये. सुहागरात में दोनों का मिलन स्वाति के लिए बहुत दुखद रहा. पीयूष ने जैसे ही उड़ान भरी कि धड़ाम से ज़मीन पर आ गिरा, जैसे परवाज़ भरने के पहले ही किसी ने पक्षी के पंख काट दिए हों. वह लुढ़ककर लंबी-लंबी सांसें लेने लगा. स्वाति ने अविश्वास भरी निगाहों से उसकी तरफ़ देखा. वह आंखें बंद करके कुत्ते की तरह हांफ रहा था. स्वाति का हृदय दहल गया. मन में एक डर बैठ गया—अगर ऐसा है तो दाम्पत्य-जीवन कैसे पार होगा? फिर उसने अपने मन को तसल्ली देने की कोशिश की. हो सकता है, पहली बार के कारण ऐसा हुआ हो. उसने कहीं पढ़ा था कि प्रथम मिलन में लड़के अत्यधिक उत्तेजना के कारण जल्दी स्खलित हो जाते हैं. यह असामान्य बात नहीं होती है.

धीरे-धीरे सब सामान्य हो जाता है. काश, ऐसा ही हो, स्वाति ने सोचा.

परंतु स्वाति की शंका निर्मूल नहीं थी. उसकी आशाओं के पंख किसी ने नोंच कर फेंक दिये. उसकी सोच भी सत्य सिद्ध नहीं हुई. पीयूष के पंख सचमुच कटे हुए थे, वह बहुत लंबी उड़ान भर सकने में असमर्थ था. स्वाति रोज नदी के तट तक जाती थी, परंतु जैसे ही पानी पीने के लिए अपने हाथ आगे बढ़ाती थी, कोई उसके हाथों को पीछे खींच लेता था. उसकी खुली आंखों के सामने नदी सूख जाती थी. वह गर्म रेत पर पड़ी कराहती रह जाती थी. वह अपने दुर्भाग्य पर रोती, परंतु कुछ कर नहीं सकती थी. दाम्पत्य-जीवन के बंधन इतने कड़े होते हैं कि कोई भी उनको तोड़ने का साहस नहीं कर सकता है. अगर तोड़ता है तो शरीर में कहीं न कहीं घाव हो जाता है.

स्वाति के जीवन में खुशियों के फूल मुरझाने लगे थे, परंतु वह पढ़ी-लिखी थी. उसने आशा का दामन नहीं छोड़ा. आधुनिक युग विज्ञान का युग था, हर प्रकार के मर्ज का इलाज़ संभव था.

स्वाति के मन में पीड़ा थी, परंतु ऊपर से वह बहुत खुश रहने का प्रयास करती थी. घर के सारे काम करती थी. सासू भी उसके व्यवहार और कार्यकुशलता से खुश थीं, उसका पूरा ख्याल रखतीं. स्वाति के साथ घर के कामों में हाथ बंटातीं. स्वाति कहती—“मांजी, अब आप के आराम करने के दिन हैं, क्यों मेरे साथ लगी रहती हैं. मैं कर लूंगी न सब कुछ.”

“तू सब कर लेती है, मैं जानती हूं. परंतु मैं अपंग नहीं हूं. तेरे साथ काम करती हूं तो शरीर में स्फूर्ति बनी रहती है. काम न करूंगी तो बीमार होकर बिस्तर से लग जाऊंगी. जब तक जीवन है, मनुष्य को कुछ-न-कुछ करते रहना चाहिए.”

“फिर भी कुछ देर आराम कर लिया कीजिए.” स्वाति सासू को समझाने का कमजोर प्रयास करती.

“तेरे आने से मुझे आराम ही आराम है. बस एक पोता देकर तू मुझे बची-खुची खुशियां दे दे तो मेरा जीवन धन्य हो जाएगा.” मां जी ने स्वाति की तरफ़ ममता भरी निगाह से देखा.

स्वाति के हृदय में कुछ टूट गया. मां जी की तरफ़ देखने का उसे साहस नहीं हुआ. सिर झुकाकर अपने काम में व्यस्त हो गयी—

“ओ हो, मेरी बेटी शरमा गयी. कोई बात नहीं, एक न एक दिन हर लड़की मां बनती है. तुम भी बनोगी. मैं चाहती हूं, जितनी जल्दी हो सके, पोते का मुंह दिखा दो.”

हुंह, पोते का मुंह! स्वाति ने कटुता से सोचा—हर सास पोते का ही मुंह क्यों देखना चाहती है. आज भी नारी सदियों पुरानी इस सड़ी हुई मानसिकता से उबर नहीं पाई है. मां बेटा चाहती है तो सास पोता. स्वाति का मन कड़वाहट के साथ-साथ दुःख से भी भर गया. उसका वश चलता तो पोता-पोती दोनों का मुंह एक साथ सासूजी को दिखा देती. परंतु बच्चे पैदा करना एक अकेली स्त्री के हाथ में नहीं है. इसमें स्त्री-पुरुष दोनों का बराबर का सहयोग होना ज़रूरी है. दोनों में से एक भी कमजोर हुआ तो बच्चा क्या, पत्थर भी पैदा नहीं किया जा सकता है. कितनी भी उपजाऊ ज़मीन हो, उसमें सूखा और मृत बीज नहीं उग सकता और पुष्ट से पुष्ट बीज भी बंजर-ऊसर ज़मीन में नहीं उग सकता.

समय बीतने के साथ-साथ सासू मां की स्वाति से पोते पैदा करने की अपेक्षाएं बढ़ने लगीं.

दिन व्यतीत होते जा रहे थे. उसी अनुपात में सासू मां की पोते के प्रति चाहत भी बढ़ती जा रही थी. एक दिन उन्होंने कहा, “स्वाति बेटा, अब और कितना इंतज़ार करवाओगी? तुम लोग कुछ करते क्यों नहीं? क्या कोई सावधानी बरत रहे हो?” उन्होंने संदेहपूर्ण निगाहों से स्वाति को देखा.

“कैसी सावधानी मां?” स्वाति ने अनजान बनते हुए पूछा. वह अपनी तरफ़ से क्या कहती—भगवान ने ही उसके साथ मज़ाक किया था कि उसे ऐसे पुरुष के साथ बांध दिया था, जिसमें पुरुषत्व की कमी थी, परंतु, इसमें भगवान का क्या दोष? न उसके घरवालों का दोष था, न ससुरालपक्ष के लोगों का? दोष है तो केवल पीयूष का, जिसने सब कुछ जानते हुए भी स्वाति के साथ शादी की. क्या शादी के पहले

उसे अपनी कमी के बारे में पता नहीं रहा होगा. हर पुरुष को अपनी मर्दानगी की कमी के बारे में पता होता है, तो शादी के पहले उसने अपना इलाज़ क्यों नहीं करवाया?

स्वाति अभी तक चुप थी. शर्म और संकोच की दीवार उसके मन में थी, परंतु अब इस दीवार को उसे तोड़ना ही होगा. पीयूष से इस बारे में उसे बात करनी होगी, परंतु इस तरीके से कि उसके अहम् को ठेस न पहुंचे और वह बात की गंभीरता को समझकर अपना इलाज़ करवाने के लिए तैयार हो जाए.

स्वाति बहुत दिन तक इंतज़ार नहीं कर सकती थी. अभी तो सासू मां उसके पीछे पड़ी हैं. बाद में उसके माता-पिता, नाते-रिश्तेदार, मित्र और परिचित सभी हाथ धोकर पीछे पड़ जाएंगे. एकाध साल तो कोई मुंह नहीं खोलेगा, परंतु उसके बाद सबकी जुबान के ताले खुल जाएंगे. लोगों को स्वाति में हर प्रकार की कमी दिखाई देने लगेगी. पीयूष के बारे में कोई बात नहीं करेगा? भारतीय मानसिकता इतनी घटिया होती है कि यहां का हर व्यक्ति बच्चा पैदा करने की पूरी जिम्मेदारी औरत की ही मानता है. पुरुष में कोई कमी होगी, यह मानने को कोई तैयार ही नहीं होता.

पीयूष से बात करनी पड़ेगी. वह अकेले ही मानसिक यातना क्यों झेले? उसका क्या दोष है? जिसका दोष है, उसके बारे में कोई कुछ नहीं जानता. जान भी नहीं सकता, जब तक स्वाति किसी को कुछ न बताए; परंतु कोई उसकी बात पर विश्वास करेगा? करे न करे, ईश्वर तो जानता है.

शादी की पहली वर्षगांठ बीत गयी. कोई उत्साह उनके बीच में नहीं था. स्वाति कोई ज़ंशन मनाना नहीं चाहती थी. पीयूष और मां दोनों की इच्छा थी कि घर में छोटा-मोटा ज़ंशन मनाया जाए. केवल खास लोगों को बुलाया जाय; परंतु स्वाति ने साफ़ मना कर दिया. वह लोगों की निगाहों में उगे हुए प्रश्नों की आग में तपना नहीं चाहती थी.

अंत में पीयूष और स्वाति रात्रि-भोजन एक रेस्तरां में करके लौट आए.

उसी रात...स्वाति ने खुलकर बात की पीयूष से. वह दोनों बिस्तर में साथ-साथ लेटे थे. पीयूष शांत था. उसकी तरफ़ से कोई पहल नहीं हो रही थी. स्वाति ने मन को दृढ़ करते हुए कहा—

“एक साल हो गया, अब हमें कुछ करना होगा. मम्मी की हमसे कुछ अपेक्षाएं हैं.”

पीयूष चौंका, परंतु बिना स्वाति की ओर करवट बदले पूछा, “कैसी अपेक्षाएं?”

स्वाति मछली की तरह करवट बदलकर पीयूष की आंखों में देखती हुई बोली, “क्या आप नहीं जानते कि एक मां की बेटे-बहू से क्या अपेक्षाएं होती हैं?”

पीयूष की पलकें झुक गयीं, “मैं क्या कर सकता हूँ?” उसने हताश स्वर में कहा.

स्वाति ने अपनी कोमल उंगलियों से उसके सिर को सहलाते हुए कहा, “आप निराशाजनक बातें क्यों कर रहे हैं. दुनिया में हर चीज संभव है, हर मर्ज़ का इलाज़ है और प्रत्येक समस्या का समाधान है.”

पीयूष ने उसकी आंखों में देखते हुए पूछा, “तुम क्या चाहती हो.”

“बस यही कि आप एक अच्छे डॉक्टर से सलाह लेकर अपना इलाज़ करवा लें और जब तक आप का इलाज़ चलता रहेगा, मैं अपने पुराने जॉब पर वापस जाकर खुश रहने का प्रयत्न करूंगी.”

पीयूष सोच में पड़ गया—स्वाति का काम पर जाना उसे पसंद नहीं था. दरअसल वह अपनी यौन अक्षमता से परिचित था और वह नहीं चाहता था कि शादी के बाद स्वाति अन्य पुरुषों के संपर्क में आए. स्त्री की अधूरी इच्छाएं और कामनाएं उसे भटका सकती थीं. इन पर किसी स्त्री का जोर नहीं चलता. जब स्त्री की यौन इच्छा पूरी नहीं होती, तो उससे पतिव्रता होने की अपेक्षा करना बेमानी है. उसके मन में डर था और यह डर अक्सर नाग की तरह फन उठा लेता था. आज फिर उसने फन उठा लिया था. उसने अपने तन में खिंचाव महसूस किया और रूखे स्वर में बोला—“तुम्हारा काम करना मम्मी को पसंद नहीं आएगा. यह उन्हीं की इच्छा थी कि तुम शादी के बाद काम नहीं करोगी.” अपने भय को छिपाने के लिए वह सदा मम्मी का बहाना लेता था.

स्वाति का उत्साह पिचके गुब्बारे की तरह मर गया. वह पीछे की तरफ़ सिर करके बोली, “क्या आप मां को समझा नहीं सकते. इक्कीसवीं सदी में एक पढ़ी-लिखी लड़की को सारा दिन घर में बिठाकर चूल्हा-चौका करवाना क्या बुद्धिमानी है? मैं अपनी शिक्षा और सोच से परिवार के मान-सम्मान और आय में बढोत्तरी ही करूंगी.” शादी के पहले जिस इच्छा को वह स्पष्ट रूप से नहीं कह पाई थी, अब कह रही थी. पीयूष की कमजोरी से उसे बल मिल गया था.

“बाहर जाकर काम करने की इच्छा तुम मन से निकाल दो.” पीयूष ने कुछ कड़े स्वर में कहा, “मां, कभी नहीं मानेंगी और अगर मैंने इज़ाज़त दी तो घर में बेवज़ह कलह पैदा होगी.”

स्वाति जानती थी, इसमें मां की इच्छा कम पीयूष की तानाशाही अधिक थी. वह चुप रह गयी. पत्थरों को रगड़ने से उनसे आग ही पैदा होती है, पानी नहीं.

पीयूष ने आगे कहा, “परंतु मैं एक काम कर सकता हूँ. तुममें रचनात्मक प्रतिभा है. मैं घर पर कंप्यूटर ला देता हूँ. तुम लेख-कहानी लिखकर पत्र-पत्रिकाओं में भेजो. इससे तुम्हारे अंदर का रचनाकार जीवित रहेगा और तुम भी समय का सही उपयोग कर सकोगी.”

स्वाति जो चाहती थी, यह उसका सही समाधान नहीं था. चौबीस घंटे घर पर रहने से एकाकीपन और ज्यादा डरावना लगने लगता है. यूँ तो स्वाति के ऊपर बाहर जाने पर कोई प्रतिबंध नहीं था, परंतु पुरानी सहेलियों और मित्रों से संपर्क टूट चुका था. एकाध से कभी-कभार फोन पर बात हो जाती थी. अब उसे अपने पुराने रिश्तों की जीवित करना होगा. जिस घुटन भरी मानसिक अवस्था में वह जी रही थी, उसमें उसका बाहर निकलकर लोगों के साथ घुलना-मिलना आवश्यक था; वरना वह मानसिक अवसाद के गहरे कुएं में गिर सकती थी; फिर उसका बाहर निकलना असंभव था.

स्वाति ने बुझे मन से पति के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया. परंतु मन में विद्रोह के भाव जाग्रत हो उठे. वह बहुत सीधी-सरल और सच्चे मन की लड़की थी. उसके स्वभाव में विद्रोही भाव नहीं थे, परंतु परिस्थितियां मनुष्य को विद्रोही बना देती हैं. स्वाति के पास विद्रोह करने के एक से अधिक कारण थे; परंतु अपनी मनोभावना को उसने पति पर प्रकट नहीं किया.

स्वाति ने संशय से पूछा, “और आपने अपने बारे में क्या सोचा है?”

“मेरे बारे में क्या?” उसने टालने के भाव से कहा.

“आप जान-बूझकर अनजान क्यों बन रहे हैं? क्या आप समझते हैं कि मैं इतनी भोली हूँ और पुरुष के बारे में कुछ नहीं जानती. आप अपने आपको किसी भ्रम में रखने की कोशिश न करें, वरना मां जी पोता-पोती का मुंह देखे बिना ही स्वर्ग सिधार जाएंगी.”

पीयूष कुछ पल चुप रहा, फिर गंभीरता से कहा, “मैं अपना इलाज़ करवा लूंगा.”

“तो फिर कब चलेंगे डॉक्टर के पास?” स्वाति ने उत्साह से कहा.

“तुम क्यों मेरे साथ चलोगी? मैं स्वयं जाकर डॉक्टर से सलाह-मशविरा ले लूंगा.” पीयूष की आवाज़ में बेरुखी साफ़ दिखाई पड़ रही थी. स्वाति के मन में कुछ चटक गया. पति-पत्नी के प्रेम की डोर में एक गांठ पड़ गयी.

पीयूष ने दूसरे ही दिन एक डेस्कटॉप कंप्यूटर प्रिंटर के साथ लाकर घर पर लगवा दिया. स्टेशनरी भी रख दी. स्वाति ने अपने भावों को शब्द-रूप में ढालना आरंभ किया. उसके लेखन को प्रकाशन के माध्यम से गति मिली. इससे काफ़ी हद तक उसे मानसिक सुख और शांति का अनुभव हुआ.

स्थानीय पत्र-पत्रिकाओं के दफ़्तर में जाकर स्वाति स्वयं रचनाएं देती थी. इससे पत्रकारों और लेखकों से मिलने का उसका दायरा बढ़ा. संपादकों के साथ उसके विचारों का आदान-प्रदान हुआ. पुराने दोस्तों के फोन नंबर ढूंढकर उनसे संपर्क किया. कुछ नये मित्र भी बने तो उसकी मानसिक दुश्चिन्ता से उसे मुक्ति मिल गयी.

स्वाति अपनी दुश्चिन्ता और मानसिक परेशानी से बचने के उपाय ढूंढ रही थी, तो दूसरी तरफ़ सासू मां उसकी परेशानी बढ़ाने में कोई कसर नहीं छोड़ रही थीं. जैसे-जैसे महीने साल में बदल रहे थे, सासू मां की वाणी की मधुरता गायब होती जा रही थी. उनके मुंह से अब केवल व्यंग्य-बाण ही निकलते थे. स्वाति को बात-बात पर कोसना उनकी दिनचर्या में शामिल हो गया था और इस दिनचर्या का पालन वह पूरी निष्ठा और आस्था के साथ करती थीं, जैसे पूजा-अनुष्ठान कर रही हों. सासू मां की कटुता स्वाति अपनी कहानियों और कविताओं में भरती रहती थी.

स्वाति का घर से बाहर निकलना मां जी को बिलकुल पसंद नहीं था. वह अक्सर टोंकती, “स्वाति, बाहर घूमने-फिरने से अच्छा है, कुछ घर की तरफ़ भी ध्यान दो.”

“मेरे बिना घर का कौन-सा काम रुका पड़ा है?” स्वाति ने अब अपनी स्वाभाविक सरलता त्याग दी थी. वह भी पलटकर जवाब देने लगी थी.

“शादी के कई साल हो गये. अभी तक एक बच्चा पैदा न कर सकी. घर-गृहस्थी की तरफ़ कब ध्यान दोगी? बच्चे कब संभालोगी?”

“जब समय आएगा, बच्चे भी पैदा हो जाएंगे.”

“वह समय पता नहीं कब आएगा?” सासू मां बोलीं. स्वाति कुछ नहीं बोली, तो सासू मां ने आगे कहा-

“तुम्हारे पैर घर में टिकते ही नहीं, बच्चों की तरफ़ ध्यान क्यों जाएगा? बाहर तुम्हारे सारे शौक पूरे हो रहे हैं, तो पति से क्या लगाव होगा? उसे प्यार दोगी तभी तो बच्चे पैदा होंगे?”

स्वाति ने जलती आंखों से सासू मां को देखा. मन में एक ज्वाला-सी भड़की. इच्छा हुई कि सासू मां को सब कुछ बता दे, कम-से-कम उनका कोसना तो बंद हो जाएगा; परंतु क्या वह स्वाति की बात पर विश्वास करेंगी. शायद न करें? अपने बेटे की कमजोरी को वह क्यों स्वीकार करेंगी? कोई अपने दही को खट्टा नहीं कहता. काना बेटा भी अपने मां-बाप को राजकुमार लगता है. मां जी को विश्वास भी हो जाएगा तो भी उसकी बात पर अविश्वास करने का नाटक करेंगी. उल्टे उसी की सब जगह बदनामी होगी?

मनुष्य स्वाभाविक तौर पर अपनी गलतियों को छिपाता है. सासू मां को कुछ बताना अपने सिर को पीटने जैसा था. उसने अपने मन की भड़ास को मन में ही टंडा कर दिया, परंतु विद्रोह की आग को वह नहीं दबा सकी; उसकी चिंगारी चटखने लगी थी. किसी भी दिन यह भड़ककर लपटों में बदल सकती थी. इस लपट में वह सबको जला देगी, सासू मां और पति दोनों को, तभी उसके मन को शांति प्राप्त होगी.

“पता नहीं कैसी बंजर कोख लेकर आई है. ऊसर में भी बरसात की दो बूंदें पड़ने से घास उग आती है, परंतु इसकी कोख में तो जैसे पत्थर पड़े हैं.” सासू मां के प्रवचन चलते ही रहते थे.

सासू मां की जली-कटी सुनते-सुनते स्वाति तंग आ चुकी थी. लेख, कविता और कहानी में मन की भड़ास निकालने के बाद भी उसके मन की जलन कम नहीं होती थी. परिणामतः रात-दिन सोचते रहने से उसकी सेहत पर भी असर पड़ रहा था. खाना खाने पर भी जैसे वह उसके बदन को लगता ही न था. चेहरे की कांति को धीरे-धीरे ग्रहण लगना शुरू हो गया था. बीच में कुछ दिन के लिए वह मायके गई तब भी उसकी सेहत में कोई सुधार नहीं हुआ. वहां भी लोग केवल एक ही सवाल करते, “अभी तक बच्चा क्यों नहीं हुआ?” सभी लोग जैसे उसके बच्चा न होने के कारण ही चिन्ताग्रस्त थे. स्वाति के घर में बच्चा पैदा होने से ही जैसे सबके घरों में बच्चे की किलकारियां गूंजने वाली थीं.

स्वाति का मानसिक तनाव बढ़ता जा रहा था. पीयूष की तरफ से उसे कोई सकारात्मक संकेत नहीं मिल रहे थे. उसने कहा था कि वह एक आयुर्वेदाचार्य से सलाह लेकर जनेन्द्रियों को पुष्ट करने वाली कुछ यौगिक क्रियायें कर रहा था और दूध के साथ कोई चूर्ण ले रहा था. स्वाति समझ गयी—वह किसी ढोंगी वैद्य के चक्कर में फंस गया था. एक नियमित अवधि के बाद जब दोनों ने संबंध बनाए तो स्वाति

को पीयूष की पौरुषता में कोई अंतर नज़र नहीं आया. पीयूष कहीं आहत न हो जाए, इसलिए उसने उस दिन कुछ नहीं कहा. परंतु कब तक सहती? चुप्पी लगातार बढ़ती रहे तो तनाव की शक्त में एक ऊंची दीवार की तरह सामने आ खड़ी होती है. चुप्पी को तोड़ने में ही भलाई थी; अतः कुछ दिन बाद उसने कहा, “आप किसी अच्छे डॉक्टर को क्यों नहीं दिखाते?”

“क्या फायदा, जब आयुर्वेद में इसका इलाज़ नहीं है, तो अंग्रेजी चिकित्सा में कहाँ होगा?”

“आप कैसी दकियानूसी बातें कर रहे हैं. आप पढ़े-लिखे हैं. एक अनपढ़-गंवार व्यक्ति के मुंह से भी यह बात अच्छी नहीं लगती. आज विज्ञान कहां-से-कहां पहुंच गया. चिकित्सा के क्षेत्र में इसने अभूतपूर्व प्रगति की है. कम से कम आप तो ऐसी बात न करें.”

“मैं जानता हूं, परंतु मर्दानगी का इलाज़ करनेवाले सारे अंग्रेजी डॉक्टर ‘फ्राड’ के सिवा कुछ नहीं होते.”

“आप ऐसे फ्राड डॉक्टरों के पास क्यों जाएंगे? सभी डॉक्टर फ्राड नहीं होते.”

“ठीक है, मैं देख लूंगा.” पीयूष ने उपेक्षा से कहा और बाहर की तरफ चल दिया.

स्वाति पति के टालू स्वभाव से हैरान रह गयी. पता नहीं किस मिट्टी का बना है यह इंसान... इतना लापरवाह! उसे अपने जीवन की चिंता नहीं है, भविष्य की चिंता नहीं है. परिवार को लेकर वह दुःखी-परेशान नहीं है. परिवार में रहते हुए भी वह अपनी जिम्मेदारियों के प्रति लापरवाह कैसे हो सकता है? अगर इतना ही गैरजिम्मेदार है वह, तो शादी करके एक लड़की की जिंदगी क्यों बरबाद की? क्या इस बात का उसे अफ़सोस नहीं है? संभवतः सामाजिक प्रतिष्ठा को बचाए रखने के लिए उसने स्वाति से शादी की थी. बच्चे नहीं हुए तो उसकी जिम्मेदारी स्वाति पर थोपी जा सकती थी कि वह बच्चा पैदा करने में समर्थ नहीं थी. क्या सासूजी को अपने बेटे की नपुंसकता की जानकारी होगी? शायद न हो, अगर होती तो वह रात-दिन पोते की कामना न करती? पीयूष ने सबको धोखे में रखा हुआ है? सोचकर स्वाति का मन वितृष्णा से भर उठा. पीयूष के प्रति उसके मन में घृणा के बीज उत्पन्न हो गए. घृणा के यह बीज विद्रोह के पौधों में बदलने लगे थे. उसने तय कर लिया कि अगर पीयूष ने अपना इलाज़ नहीं करवाया, तो वह उससे बदला लेकर रहेगी.

सासू मां का अत्याचार उसके ऊपर बदस्तूर जारी था; बल्कि दिनोंदिन बढ़ता ही जा रहा था. उनके तानों और जली-कटी बातों से स्वाति का हृदय कटकर रह जाता था. दूसरी तरफ पति की उपेक्षा से उसकी मानसिक परेशानी दुगुनी हो जाती. उसे लगता, इस भरी-पूरी दुनिया में वह बिलकुल अकेली पड़ गयी है. उसका पति और सास ही उसके दुश्मन बन गए हैं. अपने मम्मी-पापा से वह अपनी परेशानी बता नहीं सकती थी. अपना दर्द वह उनके हिस्से में क्यों डाले. उन्होंने तो अपनी जिम्मेदारी निभा दी थी. उसकी शादी कर दी. अब अपने दाम्पत्य-जीवन की परेशानियों से अवगत कराकर उन्हें क्यों परेशान करे?

उसने ठान लिया कि स्वयं ही अपनी परेशानियों से लड़ेगी और जीत हासिल करेगी.

इन्हीं दुश्चिन्ताओं से गुजरते हुए उसने इंटरनेट पर एक प्रसिद्ध सेक्सोलॉजिस्ट का नाम व पता ढूँढ़ निकाला, फिर पीयूष से कहा, “आप स्वयं तो कुछ करने वाले नहीं हैं. मैंने एक डॉक्टर के बारे में इंटरनेट से जानकारी प्राप्त की है. उनसे अप्वाइंटमेंट भी ले लिया है. कल हम दोनों उनके पास चलेंगे.”

पीयूष ने पल भर के लिए स्वाति को हैरत से देखा, जैसे उसकी समझ में स्वाति की बात न आई हो. फिर उसकी तयोरियां चढ़ गईं और तीखे स्वर में बोला—“तुम्हें यह सब करने की क्या ज़रूरत है? मेरी बीमारी का ढिंढोरा पीटकर मेरा मज़ाक बनाना चाहती हो?”

अब हैरान होने की बारी स्वाति की थी, “यह क्या कह रहे हैं आप? आपकी बीमारी के बारे में मैं चिंता नहीं करूंगी, तो और कौन करेगा. इस बीमारी का इलाज़ करवाना मज़ाक कैसे हो सकता है?”

पीयूष ने अपने स्वर में और ज़्यादा तल्खी घोलते हुए कहा, “एक बात समझ लो. मैं किसी डॉक्टर के पास नहीं जानेवाला. तुम अपने काम से काम रखो. घर संभालो, मां की सेवा करो, अपना लेखन कार्य करो. तुम्हें जो चाहिए, मैं लाकर दूंगा; परंतु मेरे बारे में और कुछ करने की तुम्हें ज़रूरत नहीं है.”

स्वाति भी भड़क गयी. “आप क्या समझते हैं, घर संभालने, सास की सेवा करने और लेखन कार्य करने मात्र से एक पत्नी के जीवन में खुशियां आ सकती हैं? इसके अलावा उसे और कुछ नहीं चाहिए? आप समझते क्यों नहीं कि एक स्त्री को इसके अतिरिक्त और भी कुछ चाहिए, उसे अपने पति से एक बच्चा भी चाहिए. वह मां बनना चाहती है. मां बनकर ही एक स्त्री को पूर्णता प्राप्त होती है.”

इस बार पीयूष चुप रहा. स्वाति उसी तल्खी से बोली, “इस घर में क्या हो रहा है, आपको दिखाई नहीं पड़ता? सासू मां मेरे बारे में क्या-क्या बोलती रहती हैं, वह भी आपके कानों में नहीं पड़ता, क्योंकि आपने अपनी आंखें और कान बंद कर रखे हैं. मेरी समझ में नहीं आता कि मेरे जीवन में आग लगाकर आप इतने निरपेक्ष कैसे रह सकते हैं. आप को पता है कि आपका रोग लाइलाज़ है; परंतु अपनी नामर्दगी की सज़ा आप मुझे क्यों दे रहे हैं? मैंने क्या अपराध किया है?” बोलते-बोलते स्वाति की आवाज़ गीली हो गयी. वह पलंग पर बैठकर सुबकने लगी.

पीयूष ने उसे चुप कराने का कोई प्रयास नहीं किया और चुपचाप बाहर निकल गया. स्वाति ने गीली आंखों से उसे बाहर जाते हुए देखा और उसका हृदय शीशे की तरह चटक गया. पीयूष के प्रति मन घृणा से भर गया. उसी क्षण दाम्पत्य-जीवन की पवित्रता से उसका विश्वास उठ गया. उसकी समझ में धीरे-धीरे यह आने लगा था कि विवाहित स्त्रियां क्यों पराए पुरुष की तरफ आकर्षित होती हैं. इसमें सदा स्त्री का ही दोष नहीं होता. पारिवारिक जीवन की विषम परिस्थितियां, सास-ससुर का अत्याचार, पति की उपेक्षा आदि कारण भी स्त्री को पर पुरुष की बांहों में जाने के लिए मजबूर करते हैं.

स्वाति ने अभी तक अपना दुःख किसी से नहीं बांटा था. अकेली ही सहती आ रही थी, परंतु अब सहन नहीं हो रहा था. वह टूटने लगी थी. इसके पहले कि वह पूरी तरह से टूटकर बिखर जाए, उसे कुछ-न-कुछ करना होगा. पति से तलाक़ लेने की लंबी प्रक्रिया से वह गुजरना नहीं चाहती थी. वह इसी घर में रहकर अपने अस्तित्व को बचाना चाहती थी. दाम्पत्य-जीवन को बचाकर मातृत्व प्राप्त करना चाहती थी. सासू मां को पोते-पोती की खुशियां प्रदान करना चाहती थी. परंतु यह कैसे संभव था? पीयूष की नपुंसकता से यह संभव नहीं हो सकता है, तो फिर. ..? क्या करेगी वह?

स्वाति की प्रिय सहेली नम्रता उसी के शहर में ब्याही थी. दो साल का बच्चा था उसका. उससे यदा-कदा बात होती रहती थी. उसके बेटे की जन्मदिन पर अपने पति के साथ गई थी. इधर मानसिक परेशानी और उलझनों के कारण उसने नम्रता को काफी दिनों से फोन नहीं किया था. कुछ सोचकर उसने नम्रता को फोन किया. हाय-हेलो के बाद स्वाति ने कहा—“मैं तुमसे मिलना चाहती हूं.”

“तो आ जाओ न यार! कितने दिन हो गए मिले हुए. मिलकर गप्प-शप्प मारेंगे और पुरानी यादें ताज़ा करेंगे.”

स्वाति जब नम्रता से मिलने गई, तो वह उसे देखकर हैरान रह गई, “यह क्या स्वाति! इतनी कमजोर कैसे हो गई? बीमार थी क्या?”

“सब बताऊंगी यार!” स्वाति ने फीकी मुस्कराहट के साथ कहा. नम्रता का पति सरकारी नौकरी में उच्च पद पर था. उस वक्त वह घर पर ही था. स्वाति से अपने बेटे के जन्मदिन पर मिल चुका था. पहले वाली स्वाति और सामने बैठी स्वाति में ज़मीन आसमान का अंतर था. उसके चेहरे की चमक कहीं खो गई थी, आंखें कुछ ढूँढ़ती-सी लगती थी. होंठों में जैसे ज़माने भर की प्यास भरी हुई थी, परंतु उनकी प्यास मिटाने वाला कोई नहीं था. उसके होंठ सूखते जा रहे थे. स्वाति से बोला, “स्वातिजी, चांद में ग्रहण लगते तो देखा था, परंतु यह पतझड़ कहां से आ गया. आपका खूबसूरत चांद-सा मुखड़ा कहीं खो गया है.”

पीड़ा में भी स्वाति की हंसी फूट पड़ी. अमित की बात सुनकर उसका दर्द जैसे गायब हो गया. उसकी की तरफ़ प्यार भरी नज़र से देखा और फिर शरमाकर बोली, “आप तो मेरे ऊपर कविता करने लगे.”

“अरे! नहीं, ये तो तुम्हारे जीवन में बहार बनकर छाने की कोशिश कर रहे हैं. स्वाति, इनसे बचकर रहना, यह बड़े दिलफेंकू टाइप के इंसान हैं. सुंदर लड़की देखते ही लाइन मारना चालू कर देते हैं.”

“ये तो खुद कह रहे हैं कि मैं पतझड़ की मारी हूं. मेरा चांद कहीं खो गया है. ऐसे में मेरे ऊपर क्या लाइन मारेंगे.” स्वाति ने दुःखी होकर कहा.

“ऐसा न कहो, ये तो सूखे फूल में भी खुशबू भर देते हैं.” नम्रता जैसे अपने पति की पोल खोलने पर आमादा थी. स्वाति शर्म और संकोच में डूबती जा रही थी. अमित ने अपनी पत्नी से कहा, “तुम इस बेचारी को क्यों परेशान कर रही हो. पहले इसके हाल-चाल तो पूछो कि इसे हुआ क्या है?”

दोनों सहेलियां जब एकांत में बैठीं, तो स्वाति ने अपने हृदय के सारे पर्दे उठा दिए, मन की सारी गुत्थियां खोल दीं. कुछ भी न रखा अपने पास...नम्रता की आंखों में आंसू छलक आए उसकी बातें सुनकर. सब कुछ सुनने के बाद बोली, “स्वाति, तुम सचमुच स्वाति नक्षत्र की तरह प्यासी हो. कौन जानता था कि एक सुंदर पढ़ी-लिखी लड़की के जीवन में इस तरह दुर्भाग्य की छाया भी पड़ सकती है. अब तुम क्या चाहती हो..?”

“नम्रता, तुम मेरी सबसे अच्छी सहेली हो, मैं तुम्हारी मदद चाहती हूं.”

“मैं तुम्हारे लिए हर संभव मदद करूंगी. बताओ, कैसी मदद चाहती हो?”

“मैं जानती हूं, जो मैं तुमसे मांगने जा रही हूं, वह सहज ही किसी पत्नी को मंजूर नहीं होगा, परंतु मैं इसके लिए किसी कोटे पर नहीं बैठ सकती; किसी पर पुरुष से संबंध नहीं बना सकती.”

“तुम क्या चाहती हो?” नम्रता ने धड़कते दिल से पूछा. उसे कुछ-कुछ समझ में आने लगा था.

“मैं अपनी कोख भरना चाहती हूं, मातृत्व प्राप्त करना चाहती हूं.”

“यह कैसे संभव हो सकता है? तुम्हारा पति...?”

“सब कुछ हो सकता है, मुझे तुम्हारा साथ चाहिए.” स्वाति ने उसकी बात काटकर कहा. उसके स्वर में उतावलापन था, जैसे अगर जल्दी से अपनी बात नहीं कहेगी, तो कभी कह नहीं पायेगी.

“क्या तुम्हारा कोई ब्याय फ्रेंड है, जिसके साथ...” नम्रता ने जानना चाहा.

“अरे नहीं, ब्याय फ्रेंड पालना मेरे बस का नहीं. किसी पर पुरुष से शारीरिक संबंध बनाना हर हाल में खतरनाक होता है. वह जीवन भर के लिए गले की हड्डी बन जाता है. संबंध तोड़ने पर ब्लैक-मेल करने लगता है. मैं इतना बड़ा जोखिम उठाकर अपने परिवार को नष्ट नहीं करना चाहती हूं.”

“तो फिर मैं किस प्रकार तुम्हारी मदद कर सकती हूं?” नम्रता ने बेवसी से पूछा.

“बस कुछ दिन के लिए तुम्हें अपने हृदय पर पत्थर रखना होगा, कुछ दिनों के लिए तुम अपने पति को मुझे उधार दे दो. मैं उनके साथ शारीरिक सम्बन्ध बनाना चाहती हूं. जब मेरी कोख भर जाएगी, तो मैं उनसे अपना सम्बंध तोड़ लूंगी.” स्वाति ने साफ-साफ कहा. सुनकर नम्रता को चक्कर-सा आ गया. वह विस्फारित नेत्रों से स्वाति को देखती रही. मुंह से एक बोल भी न फूटा.

स्वाति ने उसके दोनों हाथ पकड़कर अपने धड़कते सीने पर रख लिए और विनती-सी करती बोली, “तुम मेरी इतनी-सी बात मान लो, मैं तुम्हारी जीवन भर अहसानमंद रहूंगी. तुम यह सोच लेना कि जैसे तुम इस बारे में कुछ नहीं जानती हो.”

नम्रता कुछ पल सोचती-सी बैठी रही, फिर अपने हाथों से स्वाति के हाथों को थामते हुए कहा, “सुनकर बड़ा अज़ीब-सा लग रहा है, बड़ा कटोर निर्णय है यह. एक पत्नी जान-बूझ कर अपने पति को दूसरी स्त्री के बिस्तर में लिटा दे, यह संभव नहीं होता; परंतु मैं तुम्हारा दुःख समझ रही हूं. उसकी कसक अपने दिल में महसूस

कर सकती हूँ. परन्तु अच्छा होता, अगर तुम बिना बताये मेरे पति को अपने जाल में फंसा लेती. पीठ पीछे पति क्या करता है, यह जबतक पत्नी को पता नहीं चलता, उसे दुःख नहीं होता है.”

“मैं तुम्हारे साथ विश्वासघात नहीं करना चाहती थी. मैं पूरी सुरक्षा के साथ यह सब करना चाहती हूँ. अगर यह सबकुछ तुम्हारी जानकारी में होगा, तो बाद में अमितजी से पीछा छुड़ाना मेरे लिए आसान होगा, वरना कहीं वह भी जीवन भर के लिए पीछे पड़ गये तो...” स्वाति ने स्पष्ट किया.

नम्रता कुछ पल तक सोचती रही. उसके चेहरे पर तरह-तरह के भाव आ रहे थे. स्वाति ने अधीरता से उसके हाथों को कसकर दबा दिया, “देखो, नम्रता, मना मत करना, वरना मेरे जीवन का सारा आधार ढह जाएगा. मैं कहीं की न रहूंगी.”

“खैर, जब तुमने मुझे सब कुछ बता ही दिया, तो मैं तुम्हारी बात मानकर कुछ दिन के लिए अपने हृदय पर पत्थर रख लेती हूँ, परन्तु स्वाति, तुम स्वयं अमित को पटाओगी. मैं उनसे कुछ नहीं कहूंगी. उन्हें यह बताना भी मत कि मुझे सबकुछ मालूम है. तुम उनसे कहां मिलोगी, यह भी तुम तय करना. मुझे मत बताना.”

स्वाति ने उसका माथा चूम लिया, “नम्रता, मैं जीवन भर तुम्हें सगी बहन की तरह मानूंगी.”

स्वाति के लिए अमित को पटाना बहुत आसान सिद्ध हुआ. नम्रता ने सही कहा था कि वह बहुत दिलफेंक आदमी था. वैसे भी दुनिया का कौन पुरुष किसी स्त्री की सुंदरता को प्राप्त नहीं करना चाहता, उसकी जुल्फों में खोना नहीं चाहता? स्वाति के दो-तीन फोन पर ही अमित उससे मिलने के लिए व्याकुल हो गया. स्वाति स्वयं प्यासी थी, अतः उसने भी सारे बंधन ढीले कर दिए और कटी हुई पतंग की तरह अमित की बाहों में जा गिरी. अमित ने उसे संभाल लिया और उसकी वर्षों की प्यास बुझा दी. परन्तु स्वाति की प्यास बहुत पुरानी थी. वह जंगल की आग की तरह बढ़ती ही जाती थी. लगता था, जैसे कभी नहीं बुझेगी, परन्तु स्वाति को अपनी सीमाओं का ज्ञान था. वह जिस योजना के तहत इस अनैतिक कार्य को अंजाम दे रही थी, वह समय सीमा में बंधा हुआ था. उस कार्य के पूर्ण होने का आभास होते ही उसने अमित से दूरियां बनानी आरंभ कर दी.

अंत में एक दिन उसने अमित को अपनी मज़बूरी बताकर उनसे अपने संबंध तोड़ लिए. अमित समझदार पारिवारिक व्यक्ति ही नहीं; एक जिम्मेदार अधिकारी भी था. उसने स्वाति को आज़ाद कर दिया.

स्वाति के मन में खुशियों ने उड़ान भरना आरंभ कर दिया.

गर्भधारण के बाद स्वाति के आचरण में स्वभाविक परिवर्तन आने लगे थे. गर्भधारण के प्रारंभिक दिनों में स्त्रियों को आलस आता है और वह थकी-थकी सी उदास बैठी रहती हैं. उनका हरदम आराम करने का मन करता है. शरीर में होने वाले परिवर्तन को लेकर वह उलझन में रहती हैं, इससे उनका मन बेचैन हो जाता है. बात-बात पर चिड़चिड़ाने लगती हैं. यही हाल स्वाति का था. जब सासू मां ने स्वाति की यह दशा देखी, तो उनका मन-मयूर नाच उठा. जो स्वाति अभी तक उनकी आंखों में खटक रही थी, दुश्मन से बढ़कर नज़र आती थी. उसका परित्याग करने के मन ही मन मंसूवे बांध रही थीं, वही अचानक उनकी आंखों का तारा बन गयी. वह उनके लिए खुशियों का खज़ाना लेकर जो आई थी.

स्वाति की बलैयां लेते हुए सासूजी ने कहा, “नज़र न लगे मेरी बेटी को. कितने दिन बाद तू खुशियां लेकर आई है. दिन गिनते-गिनते मेरी आंखें पथरा गयीं. उंगलियां पत्थर जैसी हो गयीं. पर चलो, देर से ही सही, तूने मेरी मुराद पूरी कर दी.” खुशी के अतिरेक में वह देर तक स्वाति को गले लगाकर उसके सिर को सहलाती रहीं.

शाम को उन्होंने पीयूष से कहा, “तुझे कुछ पता भी है, बहू पेट से है. उसके लिए अच्छी-अच्छी खाने-पीने की चीज़ें लेकर आ...मेवा-फल आदि. उसे इस वक़्त पौष्टिक खाने की सख़्त ज़रूरत है. तभी तो बच्चा हस्ट-पुस्ट और गोरा-चिट्ठा पैदा होगा.”

पीयूष चौंका, “ऐं...” उसे सचमुच पता नहीं था. काफी दिनों से स्वाति और उसके बीच अबोला चल रहा था. स्वाति का मन उससे बात करने का नहीं करता था, क्योंकि पीयूष उसकी बातों से चिढ़ने लगा था. वह भी अपनी तरफ़ से बात करने का प्रयत्न नहीं करता था.

मां ने पीयूष के चेहरे के भावों को नहीं पढ़ा. वह स्वयं में इतनी मगन थी कि अपनी खुशी के आगे उन्हें कुछ सुझाई नहीं दे रहा था. पीयूष हक्का-बक्का खड़ा था. उसके दिमाग की नसें तनती जा रही थीं. उसे लग रहा था, उसके दिमाग में कोई धमाका होने वाला था, परन्तु नहीं हुआ. धमाका हो जाता तो वह स्वयं उसमें जल-भुन जाता. उसका अस्तित्व बिखर जाता. उसने बड़ी मुश्किल से अपने मन को शांत किया. वह किसी को अपने मन की बात नहीं बता सकता था. कैसे बताता कि स्वाति के पेट में उसका बच्चा नहीं था? उसे यह दंश झेलना ही पड़ेगा. इतना

विष तो शंकर भगवान ने भी नहीं पिया होगा. अगर वह अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा और मान-मर्यादा को सुरक्षित रखना चाहता है तो उसे शंकर भगवान की तरह नीलकण्ठ बनना होगा. एक परिवार को बचाने और सुखी रखने के लिए यह अति आवश्यक था. वह अपनी मां की खुशियों को आग के हवाले नहीं कर सकता था. पिताजी नहीं थे. मां ही उसकी सबकुछ थीं. जब तक जिंदा हैं, उनकी खुशियों के लिए उसे भी खुश होने का दिखावा करना पड़ेगा.

सासूजी रात-दिन स्वाति की सेवा में लगी रहतीं. उसकी हर चीज़ का ख़्याल करतीं, उसे कोई काम न करने देतीं; परंतु स्वाति जानती थी कि गर्भवती स्त्री के लिए कुछ-न-कुछ काम करते रहना अति आवश्यक था; वरना बच्चे के जन्म के समय स्त्री को बहुत कष्ट झेलना पड़ता है. बच्चे के स्वास्थ्य के लिए भी उसका काम करते रहना आवश्यक था.

पीयूष उससे उखड़ा-उखड़ा रहता, बात न करता. व्यवहार में इतना रूखापन था कि कई बार स्वाति का मन करता कि उसकी पोल खोल दे; परंतु परिवार की प्रतिष्ठा और मर्यादा का ख़्याल कर चुप रह जाती.

अपनी मां के सामने वह अवश्य स्वाति का ख़्याल रखने का दिखावा करता, तब स्वाति मन ही मन मुस्कराती रहती.

यह कैसी विडम्बना थी कि जब तक स्वाति ने मर्यादा के अंदर रहते हुए अपने पति और सासू के लिए खुशियां बटोरनी चाहीं, तो उसे दुःखों के कतरों के सिवा कुछ न मिला; परंतु जब मर्यादा का उलंघन किया, सामाजिक मूल्यों को तोड़ दिया और एक अनैतिक कार्य को अंजाम दिया, तो सासू मां की झोली में खुशियों का अंबार लग गया. वह स्वयं तानों, उलाहनों और लांछनों की दुनिया से पलक झपकते बाहर आ गयी.

पति को उसने मानसिक पीड़ा दी, परंतु यह एक व्यक्तिगत पीड़ा थी. विस्तृत परिप्रेक्ष्य में दूसरों की खुशियों को देखते हुए पति की पीड़ा गौण हो जाती है.

नियत समय आने पर स्वाति को एक प्राइवेट नर्सिंग होम में भर्ती करवाया गया. उसके मम्मी-पापा और छोटी बहन भी आई थी. सारे दिन नर्सिंग होम के कमरे में लोगों का जमावड़ा लगा रहा. लोगों के खुशी से दीप्त चेहरों को देखकर स्वाति के मन में परम शान्ति और सुख का अनुभव हो रहा था. आत्मग्लानि से वह बहुत दूर हो चुकी थी. इतने सारे लोगों को खुशी देकर उसे नहीं लगता था कि उसने कोई ग़लत कार्य किया था. कई बार हम स्थापित मूल्यों को तोड़कर तथा

सामाजिक मर्यादा का उलंघन करके लोगों को खुशियां प्रदान करते हैं, तो यह अपराध क्षम्य हो जाता है.

अगले दिन सुबह स्वाति को प्रसव पीड़ा हुई. उसे ऑपरेशन थियेटर ले जाया गया. डॉक्टरों के आब्जर्वेशन में उसे रखा गया. डॉक्टर चाहते थे बच्चा सामान्य ढंग से जन्म ले, परंतु तीव्र प्रसव पीड़ा के बावजूद स्वाति को बच्चा नहीं हो रहा था. डॉक्टर पल-पल मॉनीटर द्वारा पेट में बच्चों की हरकतों पर नज़र रखे हुए थे. शाम तक बच्चा पेट में हिला भी नहीं. यह एक ख़तरनाक संकेत था. डर था कि बच्चे की नाल उसके गले में न लिपट जाए. इससे बच्चे के मुंह में मल जाने का ख़तरा था. शाम छः बजे डॉक्टरों ने तय किया कि ऑपरेशन द्वारा बच्चे को निकालना पड़ेगा. इसके लिए खून की आवश्यकता पड़ सकती है. मां के दबाव में पीयूष ने अपने कुछ दोस्तों को खून देने के लिए बुला लिया था.

सबके चेहरे आशंकित थे और हृदय की धड़कन असामान्य रूप से तेज़ थी. मन ही मन सभी ईश्वर से प्रार्थना कर रहे थे कि सब कुछ सही ढंग से निपट जाए.

शाम को सात बजकर पंद्रह मिनट पर स्वाति ने ऑपरेशन द्वारा एक बच्ची को जन्म दिया. नर्स नवजात शिशु को तौलिये में लपेटकर लाई और दादी के हाथों में रखकर बोलीं, “मुबारक हो, लक्ष्मी आई है घर में.” सुनकर सासू जी का हृदय धक् से रह गया. चेहरे पर स्याही पुत गयी. वह बच्ची की तरफ़ नहीं, नर्स की तरफ़ अविश्वास भरी नज़रों से देख रही थीं, जैसे उसने बच्चा बदल दिया हो.

नर्स बोली, “क्या दादी मां, आप मेरा मुंह क्यों ताक रही हैं. बच्ची का मुंह देखकर शगुन दीजिए. पूरे पांच हजार रुपये लूंगी.”

स्वाति की मम्मी आगे बढ़कर बोलीं, “जच्चा तो ठीक है?”

“हां, थोड़ी कमज़ोर है. खून की ज़रूरत नहीं पड़ी. कुछ देर तक ऑब्जर्वेशन में रखना पड़ेगा.” नर्स ने कहा तो सबने राहत की सांस ली.

दूसरी नर्स ने पीयूष की मम्मी से कहा, “दादीजी, किस सोच-विचार में पड़ गयीं. शगुन दीजिए.”

पहली नर्स ने तुरूप का पत्ता चला, “दादी मां सोच रही होंगी, यह लड़की कहां से पैदा हो गयी. इनको पोते की चाहत रही होगी.”

दूसरी नर्स ने कहा, “दादी मां, आप एक औरत हैं, फिर भी समाज और परिवार के लिए लड़की की महत्ता नहीं समझती. इतना जान लीजिए, लड़कों से ज़्यादा खुशियां एक लड़की परिवार के लिए लेकर आती है. जब बेटियां घर में रहकर

मां-बाप की सेवा करती हैं, तब लड़के बाहर जाकर मटरगस्ती करते हैं. आपको तो खुश होना चाहिए कि एक बेटी लक्ष्मी बनकर घर में आई है.” दादी मां संकोच में डूबी खड़ी रहीं. तभी स्वाति की मम्मी ने अपने पति को इशारा किया. उन्होंने पर्स से निकालकर पांच हजार रुपये नर्स के हाथों में थमा दिए. नर्सें बधाइयां देती बच्चे को लेकर चली गयीं.

तीसरे दिन जच्चा-बच्चा घर आ गए. स्वाति के मम्मी-पापा और बहन भी साथ ही आए थे. वह छठीं तक स्वाति के साथ रहना चाहते थे. सभी चाहते थे बच्ची की छठीं धूमधाम से मनाई जाए. इन तीन दिनों में पीयूष की मम्मी का मन भी बच्ची की तरफ से साफ हो गया था. नर्सों की बातें उनके हृदय को छू गयी थीं. सच ही तो कह रही थीं—जब बेटियां घर में रहकर मां-बाप की सेवा करती हैं, तब लड़के बाहर जाकर मटरगस्ती करते हैं. उन्होंने खुशी मन से छठीं मनाने की स्वीकृति दे दी; परंतु पीयूष ने साफ मना कर दिया कि वह कोई ज़ंशन नहीं मनाएगा. सभी के मुंह लटक गए. कारण पूछा, तो बिना कुछ बोले बाहर चला गया.

उसके बाहर जाने के बाद मम्मी ने कहा, “उसके मानने न मानने से क्या होता है. मेरे घर में पोती हुई है, तो ज़ंशन मैं मनाऊंगी. समधीजी आप सारी तैयारियां करवाएं.”

रात को पीयूष काफ़ी देर से घर लौटकर आया. सभी लोग उसका इंतज़ार कर रहे थे. खाना वह बाहर से खाकर आया था. उसने किसी से बात नहीं की. सबने खाने के लिए पूछा तो मना कर दिया और चुपचाप ड्राइंग हॉल में जाकर बैठ गया. सभी लोगों को उसके इस प्रकार के व्यवहार पर आश्चर्य हो रहा था; परंतु ऐसा वह क्यों कर रहा था, किसी को पता नहीं था. वह किसी को कुछ बता भी नहीं रहा था.

उसके मन की बात केवल स्वाति जानती थी.

सभी लोग अपने-अपने कमरे में चले गये, तो स्वाति बच्ची को सुलाकर ड्राइंगरूम में आई. पीयूष एक सोफे में आंखें बंद करके लेटा था. वह सोया नहीं था. विचारों के झोंके उसे सोने नहीं दे रहे थे. स्वाति उसके पैताने बैठ गई और बोली, “मैं जानती हूं आप दुःखी हैं और मुझसे नाराज़ भी हैं; परंतु आप बताइए, इसके अलावा मेरे पास चारा क्या था?” आज उसने अपनी चुप्पी तोड़ दी थी. काफ़ी दिनों बाद वह पीयूष से बोली थी.

पीयूष थोड़ा कसमसाया, परंतु बोला कुछ नहीं. स्वाति ने आगे कहा, “आप बताइए, अगर मैं ऐसा न करती, तो क्या ज़िंदगी भर लांछनों के दाग लेकर घुट-घुटकर जीती. मां जी के ताने आपने नहीं सुने? मैं बांझ नहीं कहलाना चाहती

थी, और अगर आपसे तलाक़ लेती तो आपकी बदनामी होती. मुझे स्पष्ट कारण बताना पड़ता. तब बताइए, क्या आप इस समाज में एक प्रतिष्ठित जीवन जी पाते. आप कौन सा मुंह दुनिया को दिखाते और क्या मां जी पोता-पोती का मुंह देखे बिना ही इस संसार से विदा न हो जाती.”

पीयूष ने हल्के से सरककर अपना सिर सोफे के पुट्टे पर रख लिया. आंखें चौड़ी करके स्वाति को देखा. वह गंभीर थी, परंतु उसकी आंखों में एक अनोखी चमक थी.

वह कहती गयी—“आप देख रहे हैं, मेरे एक अमर्यादित कदम से कितने लोगों के हृदय में खुशियों का सागर लहरा रहा है. सभी के चेहरों पर रौनक आ गयी है. मां जी की खुशियों का आप अंदाज़ भी नहीं लगा सकते हैं. उनके मन में हम दोनों के लिए केवल दुआ और आशीर्वाद के फूल बरस रहे हैं.”

पीयूष ने अचानक तड़पकर कहा, “परंतु एक बच्चे के लिए तुमने अपनी इज़्ज़त क्यों दांव पर लगाई? क्या हम निःसंतान रहकर जीवन नहीं गुजार सकते थे.”

“कर सकते थे, परंतु तब मैं जीवन भर अपने माथे पर बांझ होने का कलंक लेकर जीती. उसे मिटा नहीं सकती थी. सासूजी जब तक जीतीं, उनके ताने झेलती. दुनिया भर की शक्की निगाहों के वार झेलती. आपको नहीं पता, वह तो मुझे तलाक़ दिलवाकर आपकी दूसरी शादी तक करने की बात भी सोच रही थीं. क्या आप उनकी खुशी के लिए दूसरी लड़की की ज़िन्दगी बरबाद करते? आप शान्त मन से सोचिए, यह बात केवल हम दोनों को मालूम है. इस बच्ची को आप एक बार अपना मानकर देखिए, फिर उसके पालने-पोसने में जो खुशी आपको प्राप्त होगी, वह किसी और चीज़ में नहीं प्राप्त हो सकती?”

“परंतु यह बच्ची मेरी नहीं है. इसमें मेरा खून कहां है?” उसने चिड़चिड़ाते हुए तर्क दिया.

“इसे दत्तक पुत्री समझकर ही अपनी मान लीजिए. इस बच्ची के शरीर में कम से कम मेरा खून तो है.”

“परंतु मैं अपने मन को कैसे समझाऊं?” पीयूष ने हताश स्वर में हथियार डालते हुए कहा. कोई भी तर्क उसके काम नहीं आ रहा. उसके सारे अस्त्र स्वाति के शस्त्रों के सामने पराजित होकर टूटते जा रहे थे. उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था.

स्वाति ने आगे सरककर उसके सीने पर हाथ रखते हुए कहा—

“आपको दुःखी होने की आवश्यकता नहीं है. आप अपने मन को समझा सकते हैं. मनुष्य के जीवन में जितने सुख-दुःख आते हैं, उनमें मन की सोच का काफ़ी बड़ा हाथ होता है. हम अपनी सोच से सुखी या दुःखी होते हैं, न कि कर्मों से...जिस प्रकार आप अपनी पुंसत्वहीनता के साथ समाज में एक प्रतिष्ठित जीवन व्यतीत कर रहे हैं; उसी प्रकार इस कटु सच्चाई के साथ भी जीवन गुजार सकते हैं कि यह बेटी आपकी नहीं है. दोनों ही बातों के बारे में किसी को पता नहीं है और अगर हम दोनों चाहेंगे तो किसी को पता भी नहीं चलेगा. इसे दत्तक मान लीजिए. हमारा जीवन खुशियों की डगर पर आगे बढ़ता रहेगा. एक बात जान लीजिए, हर मनुष्य जीवन में अपनी खुशियों के लिए कोई न कोई ग़लत कार्य करता है, फिर भी उसे पछतावा नहीं होता. हमारे अपराध से परोक्ष या अपरोक्ष रूप से अगर किसी को शारीरिक और मानसिक कष्ट नहीं होता, तो इसे अपराध नहीं कहा जा सकता है.”

पीयूष ने तर्क दिया, “परंतु मुझे मानसिक कष्ट हुआ है.”

“सच है, परंतु आपका मानसिक कष्ट मेरे कष्ट से बढ़कर नहीं है. अपनी कमजोरी के बारे में जानते हुए भी आपने मेरे साथ शादी की और मुझे तानों, उलाहनों और लांछनों की आग में जलने के लिए छोड़ दिया. आपके अपराध को देखते हुए यह सज़ा बहुत कम है. इस सज़ा को आप अपनी सापेक्ष सोच से खुशियों में बदल सकते हैं. याद कीजिए, संसार को बचाने के लिए शंकर भगवान ने विषपान किया था और नीलकण्ठ कहलाए. आप भी नीलकण्ठ बनकर दिखा दीजिए और परिवार की खुशियों के लिए इस पीड़ा का पान कर लीजिए.”

पीयूष की सोच कुछ-कुछ बदलने लगी थी. स्वाति की नरम उंगलियां अब पीयूष के गालों को हौले-हौले सहला रही थी. वह आंखें बंद करके बोली, “मैं आपको विश्वास दिलाती हूं कि अब मेरे कदम कभी नहीं डगमगाएंगे. आपकी उपेक्षा और मां जी के तानों से ऊबकर ही मैंने बहुत कड़े मन से यह कदम उठाया था. अगर मैं ऐसा न करती तो आपकी कमजोरी सभी को पता चल जाती या मैं जीवन भर बांझ औरत की लांछना लेकर जीने को मजबूर हो जाती. आपकी इज्जत बची रहे और मेरे ऊपर लगे सारे लांछन मिट जाएं, इसलिए मुझे पर पुरुष की बांहों का सहारा लेना पड़ा.” कहते-कहते स्वाति का स्वर भावुक हो गया. पीयूष ने अपने गालों पर उसकी उंगलियों को थाम लिया.

स्वाति की आंखें खुल गयीं. पीयूष उसे चाहत भरी नज़रों से ताक रहा था, जैसे चातक चांद को ताकता है. स्वाति नक्षत्र को पानी की बूंदें प्राप्त हो गयी थीं.

नवजात शिशु की छटीं बहुत धूमधाम से शहर के एक तीन सितारा होटल के बैन्क्वेट हॉल में मनाई गयी. हॉल के गेट पर खड़ा पीयूष हंसता-मुस्कराता अतिथियों का स्वागत कर रहा था और उनकी बधाइयां स्वीकार कर रहा था. वह स्वयं सभी अतिथियों को ले जाकर उन्हें उचित स्थान पर बिठा रहा था. जो लोग खाना खा रहे थे, उनके पास जा-जाकर कुछ और लेने की विनती कर रहा था.

औरतों से घिरी बैठी स्वाति प्रसन्न मुद्रा में अभिभूत निगाहों से अपने पति को अतिथियों का स्वागत करते हुए देख रही थी. उसका मन पुलक रहा था.

आज से ज्यादा खुशियां उसे कभी नहीं मिली थीं.



फूलमती

फूलमती के सामने उसकी बड़ी बेटी कुसुम का खून से लथपथ शरीर तड़प रहा था. साफ़ दिख रहा था कि उसके साथ कुकर्म हुआ था. उसकी कुर्ती ऊपर से खुली थी, और सलवार नीचे सरकी हुई थी. कुसुम अर्द्धवेहोशी की हालत में थी और उसे इतना होश नहीं था कि अपने कपड़े ठीक कर सकती या जननांगों से बहते खून को रोकने का कोई यत्न करती.

फूलमती अभी-अभी गांव का चक्कर लगाकर आई थी. सारा दिन यही करती थी वह. घर में उसका पैर नहीं टिकता था. आज दोपहर को जब वह लौटकर आई तो घर की एकमात्र कोठरी के दरवाजे पर पहुंचकर उसे किसी अनहोनी का अहसास हुआ. वह टिठक गयी. अन्दर से कराहने की करुण आवाज़ आ रही थी. उसका दिल धड़क उठा. घर में वह अपनी बेटी को छोड़कर गयी थी. बाकी छोटे बच्चे-एक लड़की और दो छोटे लड़के- इधर-उधर डोलते फिर रहे होंगे. उनकी वह ज़्यादा परवाह नहीं करती थी. वह छोटे थे, दस साल से छः वर्ष की उम्र के, परन्तु स्कूल नहीं जाते थे. सारा दिन गांव की गलियों में खेलने-कूदने के अलावा उनके पास कोई काम नहीं था. जब भूख लगती थी, घर वापस आ जाते थे.

धड़कते दिल से वह कोठरी के अन्दर गयी. बाहर से आई थी, एकदम से उसकी आंखें नीम अंधेरे में कुछ देख नहीं पाईं. जब कुछ पल बाद उसकी आंखें अंधेरे में देखने की अभ्यस्त हुईं तो उसने देखा, कुसुम खून से लथपथ एक कोने में ज़मीन पर पड़ी थी. वह अनुभवी औरत थी. पहली नज़र में ही समझ गयी कि उसकी बेटी के साथ दुष्कर्म हुआ था. बेटी की हालत देखकर वह तड़प उठी. उसके सिर को अपने हाथों में लेकर उसे हिलाया, बेटी की चेतना कुछ लौटी. उसकी आंखें थोड़ा खुलीं. मां का चेहरा उसके ऊपर झुका हुआ था. फूलमती ने साफ़ देखा कि बेटी की आंखों में एक अनजाने भय की लहर दौड़ गयी थी.

फूलमती ने उसे झकझोर कर कहा, “किसने किया यह?”

कुसुम का शरीर फिर से कांप गया. उसने मां के हाथों के सहारे उठकर बैठने का प्रयास किया. फूलमती ने उसे सहारा देकर अपनी जांघों में लिटा दिया, फिर जोर से पूछा, “किसने किया?”

“अम्मा...!” कुसुम कराही.

“डर मत, बोल न!” मां ने उसके सिर पर हाथ फेरते हुए आश्वासन दिया. कुसुम चुप रही. फूलमती उसे झकझोर कर पूछती रही. अंत में कुसुम ने हिम्मत करके कहा, “प्रताप ने...?”

“क्या?” फूलमती को विश्वास नहीं हुआ.

“हां, मां,” कुसुम ने जोर देकर बताया.

“क्या जबरदस्ती...?”

“हां, कई दिनों से वह मुझे बहला-फुसला रहा था. डराता भी था. आज मैं डरकर...” फिर वह रोने लगी. फूलमती समझ गई, इस कुकृत्य में भले ही कुसुम ही सहमति थी, परन्तु यह बलात्कार था. वह मात्र चौदह वर्ष की थी. उसे बहला-फुसला कर और डरा-धमका कर सहमति ली गई थी.

फूलमती ने अपना माथा पीट लिया. उसकी आंखों के सामने अंधेरा छाने लगा, परन्तु उस अंधेरे में भी वह साफ़-साफ़ देख रही थी...

वह उसी गांव में पैदा हुई थी, खेती-कूदी और बड़ी हुई. जब बड़ी हुई तो उसने देखा कि उसके मां-बाप गांव के सबसे बड़े ठाकुर के यहां बंधुआ मजदूर की तरह काम करते थे. कहने को देश में आज़ादी आ गई थी, परन्तु उनके जीवन में आज़ादी नहीं आई थी. मजदूर का जीवन बंधुआ समान ही होता है, चाहे किसान के यहां, चाहे किसी मिल मालिक के यहां, उसको आज़ादी कहां से मिलेगी? जीवन में अभावों का डेरा हो तो मनुष्य आज़ादी की सांस नहीं ले सकता.

उसके मां-बाप रात-दिन काम करते थे, फिर भी अभावों से जूझते रहते थे. ठाकुर का कर्ज़ा सदा उनके सिर पर लदा रहता था. ठाकुर उनसे हाड़तोड़ मेहनत करवाते थे, परन्तु मजदूरी देते समय जैसी उनकी सांस निकलती थी. आधी-अधूरी मजदूरी देकर टरकाते रहते थे. ये लोग आधे पेट खाते थे, फिर भी अपने मालिक का गुणगान करते थे. यह लोग कहीं और जा भी नहीं सकते थे. पैसे जोड़ना वह नहीं जानते थे, क्योंकि जो मजदूरी मिलती थी वह खाने के लिए भी कम पड़ती थी.

इसीलिए लड़के-बच्चों की शादी-ब्याह के अवसर पर ठाकुरों से कर्ज़ लेते थे, जिसे जीवन भर उतार पाना उनके बस की बात नहीं होती थी. नतीज़तन, वह उम्र भर के लिए ठाकुर के यहां बंधुआ मजदूर बनकर रह जाते थे.

फूलमती ने बड़े होकर देखा कि उसके खानदान ही नहीं, उसकी जाति-बिरादरी के अन्य घरों में भी भूख जेट की कड़ी धूप की तरह पसरी रहती थी. इसके अलावा जब तब घर की औरतों को ठाकुरों की हवस का शिकार होना पड़ता था. इसमें उनकी इच्छा-अनिच्छा का कोई महत्व नहीं होता था. बहला-फुसला कर या डरा-धमका कर ठाकुर उन्हें अपने काबू में कर लेते थे. न काबू में आतीं तो कहां जातीं. चारों तरफ तो ठाकुरों का राज था, निकलना-पैटना उन्हीं के खेत-खलिहानों से होता था. फूलमती के घरवाले ही नहीं, उसकी बिरादरी और खानदान के सभी लोग इसी तरह से ठाकुरों के लगबंधू मजदूर थे और औरतें ठाकुरों के रखैलें, बिना किसी अनुबंध के. सबसे बड़ा दुर्भाग्य तो ये था कि अपने शरीर के शोषण के बदले उन्हें धेला भी नहीं मिलता था, न काम में कोई रियायत दी जाती थी. मजदूरी में एक पैसे का इज़ाफ़ा करना ठाकुरों के लिए हराम था. हां, काम के बदले में मजदूरी न देना ठाकुरों का धर्म था और गरीब मजदूरों की बहू-बेटियों को अपनी हवश का शिकार बनाना उनका खानदानी शौक के साथ-साथ अधिकार भी!

वह एक ऐसी दुनिया थी, जहां सूरज-चांद उगते थे, परन्तु उनका उजाला केवल बड़े घरों में ही पांव पसारता था. कच्ची-टूटी कोठरियों के दरवाजे उन्हें दिखाई नहीं पड़ते. उनके आंगन में हमेशा काली घटाएं छाई रहतीं. इन काली परछाइयों के नीचे गरीबों की बेटियां जवानी के पहले ही औरतें बन जातीं, बहुएं व्यभिचार के ऐसे दलदल में धकेल दी जाती थीं कि वह चाहकर भी उससे नहीं निकल सकती थीं. उनके घर के मर्दों की आंखों से सब दिखता था. बांहों में बैलों की तरह ताक़त थी, परन्तु पैसे की ताक़त के आगे उनके सारे हौसले पस्त थे. वह डरे-सहमें अत्याचार और शोषण की अंधेरी गलियों में घुट-घुटकर जीने के लिए मजबूर थे.

फूलमती ने जवानी की तरफ़ क़दम बढ़ाये तो गांव के कई जवान मर्दों ने भी उसकी तरफ़ बांहें पसार दीं. शिकारी कई थे, शिकार एक. सबसे ताक़तवर शिकार प्रताप सिंह था, जो उससे दुगुनी उमर का था, परन्तु वह उसके परिवार का पालनहार था. वह गांव का सबसे बड़ा किसान था, और एक चौथाई गांव के लोग उसी के खेतों में काम करके गुजारा करते थे. फूलमती का बाप, मां और भाई सभी उसी के खेतों में काम करते थे. वह भी मां के साथ काम पर जाती थी. सबसे पहले

प्रताप ने उसकी चढ़ती जवानी को ताड़ लिया और जल्दी ही बाज़ के मजबूत पंजों ने एक मासूम चिड़िया को दबोच लिया.

फूलमती ने शिकारी की फ़ितरत पहचान ली तो उसने भी नए-नए शिकारियों के जाल की तरफ़ दौड़ना आरंभ कर दिया. प्रताप सिंह उससे उम्र में बड़ा था ही, साथ ही वह उसकी मां को अपने जाल में फंसाये हुए था. तो फूलमती ने अपने लिए जवान शिकारी चुन लिये. ऐसे शिकारियों की गांव में कोई कमी नहीं थी. फूलमती ऐसा फूल बन गयी थी, जिस पर तरह-तरह के भंवरे मड़राते रहते थे, परन्तु उसका पराग खत्म नहीं होता था.

फूलमती चाहे इधर-उधर अपना पराग लुटा रही थी, परन्तु दिखावे में वह प्रताप के प्रति निष्ठावान थी, क्योंकि वह उसके अन्नदाता थे. प्रताप सिंह ने दुनिया देखी थी. वह औरतों की फ़ितरत जानते थे, फूलमती की भी...तभी तो एक दिन बोले, “फूलमती, तू तो बड़ी सयानी हो गई है.”

“क्यों ठाकुर.”

“बहुत तेज़ उड़ने लगी है, न जाने कहां-कहां चली जाती है.” प्रताप के स्वर में व्यंग्य था.

“नहीं तो ठाकुर! आपको छोड़कर कहां जाऊंगी.” फूलमती ने शरमाने का अभिनय किया.

“अच्छा, इस गांव के सारे मरद मर गए हैं या ब्रह्मचारी हो गए हैं?” ठाकुर साहब का व्यंग्य कुछ ज़्यादा तीखा हो गया.

फूलमती हंसकर रह गयी.

“ठीक है, तू कौन मेरी ब्याहता है. तेरा शरीर है, जिसको मर्जी हो, लुटा. तू चाहे भी तो उसको बचा नहीं सकती. परन्तु एक बात ध्यान से सुन, अगर मैंने किसी दिन तुझे किसी के साथ देख लिया, तो तेरी खैर नहीं. खाल उधेड़ दूंगा.”

फूलमती अन्दर ही अन्दर डर गयी. सचमुच वह कर सकता था. उस दिन के बाद वह कुछ दिन तक संभलकर चली. फिर धीरे-धीरे उसके मन से डर दूर हो गया. प्रताप सिंह कौन उसका ब्याहता पति था, जो उससे डरकर रहे. क्यों उसका हुकुम माने? उसके ऊपर कौन सी जागीर लुटाता है, जो उसके कहे पर चले. रोज उसका शरीर लूटता है, और झाड़-पोंछकर चल देता है. यह भी कभी नहीं पूछता कि उसकी कोई दूसरी ज़रूरत भी है. तीज-त्योहार कोई साड़ी नहीं देता, मेले-ठेले के लिए एक पैसा तक नहीं देता. फिर वह उसकी क्यों सुने? वह फिर से पुराने ढर्रे पर आ गयी, परन्तु इतना ध्यान रखती कि प्रताप सिंह को पता न चलने पाये.

फूलमती की जब शादी हुई तो उसे कोई खास चिन्ता नहीं हुई. यह तो बहुत सामान्य-सी बात थी. सभी लड़कियों के जीवन में ऐसा होता है. उसके चाहनेवालों के बीच भी कोई खास हलचल नहीं हुई. जंगल में तितलियां आती-जाती रहती हैं. थोड़ी-सी मायूसी होती है, फिर जीवन अपने ढर्रे पर चलने लगता है. परन्तु फूलमती के विवाहित जीवन में सबकुछ बिल्कुल सामान्य नहीं था. वह जिस गांव में ब्याह कर गई थी, वहां तो उसके गांव से भी ज्यादा गरीबी थी. ऊसर-बंजर के बीच बसा गांव था. ज़मीन नीची थी, जहां बरसात में पानी भर जाता था. इसलिए साल में केवल धान की फसल होती थी. फूलमती ने अपने मां-बाप को कोसा, अपने नसीब का रोना रोया और फिर एक दिन भागकर मायके आ गयी.

कुछ दिन बात पति विदा कराने आया तो उसने हनक भरे स्वर में कहा, “वहां क्या रेत खाने के लिए जाऊं?”

पति बेचारा भौचक्का रह गया. फूलमती के मां-बाप उसकी ससुराल की हालत जानते थे, अतः चुप रहे.

फूलमती ने ठसक के साथ कहा, “वहां रात-दिन खटते रहते हो, फिर भी घर की हालत नहीं सुधरती. यहां आकर रहो. यहां काम ज्यादा है. मजूरी के अलावा खेत-खलिहान से कुछ-न-कुछ मिल ही जाता है. भूखे नहीं मरना पड़ता. वहां सारी उमर धान फांकते रहोगे.”

“ससुराल में! लोग क्या कहेंगे?” बुद्धिलाल की पहली बार जुबान खुली.

“क्यों? मजदूर आदमी के लिए क्या ससुराल, क्या आन गांव? जहां काम मिलेगा, वहीं रहेंगे.” फूलमती ने अपनी बात पर जोर देते हुए कहा. दरअसल ससुराल की गरीबी तो एक बहाना था. वह एक तीर से दो शिकार करना चाहती थी. वह ससुराल में रहना नहीं चाहती थी और पति को अपने मायके में बसाकर वह अपनी पुरानी आज़ादी बरकरार रखना चाहती थी. पति की आड़ रहेगी तो उसके सम्बन्धों की राह में कोई रोड़ा नहीं रहेगा. स्त्री को पति की आड़ होती है तो उस पर ज्यादा उंगली नहीं उठती.

उसने अपने रूप-लावण्य और मीठी-मीठी बातों से पति को बहुत जल्दी मना लिया. बुद्धिलाल के पास भी खोने के लिए क्या था? घर के सिवा उसके पास था ही क्या, मां-बाप और छोटा भाई. उसने घर-बार और मां-बाप की जिम्मेदारी छोटे भाई के ऊपर डाली और एक दिन ससुराल में आकर रहने लगा.

प्रताप सिंह की कृपा से गांव-समाज की ज़मीन का एक टुकड़ा फूलमती को मिल गया, जिस पर एक छप्पर डालकर मियां-बीवी रहने लगे. बाद में एक कच्ची

कोठरी डाल दी. प्रताप सिंह की इस कृपा का फल फूलमती ने उसको इस तरह दिया कि अब वह केवल उसी की होकर रह गयी. गांव के अन्य लड़कों से उसने सम्बन्ध तोड़ लिए थे. पकड़े जाने का डर था, क्योंकि पति के साथ रहती थी. प्रताप सिंह के साथ ऐसी बात नहीं थी. उसके खेत-खलिहान और घर में वह काम करने जाती ही थी. उसके साथ वह सुरक्षित थी.

शादी के एक साल बाद जब फूलमती ने अपनी पहली बेटी को जन्म दिया तो उसका दूध जैसा सफेद रंग देखकर गांव की महिलाओं की आंखें हैरत से खुली रह गयीं. मुंह से आह निकल गयी. सांसें खींचकर सभी ने एकमत से कहा, “किसी ठाकुर का खून पैदा किया है.” खुद फूलमती गेहुएं रंग की थी और उसका पति आबनूस की तरह काला. दोनों की संतान इतनी गोरी और सुन्दर नहीं हो सकती थी. सभी जानती थीं, परन्तु खुलकर नाम लेने की हिम्मत किसी में नहीं थी. फूलमती भी जानती थी कि वह प्रताप की बेटी थी.

और उसी बेटी को, नाबालिग बेटी को, उसके बाप ने ही आज लड़की से औरत बना दिया था. क्या प्रताप नहीं जानता था यह बात. जानता था, फूलमती ने कितनी ही बार उसको बताया था कि कुसुम उसी के खून का अंश थी. उसे विश्वास भी था, परन्तु हवश के मारे नरपिशाच को अपनी बेटी का शीलभंग करते समय तनिक भी शर्म और झिझक नहीं आई. कुसुम को चीखते-तड़पते देखकर भी उसका हृदय नहीं पसीजा? उसको बिलकुल दया नहीं कि वह वह कितना बड़ा पाप कर रहा था? परन्तु हवश के आगे सारे नाते-रिश्ते, मर्यादा और नैतिकता के मापदण्ड बेमानी हो जाते हैं. प्रताप जैसे राक्षसों के लिए रिश्तों की मर्यादा का कोई अर्थ नहीं होता. वह दरिंदे होते हैं. उनकी आंखें के सामने नारी केवल एक देह होती है, भोग्या. इसके सिवा कुछ और नहीं.

फूलमती को अपनी बेबसी और मजबूरी का पता था. वह बेटी के साथ हुए दुष्कर्म की रपट न तो थाने में लिखा सकती थी, न उसे अस्पताल ले जाकर इलाज करवा सकती थी. अभी तक उसका पति बुद्धिलाल काम से नहीं लौटा था, बच्चे भी पता नहीं कहां मर रहे थे.

उसने पहले अपने को व्यवस्थित किया. कुछ सोचने-समझने लायक हुई तो तत्परता से कुसुम के बदन का खून साफ़ किया. उसके कपड़े बदले और फिर उसे चारपाई पर लिटा दिया. ज़मीन को लीप-पोतकर सही किया और गहरी सांस लेकर बेटी के पास बैठ गयी. कुसुम अभी तक दर्द से कराह रही थी. फूलमती ने ढूंढ़ा

तो घर में एक शीशी में महुआ की कच्ची दारू मिल गयी. वक्त ज़रूरत के लिए बचाकर रखती थी. उसका पति कभी-कभार लेता था. उसी में बचाकर रख लेती थी. उसने जल्दी से एक गिलास में थोड़ी सी दारू डालकर जबरदस्ती कुसुम को पिला दिया. नशे में वह अपना दर्द भूलकर सो जाएगी. गांवों में इसी तरह के देसी इलाजों से शरीर दर्द कम किया जाता था. मन का दर्द उन्हें पता ही नहीं चलता था, क्योंकि जीवन की अच्छाइयों और बुराइयों के झंझट में वह अपना दिमाग नहीं खपाते थे.

प्रताप सिंह को अपने किए का कोई पछतावा नहीं था. वह दूसरे दिन ही फूलमती की झोंपड़ी में आया और बेशर्मी से हंसता हुआ बोला, “घर में सब ठीक है न फूलमती.”

“आपके रहते कोई हमारा बुरा कर सकता है क्या? आप कहां कम पड़ते हो?” फूलमती ने तलखी से कहा, परन्तु उसकी तलखी में मिमियाहट ज़्यादा थी, कठोरता कम.

प्रताप ने सौ रुपये का नोट फूलमती को जबरदस्ती पकड़ाते हुए कहा, “ये लो, दवा-दारू करवा लेना. ऐसा हो जाता है.”

हां, ऐसा हो जाता है, फूलमती ने सोचा. लेकिन अपनी सगी बेटी के साथ ऐसा कभी नहीं होता, कोई भी ऐसा नहीं करता. बस, प्रताप जैसा वहशी दरिन्दा ही कर सकता है. और ऐसा करने के बाद भी उसे कोई पश्चाताप, पछतावा और ग्लानि नहीं होती. कितनी बेशर्मी से एक अबोध और कुंवारी लड़की की अस्मत् सौ रुपये में खरीद रहा है. सौ रुपये भी उसके लिए बहुत ज़्यादा हैं. बस चलता तो ये भी न देता. पता नहीं क्या सोचकर दे रहा था. न देता तो कोई उसका क्या बिगाड़ लेता. सारे गांव की ग़रीब लड़कियों और औरतों की इज़्ज़त तो ठाकुरों के यहां गिरवी रखी ही है.

इस घटना के बाद फूलमती में बहुत से परिवर्तन आए. वह घर से कम निकलती. कुसुम को अपनी निगाहों के सामने रखती. खेत जाती तो अपने साथ ले जाती. अकेले न छोड़ती. प्रताप उसके घर के चक्कर लगाता रहता था. बाहर भी उसे घेर लेता, परन्तु फूलमती उसे कोई मौका न देती कि वह कुसुम पर हाथ डाल सके. उसने बेटी को सतर्क कर दिया था. दुनिया की ऊंच-नीच से उसे अवगत कराया था. जिस रास्ते पर वह अभी तक चल रही थी, उस रास्ते पर न चलने की उसे सलाह दे रही थी. जो उसने खुद किया था, उससे अपनी बेटी को बचा रही थी. ऐसा करते हुए वह एक औरत नहीं थी, मां बन गयी थी.

प्रताप सिंह फूलमती की होशियारी ताड़ गया था, तभी तो एक दिन रास्ते में रोककर बोला, “फूलमती, लगता है, तुम्हारे पंख निकल आए हैं.”

“क्या कह रहे हैं मालिक? हमारी क्या औकात, जो आपसे उड़ें?”

“तो फिर इतना बचती क्यों फिर रही हो. सती-सावित्री की तरह बेटी को बचा रही हो. कहां तक बचकर रहोगी. इस गांव के बारे में तुम नहीं जानती कि मैं नहीं जानता. बकरे की मां कब तक खैर मनाएगी.” ठाकुर के स्वर में गुस्सा साफ़ झलक रहा था.

“इस गांव में हम छिपकर कैसे रह सकते हैं. असल में बेटी बहुत ज़्यादा डर गयी है.” उसने बहाना बनाया.

“तो तू उसे समझा. यह तो लड़कियों की नियति है. डरी है, तो क्या भागकर बच जाएगी. उसे इसी गांव में रहना है, तो यहां का चलन भी मानना होगा.”

“भागकर कहां जायेंगे, परन्तु ठाकुर आप तो उसे बख्श दो. वह आपका ही खून है. पोती के बराबर है. तुम्हारा बेटा मेरी उमर का है. वह भी आजकल कुछ ज़्यादा ही चक्कर काटने लगा है.” फूलमती कहने को तो यह सब कह गयी, परन्तु मन ही मन डर भी लगा कि कहीं ठाकुर बुरा न मान जाय. प्रताप सिंह को उसकी बात बुरी लगी भी. तैश में बोला, “फूलमती, तू यह खून के रिश्ते अपने घरवालों के साथ जोड़ना. तू न हमारी जाति की है, न घर की. वह तेरे पेट से पैदा हुई है, सो तेरी बेटी है. और रही बात शंकर की, तो उससे साफ़-साफ़ कह दो कि तुम्हारे घर के चक्कर लगाना छोड़ दे. कुसुम मेरी है, मेरी ही रहेगी.”

“ठाकुर मैं उसे कैसे मना कर सकती हूं. मेरा उसके ऊपर क्या अधिकार है. वह आपका बेटा है, आप ही मना करो. बाप-बेटे के बीच आने वाली मैं कौन होती हूं.”

“ठीक है, मैं ही कोई रास्ता निकालता हूं.” कहकर ठाकुर चला गया.

कुसुम की खुशबू ऐसी थी, जो पूरे गांव में बिना हवा के फैल रही थी. शंकर ही नहीं गांव के अन्य युवा भी फूलमती के घर के चक्कर काटने लगे थे. फूलमती एक मां थी. उसने अपने जीवन में भले ही कितने दुष्कर्म और पाप किये थे, परन्तु कोई भी मां जान-बूझकर अपनी बेटी के साथ वैसा नहीं होने देना चाहती. मजबूरी की बात अलग थी. फूलमती जानती थी, इस गांव में वह मजबूर और बेबस थी. चाहकर भी वह कुसुम की इज़्ज़त नहीं बचा सकती थी. लाख पहरो के बावजूद उसकी बेटी की इज़्ज़त लुट जाएगी. वह देखकर भी नहीं रोक पाएगी. लोग ज़बरदस्ती उसकी इज़्ज़त तार-तार कर देंगे. अभी वह लल्लो-चप्पो से काम ले रहे

थे. जिस दिन उनकी सहनशीलता खत्म हो जाएगी, कुसुम को घर से गायब होते देर नहीं लगेगी.

वह कुछ ऐसा करना चाहती थी कि सांप भी मर जाए और लाठी भी न टूटे. वह सही मौके का इंतजार कर रही थी. तब तक किसी तरह उसे कुसुम की इज्जत बचाए रखनी थी. प्रताप सिंह बुढ़ापे की बुझती आग अपने अन्दर समेटे धीरे-धीरे सुलग रहा था, तो उसका बेटा शंकर जवानी की आग में जलने के लिए बेताब हो रहा था. एक ही चिड़िया का शिकार बाप-बेटे करना चाहते थे. फूलमती दोनों की बेचैनी और बेबसी देखकर अन्दर ही अन्दर हंसती थी. दोनों में जब टकराव होगा, तब और मज़ा आएगा. लेकिन उसके चुप बैठे रहने से कुछ नहीं होगा, उसे इस आग को और अधिक भड़काना है.

एक दिन उसने शंकर से कहा, “शंकर भैया, तुम इधर मत आया करो. तुम जो चाहते हो, मैं समझती हूँ, परन्तु तुम्हारी इच्छा पूरी नहीं हो सकती.”

“क्यों नहीं हो सकती?” शंकर ने अकड़ते हुए कहा, “यह तो हमारा अधिकार है. सीधे न मिलेगा, जबरदस्ती हासिल कर लेंगे.”

“हासिल कैसे करोगे? तुम्हारे बाप ने तो तुमको यहां आने से मना किया है. मैं तुमसे कहना नहीं चाहती थी, कहीं बाप-बेटे में तकरार न हो जाए, परन्तु तुम्हारी बेकारारी और परेशानी देखकर कहना ही पड़ा. बाकी तुम समझदार हो.” फूलमती ने सूखी घास में चिन्गारी फेंक दी थी.

“तुम सच कह रही हो?” शंकर ने गुस्से में पूछा.

“हाय दइया, मैं झूठ क्यों बोलूंगी. तुम दोनों मेरी खाल न उधेड़ लोगे, जिन्दा गाड़ दोगे. मेरी क्या मज़ाल जो तुमसे झूठ बोलूँ. विश्वास न हो तो बाप से खुद ही पूछ लो.”

“साला हरामी, कब्र में पैर लटकाए बैठा है और नई-नई ताज़ा कलियों का रस चखना चाहता है. देखता नहीं कि बेटा जवान हो गया है. मरता भी नहीं बुढ़ा.” शंकर गुस्से में अपने बाप को आंय-बांय बकने लगा और नाग की तरह फुफकारता हुआ चला गया. फूलमती अंदर ही अंदर खुश हो रही थी. आज कुछ न कुछ होकर रहेगा.

उस दिन सचमुच बहुत कुछ हुआ. ठाकुर प्रताप सिंह और उनके बेटे शंकर के बीच जबरदस्त झगड़ा हुआ, ऐसा झगड़ा जैसा उनके खानदान में आज तक नहीं हुआ था. झगड़े का परिणाम भी सारे गांववालों को पता चल गया, और लोग प्रताप सिंह पर थू-थू करने लगे. झगड़ा इतना बढ़ा कि शंकर लाठी लेकर बाप का सिर

फोड़ने के लिए दौड़ा, परन्तु गांव के कुछ समझदार लोगों ने बीच-बचाव करा दिया. फिर भी शंकर ने गुराँते हुए चेतावनी दी, “उस तरफ़ का मुंह किया तो रात में टेंडुआ दबा दूंगा. किसी को पता भी नहीं चलेगा कि कैसे ऊपर चले गये, समझ लेना.”

प्रताप सिंह समझ गया था. चाहता तो नहीं था. दूसरा कोई होता तो कहां मानने वाला था. सामने बेटा था, इसलिए रास्ते से हट गया; वरना उसके पास धन-बल सभी कुछ था. वह जानता था, बेटा औरत के लिए कुछ भी कर सकता था. औरत के बीच में आते ही सारे पवित्र रिश्ते भी धूल में मिल जाते हैं.

शंकर का गुस्सा दूसरे दिन भी शांत नहीं हुआ था. वह दोनों ट्रैक्टर ट्राली में आलू लादकर बाज़ार में बेचने गये थे. लौटते समय शंकर ने प्रताप से सारे पैसे छीन लिए और उसे ऐसी जगह उतार दिया, जहां से घर लौटने का कोई साधन नहीं मिलता था. प्रताप आधी रात को हांफता-कांपता बेटे को कोसता हुआ घर पहुंचा था. ..उस वक्त शंकर गहरी नींद में खरटे भर रहा था. प्रताप के लायक बेटे ने अपने गुण प्रदर्शित कर दिये थे.

इस महान कारनामों के बाद शंकर का फूलमती के घर आने-जाने का रास्ता साफ़ हो गया. जिस प्रकार औरंगजेब ने शाहजहां को ताजमहल में कैद करके उससे मुगल साम्राज्य छीन लिया था, उसी प्रकार शंकर ने भी अपने बाप को नज़रबंद करके अपने लिए फूलमती के घर का इलाका सुरक्षित कर लिया था. उस इलाके में उसकी प्रियतमा रहती थी. शंकर उस इलाके से अपनी प्रियतमा को प्राप्त करने में कामयाब होगा या नहीं, यह तो समय ही बतायेगा.

दो दिन बाद शंकर फूलमती की कोठरी के छप्पर के नीचे चारपाई पर बैठा लंबी-लंबी हांक रहा था कि किस प्रकार उसने अपने बाप की सरेआम इज्जत उतार कर उसकी औकात बता दी. उसे सलाह दी कि भगवत भजन में अपना बुढ़ापा गुजारे. इसी में उसकी खैर थी, वरना बुढ़ापे में क्यों अपनी हड्डियां तुड़वाने पर तुला हुआ था.

फूलमती अंदर ही अंदर खुश हो रही थी, परन्तु बाहर से ऐसा प्रदर्शित कर रही थी जैसे कोई आश्चर्यजनक घटना सुन रही थी.

“लेकिन क्या वह मानेगा?” फूलमती ने शंका व्यक्त की.

“अब वह इधर कभी नहीं आएगा, परन्तु कुसुम कहीं दिखाई नहीं दे रही है.” शंकर ने पूछा.

“उसे छोड़ो मालिक, वह तो अभी छोटी है, मैं क्या कम हूँ. मेरी तरफ़ देखो.” फूलमती ने नैन मटकाते हुए कहा. उसकी कटीली मुस्कराहट शंकर की आंखों में चुभ रही थी. वह दोनों लगभग हमउम्र थे.

“तुम तो मेरे बाप की रखैल हो.” शंकर ने सीधे-सीधे कहा. फूलमती को उसकी बात चुभ गयी, परन्तु मन में ही बात को पी गयी. हंसते हुए उससे सटती हुई बोली, “इससे क्या हुआ. तुम बाप-बेटे तो एक ही थाली में खाने के आदी हो. कभी-कभी तो दादा भी शामिल हो जाता है.”

“लेकिन मैं तुमसे नहीं कुसुम से प्यार करना चाहता हूँ. वह अब बड़ी हो गयी है.”

फूलमती ने अपने आंचल को गिराते हुए थोड़ा झुककर कहा, “अभी इतनी बड़ी भी नहीं हुई है.” उसने शंकर की जाँघों पर हाथ रख दिया और गहरी सांस लेते हुए आगे बोली, “कच्ची कली में वह मज़ा कहाँ, जो खिले हुए फूल में है.” शंकर ने उसके अधखुले वक्ष को देखा और उसकी सांस तेज़ हो गयी. उसकी बोलती बंद हो गयी. फूलमती चार बच्चों की माँ थी, परन्तु अभी भी सरस थी, उसके चेहरे में सौंदर्य था.

“मालिक, हम लोग तो आपकी थाली का खाना हैं, जब मर्ज़ी हो खा लो. कभी चूँ नहीं कर सकते. लेकिन सोचो, सदियों से हम आपके यहां मेहनत-मजदूरी करते रहे हैं. उसी की मजदूरी हमें मिलती है, परन्तु आप लोग जो हमारी बहन-बेटियों की अस्मत् से खिलवाड़ करते हो, सरेआम उनकी इज्जत लूटते हो, उनको पेट से करते हो, उसका कोई मुआवज़ा क्या हमें मिलता है? नहीं, बस बदनामी के सिवा हमें क्या मिलता है? आप लोग मुफ्त में मौज़ मारते हो और हमारे घर की औरतें घुटती रहती हैं. कहते हैं देश में आज़ादी आ गई है, परन्तु हमने तो उसे देखा नहीं. हम लोग आज भी आप लोगों के बंधुआ मजदूर हैं. अब तो हमें थोड़ी आज़ादी दो, कि खुली हवा में सांस ले सकें.”

शंकर की समझ में नहीं आया कि यह फूलमती नेताओं की तरह बात क्यों कर रही है. उसने पूछा, “ये किस तरह की बातें कर रही हो तुम? जरा खुलकर बताओ.”

“देखो, मेरी बेटी इस गांव की सबसे खूबसूरत लड़की है. उसका प्यार पाने के लिए तुम्हें कुछ करना होगा, उसके सौन्दर्य की कीमत चुकानी होगी.” फूलमती ने आत्मविश्वास से कहा.

“यानी तुम अपनी बेटी की कीमत वसूल करना चाहती हो?”

“आप इसे चाहे जो समझें. अभी तक हमसब व कुछ गंवकर भी गरीबी में जीते रहे हैं. आज हमें चेतना आई है. हम क्या इतने गये-गुजरे हैं कि कोई भी आकर गिद्ध की तरह हमारे जिस्म को नोच-नोचकर खाता रहेगा और हमउफ भी नहीं कर सकते. धिक्कार है हम पर, हमारी गैरत परें”

“इस तरह की बातें कहां से सीख गयी हो?”

“आप ही लोगों से सीखी हैं. हमने देखा है, जिस तरह से आप लोग हमें बहला-फुसलाकर, डरा-धमका कर हमारी बहू-बूटियों की इज्जत लूटते हो, तो हम क्यों नहीं उसकी कीमत वसूल करें. आखिर में तो हमें लुटना ही है, तो क्यों नहीं कुछ पाकर अपने को लुटायें?”

“बहुत समझदार हो गयी हो, परन्तु हम तुम्हारी बेटी को जबरदस्ती भी उठा सकते हैं.”

“उठा कैसे लोगे,” फूलमती ने तेज स्वर में कहा, “उसके पहले मैं आग नहीं लगा दूंगी. तुमको मेरी लाश के उपर से उसले जाना होगा. तो सोच लो, जो चीज तुम्हें कुछ खर्च करके आसानी से मिल सकती है, उसके लिए खून-खराबा क्यों करना? गांव में और भी ठाकुर हैं, वह भी घात लगाए बैठे हैं.”

शंकर बेवकूफ नहीं था, परन्तु जब आंखों पर सौंदर्य का पर्दा पड़ा हो तो बुद्धि पर बड़े-बड़े ताले पड़ जाते हैं.

“तुम वायदा करती हो, कि कुसुम मेरी होगी.”

“पक्का वायदा करती हूँ, परन्तु कुछ इंतजार करना होगा. वह अभी चौदह साल की है. तब तक मैं आपकी सेवा करूंगी.”

शंकर की आंखों ने फूलमती के शरीर का जायजा लिया. वह आकर्षक थी. इसके पहले उसने फूलमती की तरफ कभी ध्यान नहीं दिया था, क्योंकि वह उसके बाप के साथ जुड़ी हुई थी. आज ध्यान से यदेखा तो उसके बदन में जवानी की तरंगें लहरें मारने लगीं.

“कुसुम की क्या कीमत लगाती हो?”

“देखो, हम छोटे लोग हैं, मोटा खाते हैं, मोटा पहनते हैं, परन्तु एक बेटी की शादी करना हमारे लिए सबसे बड़ा काम है इसके लिए हमें आपलोगों से ही कर्ज लेना पड़ता है. मैं चाहती हूँ कि जब कुसुम की शादी हो तो किसी से कर्ज न लेना पड़े.

“तो उसकी शादी का पूरा खर्च उठाउंगा.” शंकर ने जोश में कहा.

“नहीं, मालिक, ऐसे नहीं होगा. शादी तो पता नहीं कब होगी. मुझे अभी गारन्टी चाहिए. कल को उसकी इज़्ज़त लूटकर तुम चलते बने तो मैं कहीं की न रहूंगी. मेरे पास तुमसे कुछ वसूलने के लिए कुछ नहीं होगा. उसके लिए अभी आपको कुछ करना होगा.”

“अभी क्या कर सकता हूँ. हजार पांच सौ दे सकता हूँ, बस.”

“इतने से किसी ग़रीब की लड़की की साड़ी भी नहीं आती आजकल. कुछ और साचिए. इतने बड़े ठाकुर हैं, घर में सोना-चांदी भरा है.”

“वह तो अभी मां-बापू के कब्जे में है.”

“आखिर आपका ही तो है. अभी से अपने कब्जे में ले लीजिए. बाप आज मरा, कल मरा. एक ही बात है. समुन्दर से एक बूंद निकलने से समुन्दर खाली नहीं होता.”

शंकर की आंखों के आगे तमाम चित्र दौड़ गए. उनमें से एक चित्र कुसुम का था. उसने इधर-उधर देखा. वह कहीं दिखाई नहीं दे रही थी. दिखाई भी कहां से देती. उसे तो फूलमती ने सख्त हिदायत दे रखी थी, अगर दरवाजे पर कोई ठाकुर आए तो वह कोठरी से न निकले. उसे सात पर्दों के अंदर बंद करके रखती थी. वह उसकी कीमत समझ गयी थी.

“एक बार कुसुम के दीदार तो करवा दो.”

“करवा दूंगी, पहले कुछ बानगी दे जाओ.” फूलमती ने शंकर की कमजोरी पकड़ ली थी. वह जानती थी, अब शंकर उसके चंगुल से नहीं निकल सकता था. वह कुसुम को पाने के लिए जोर-जबरदस्ती नहीं करेगा, अपनी गांठ ढीली करेगा.

और यहीं हुआ. दूसरे दिन ही उसने कुछ सोने-चांदी के पुराने गहने फूलमती के हाथ में लाकर रख दिये. फूलमती ने उन्हें देखा, परखा, फिर मुंह बिचकाकर बोली, “यह तो सब पुराने हैं. पुरानी चांदी तो मिट्टी के भाव जाएगी. आधा सोना भी सूवर में चला जायेगा. इसकी क्या कीमत है?”

“रानी, तुम चिन्ता न करो. यह तो दादी के पुराने गहने हैं, जो हाथ लगे हैं.” उसने फूलमती की कमर में हाथ डालकर अपनी तरफ़ खींचा, “यह बानगी है. मैं तुम्हारा घर भर दूंगा. अभी तो उसके दीदार करा दो.”

“अभी नहीं, शाम को आना.” उसने चुपचाप गहने उठाकर कोठरी के अंदर रख दिये. वह पुरुषों की फ़ितरत जानती थी. उन्हें जितना तड़पाओ, उतना ही वह नारी की तरफ़ खिंचते चले आते हैं.

शाम को वह खुद इस तरह सजकर तैयार बैठी थी, जैसे उसी की सुहागरात थी. कुसुम को भी उसने नये कपड़े पहनाकर तैयार कर रखा था.

शंकर आया तो उसे देखकर बोला, “आय हाय, तुम तो सचमुच अभी भी पटाखा हो, कौन न मर जाये तुम पर.”

“तभी तो मैं कहती हूँ, जो मज़ा पुरानी शराब में है, वह कच्ची दारू में कहां?”

“सच्ची, मैं तो मर मिटा तुम पर.” उसने उसका हाथ पकड़कर अपनी तरफ़ खींचा.

फूलमती ने झटके से अपने को छुड़ा लिया, “ज़्यादा गरम खाओगे, जल जाओगे. पहले बताओ, कुछ मुंह दिखाई लाए हो.”

“मुंह दिखाई.” शंकर का मुंह सूखी लौकी की तरह हो गया, “मुझे क्या पता था, तुम तो कोठे की बाई की तरह व्यवहार कर रही हो.”

“चालाकी तो धीरे-धीरे आती है. इतनी टोकर खाने के बाद भी अकल नहीं आएगी क्या? आप लोग क्या चाहते हो, हम सब ज़िन्दगी भर मारे-कुचले जाते रहें. अभी तो हमारे पास हथियार आया है, वार क्यों न करें?” शंकर उसकी बात से अंदर ही अंदर कुछ गया-साली छिनाल, दो कौड़ी की औरत! कितना बन रही है. आज तक चीं की आवाज़ भी नहीं निकलती थी गले से, चाहे जितना शोषण करो. आज अपनी बेटी की जवानी की बदौलत इतने नखरे कर रही है. उड़ लो, जितना उड़ना चाहो. एक दिन तो तुम्हारे पर कुतर कर रख दूंगा, तब अकल ठिकाने आएगी.

“लो,” उसने अपनी जेब से कुछ नोट निकालकर फूलमती के हाथ पर रख दिये, “अब तो चांद के दीदार कराओ.”

फूलमती ने काइयां बनिये की तरह नोट गिने. कुल दो हजार थे, “बस, क्या मालिक, इतनी छोटी औकात. जेब में कुछ तो हैसियत के मुताबिक लेकर चला करो. कोई बात नहीं, अगली बार.” उसने कुसुम को आवाज़ दी, “कुसुमा, बाहर आ तो जरा.” लजाती-शरमाती उसकी बेटी बाहर निकली. लगा, कि जैसी कहीं बिजली चमकी हो. सस्ते किन्तु नये कपड़ों में भी उसका सौंदर्य किसी रूपमती को मात देने में सक्षम था. वह गुदड़ी का लाल थी. इतनी ग़रीबी में इतना सुन्दर नगीना. उसकी कीमत फूलमती को पता थी.

शंकर चकित सा उसकी सुन्दरता को आंखों ही आंखों में पीता रहा. फिर इशारा करके अपनी तरफ बुलाया. फूलमती ने उसको अंदर जाने का इशारा किया, और बोली, “अभी नहीं, यह कच्ची कली अभी फूल बनने के काबिल नहीं है. पास आएगी तो तुम जबरदस्ती उसे तोड़ने का प्रयास करोगे. थोड़ा धैर्य रखो. कल वह तुम्हारी ही होगी.”

“तुम भी नू! इतना ज़्यादा मत डपाओ कि मैं कुछ उल्टा-सीधा कर दूं.” शंकर के स्वर में बेबसी की खीझ के साथ हल्की चेतावनी भी थी.

फूलमती उसके बगल में बैठकर उसके हाथों को अपने हाथों में लेकर बोली, “राजा नाराज़ क्यों होते हो? मैं उसको तुम्हारे लिए ही तैयार कर रही हूं. घर से निकलने भी नहीं देती कि किसी और भंवरे की नज़र न पड़े. वरना तुम तो जानते हो, इस गांव में कैसे-कैसे लुटेरे भरे पड़े हैं. आंख का काजल तक चुरा लेते हैं और पता नहीं चलता. सब तुम्हारा ही है, बस थोड़ा और...”

“क्या थोड़ा और...?”

“कुसुम की शादी का पूरा सामान दे दो, बस वह तुम्हारी?”

“ठीक है,” वह भुनभुनाता हुआ चला गया.

शंकर थोड़ा-थोड़ा करके कभी नक़द कभी कोई गहना-कपड़ा ला-लाकर फूलमती के हाथों पर धरता जा रहा था, परन्तु फूलमती कुसुम को उसके पास बैठने तक न देती. वह अपनी ही अंधेड़ जवानी के लटके-झटकों से शंकर को बहला रही थी. शंकर कुसुम की जवानी को लूटने के लिए बेचैन-दर-बेचैन होता जा रहा था. फूलमती इतनी ज़्यादा चालाक और लालची हो गयी थी कि कुसुम की जवानी के जलवे उसे दूर से दिखाती और ललचाती. वह अब तक लाखों रुपये के गहने, कपड़े शंकर से वसूल कर चुकी थी, परन्तु शंकर को कुछ हासिल नहीं हुआ था. यह पहली बार था, जब गांव के किसी ठाकुर ने ग़रीब लड़की की जवानी को हासिल करने के लिए पैसा खर्च किया था. इसमें उसका दोष नहीं था. कुसुम थी ही इतनी सुन्दर कि कोई भी उसको प्राप्त करने के लिए राज-पाट तक लुटा सकते थे.

शंकर अपने घर को फूलमती के हाथों लुटा रहा था, यह बात एक न एक दिन प्रताप को पता चलनी ही थी. जिस दिन उसे पता चला, उस दिन फिर बाप-बेटे में घमासान हुआ. पूरे गांव में तमाशा बना और तड़पता हुआ प्रताप फूलमती के घर आ धमका, “यह क्या कर रही हो फूलमती तुम. मेरे बेटे को लूटते हुए तुम्हें कोई डर नहीं लगा?”

“मैंने किसको लूटा, मालिक. यह तो आप लोग हो जो हमें लूटते हो और हम उफ तक नहीं करते.”

“बातें बनाने की ज़रूरत नहीं है. जो कुछ शंकर ने तुम्हें लाकर दिया है, चुपचाप वापस कर दो, वरना तुम्हारी जान की खैर नहीं.”

“अरे जाओ, पहले अपने बेटे को समझाओ जाकर. पता नहीं गांव की किस-किस छोकरी के ऊपर लुटाता रहता है. इल्ज़ाम मेरे ऊपर लगा रहे हो.”

“देख लूंगा, तुमको! कहां जाओगी?”

फूलमती को लगा, अब कहानी का अंत होनेवाला था. वह सचेत हो गयी. उस दिन रात में बैठकर अपने पति के साथ कुछ विचार-विमर्श किया. उनके घर में कोई ज़्यादा सामान नहीं था. बाल-बच्चों को सहेजा-समेटा. कुछ ज़रूरी सामान लिया और रात के अंधेरे में उस घर के छः प्राणी पता नहीं कहां चले गये, किसी को पता नहीं चला. दूसरे दिन गांव के लोगों ने देखा, फूलमती की झोंपड़ी खाली पड़ी थी.

शंकर को पता चला, दौड़ा हुआ आया. पूरी कोठरी को छान मारा. वहां चिड़िया का बच्चा तक नहीं था. बेकार-सा सामान इधर-उधर बिखरा पड़ा था. ऐसा लगता था, जैसे कोठरी को कोई लूटकर ले गया हो. उसके अंदर एक मनहूस सन्नाटा पसरा था. शंकर को अपनी सांस रुकती-सी महसूस हुई. थोड़ी देर बाद जब उसकी चेतना वापस हुई तो उसने अपने एक खास आदमी को फूलमती की ससुराल दौड़ाया.

वहां कोई नहीं पहुंचा था. वहां किसी को कुछ पता भी नहीं था.

फूलमती अपने बच्चों और पति के साथ कहां चली गयी थी, किसी को पता नहीं चला. परन्तु इसमें कोई संदेह नहीं था कि वह एक नर्क से निकल गयी थी. अब जहां कहीं भी होगी, शोषण और अत्याचार की दुनिया से दूर होगी. वहां उसकी बेटी की अस्मत् सुरक्षित होगी और वह उसकी शादी किसी अच्छे लड़के के साथ कर सकेगी.



उनका बेटा

जयन्त ऑफिस के बाद पुलिस थाने होते हुए घर पहुंचे थे. बहुत थक गए थे मानसिक रूप से बहुत ज्यादा थके थे. शारीरिक श्रम जीवन में प्रतिदिन करना ही पड़ता है, परंतु पिछले एक महीने से जयन्त के जीवन में शारीरिक और मानसिक श्रम की मात्रा थकान की हद तक बढ़ गयी थी.

घर पर पत्नी उनकी प्रतीक्षा कर रही थी. प्रतिदिन करती है. उनके आते ही जिज्ञासा से पूछती है, “कुछ पता चला?” आज भी वही प्रश्न हवा में उछला. पत्नी को उत्तर पता था. जयन्त के चेहरे की थकी-उदास भंगिमा ही बता रही थी कि कुछ पता नहीं चला था. जयन्त सोफे पर गिरते से बोले, “नहीं, परंतु आज पुलिस ने एक नई बात बताई है.”

“वह क्या?” पत्नी का कलेजा मुंह को आ गया. जिस बात को स्वीकार करने में जयन्त और मृदुला इतने दिनों से डर रहे थे, कहीं वही सच तो सामने नहीं आ रहा था. कई बार सच जानते-समझते हुए भी हम उसे नकारते रहते हैं. वह दोनों भी दिल की तसल्ली के लिए झूठ को सच मानकर जी रहे थे. हृदय की अतल गहराइयों से वह मान रहे थे कि सच वह नहीं था, जिस पर वह विश्वास बनाए हुए थे, परंतु जब तक प्रत्यक्ष साक्ष्य नहीं मिल जाता, वह अपने विश्वास को टूटने नहीं देना चाहते थे.

पत्नी की बात का जवाब न देकर जयन्त ने कहा, “एक गिलास पानी लाओ.” मृदुला को अच्छा नहीं लगा. वह पहले अपने मन की जिज्ञासा को शांत कर लेना चाहती थी. पति की परेशानी और उनकी ज़रूरतों की तरफ आजकल उसका ध्यान नहीं जाता था. वह जान-बूझकर ऐसा नहीं करती थी, परंतु चिंता के भंवर में फंसे रहकर वह स्वयं को भूल गयी थी, पति का ख्याल कैसे रखती?

जल्दी से पानी का गिलास लाकर पति के हाथ में थमाया और फिर पूछा, “क्या बताया पुलिस ने?”

पानी पीकर जयन्त ने एक गहरी सांस ली, फिर लापरवाही से कहा, “कहते हैं कि अब हमारा बेटा जीवित नहीं है.”

मृदुला उनको पकड़कर रोने लगी. वह उसको संभालकर पीछे के कमरे तक लाये और बिस्तर पर लिटाकर बोले, “रोने से क्या फायदा मृदुल! इस सच्चाई को हम स्वयं नकारते आ रहे थे, परंतु अब हमें इसे स्वीकार कर लेना चाहिए.”

मृदुला उठकर बिस्तर पर बैठ गयी, “क्या आपको कोई सबूत मिला है?”

“हां, प्रमांशु के जिन दोस्तों को पुलिस ने पकड़ा था, उन्होंने कबूल कर लिया है कि उन्होंने प्रमांशु को मार डाला है.”

सुनकर मृदुला और तेज़ी से रोने लगी. इस बार जयन्त ने उसे चुप कराने का प्रयास नहीं किया; बल्कि आगे बोलते रहे, “लाश नहीं मिली है. पुलिस ने कुछ हड्डियां बरामद की हैं, उनसे पहचान असंभव है.”

मृदुला का विलाप सिसकियों में बदल गया. फिर नाक सुड़कती हुई बोली, “हो सकता है, वह प्रमांशु की हड्डियां न हों.”

“हां, संभव है, इसीलिए पुलिस उनका डीएनए करके पता करेगी कि वह प्रमांशु के शरीर की हड्डियां हैं या किसी और व्यक्ति की. उन्होंने हमें कल बुलाया है. हमारे ब्लड सैंपल लेंगे.”

“ब्लड सैंपल...!” मृदुला चौंक गयी. उसने आतंकित भाव से जयन्त को देखा. जयन्त ने आश्वासन देते हुए कहा, “इसमें डरने की क्या बात है? ब्लड सैंपल देने में कोई तकलीफ नहीं होती.”

“नहीं, लेकिन...” मृदुला का स्वर कांप रहा था.

“इसमें परेशानी की कोई बात नहीं है. डीएनए मिलेगा तो वह हमारा प्रमांशु होगा, नहीं मिलेगा तो कोई अनजान व्यक्ति होगा.” जयन्त के कहने के बावजूद मृदुला के चेहरे से भय का साया नहीं गया. उसका हृदय ही नहीं पूरा शरीर कांप रहा था. उसके शरीर का कंपन जयन्त ने भी महसूस किया. उन्होंने समझा, बेटे की मृत्यु से मृदुला विचलित हो गयी है. उन्होंने उसको डिस्पिरीन की गोली देकर बिस्तर पर लिटा दिया. नींद कहां आनी थी, परंतु जयन्त उसे अकेला छोड़कर ड्राइंगरूम में आ गये. सोफे पर अधलेटे से होकर वह विचारों के जाल में उलझ गये.

जयन्त का पारिवारिक जीवन काफी सुखमय रहा था. मनुष्य के पास जब धन, वैभव और वैचारिक सम्पन्नता हो तो उसके जीवन में आने वाले छोटे-छोटे दुःख, कष्ट और तकलीफें कोई मायने नहीं रखते. उनके पिताजी केन्द्र सरकार की सेवा में उच्च अधिकारी थे, मां एक कॉलेज में प्रोफेसर थीं. उनकी शिक्षा शहर के सबसे अच्छे अंग्रेजी स्कूल और फिर नामचीन कॉलेज में हुई थी. उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद उन्होंने भी प्रशासनिक सेवा की परीक्षा पास की और आज राजस्व विभाग में उच्च अधिकारी थे.

उनकी पत्नी मृदुला भी उच्च शिक्षित थी, परंतु वह नौकरी नहीं करती थी. वह समाज सेवा और घूमने-फिरने की शौकीन थी. शादी के बाद जब उसका उठना-बैठना जयन्त के सीनियर अधिकारियों की वीवियों के साथ हुआ, तो उसकी पहचान का दायरा बढ़ा और वह शहर के कई क्लबों और सभा-समितियों की सदस्या बन गई थी. जयन्त खुले-विचारों के शिक्षित व्यक्ति थे, अतः पत्नी की आधुनिक स्वतंत्रता के पक्षधर थे. वह पत्नी के घूमने-फिरने, अकेले बाहर आने-जाने पर एतराज नहीं करते थे. पत्नी के चरित्र पर वह पूरा भरोसा करते थे.

शादी के पांच साल तक उनके घर बच्चे का पदार्पण नहीं हुआ. जयन्त इच्छुक थे, परंतु मृदुला नहीं चाहती थी. शादी के तुरंत बाद वह बच्चा पैदा करके अपने सुंदर, सुगठित शरीर को बेडौल नहीं करना चाहती थी. वैसे भी वह घर और पति की तरफ अधिक ध्यान नहीं देती थी. इसके बजाय वह किटी पार्टियों और क्लबों में रमी खेलने में ज़्यादा रुचि लेती थी. तब जयन्त के माता-पिता जीवित थे, परंतु मृदुला अपने ऊपर किसी का प्रतिबंध नहीं चाहती थी. वह वैचारिक और व्यावहारिक स्वतंत्रता की पक्षधर थी, अतः बाहर आने-जाने के मामले में किसी की बात नहीं सुनती थी. जयन्त बेवज़ह घर में कोई झगड़ा नहीं चाहते थे, इसलिए पत्नी को कभी टोंकते नहीं थे. उनका मानना था कि एक बच्चा होते ही वह घर और बच्चे की तरफ ध्यान देने लगेगी और तब वह क्लब की मौज़-मस्ती और किटी पार्टियां भूल जाएगी.

परंतु ऐसा नहीं हो सका. शादी के पांच साल बाद उनके यहां बच्चा हुआ, तो भी मृदुला की आदतों में कोई सुधार नहीं आया. कुछ दिन बाद ही उसने क्लबों की पार्टियों में जाना प्रारंभ कर दिया. बच्चा आया (मेड) और जयन्त के भरोसे पलने लगा. जब तक जयन्त के माता-पिता जीवित रहे, तब तक उन्होंने प्रमांशु को संभाला, परंतु जब वह दस साल का हुआ तो उसके दादा-दादी एक-एक कर स्वर्ग सिधार

गये. बच्चा स्कूल से आकर घर पर अकेला रहता, टी.वी. देखता या बाल-पत्रिकाएं पढ़ता, जिनको जयन्त खरीदकर लाते थे ताकि प्रमांशु का मन लगा रहे. वह आया से भी बहुत कम बात करता था. शाम को जयन्त घर लौटते तो वह उसका होमवर्क पूरा करवाते, कुछ देर उसके साथ खेलते और खाना खिलाकर सुला देते. रात के दस बजने के बाद कहीं मृदुला किटी पार्टियों या क्लब से लौटकर आती. तब उसे इतना होश न रहता कि वह प्रमांशु के साथ दो शब्द बोलकर उसके ऊपर ममता की दो बूंदें टपका सके. उसने तो कभी यह जानने की कोशिश भी नहीं की कि उसका पेट-जाया बच्चा किस प्रकार पल-बढ़ रहा था, उसे कोई दुःख या परेशानी है या नहीं, वह मां के आंचल की ममतामयी छांव के लिए रोता है या नहीं. वह मां से क्या चाहता है, कभी मृदुला ने उससे नहीं पूछा; न प्रमांशु ने कभी उसे बताया. उन दोनों के बीच मां-बेटे जैसा कोई रिश्ता था ही नहीं. उनके बीच कभी कोई संवाद ही नहीं होता था.

धीरे-धीरे प्रमांशु बड़ा हो रहा था, परंतु मृदुला उसी तरह क्लबों और किटी पार्टियों में व्यस्त थी. अब भी वह देर रात को घर लौटती थी. धीरे-धीरे जयन्त ने महसूस किया कि प्रमांशु भी रात को देर से घर लौटने लगा है, घर आते ही वह अपने कमरे में बंद हो जाता है, जयन्त मिलने के लिए उसके कमरे में जाते तो वह दरवाजा भी नहीं खोलता. पूछने पर बहाना बना देता कि उसकी तबीयत खराब है. खाना भी कई बार नहीं खाता था. जयन्त की समझ में न आता कि वह इतना एकांतप्रिय क्यों होता जा रहा था. वह हाईस्कूल में था. जयन्त को पता न चलता कि वह अपना होमवर्क पूरा करता है या नहीं.

एक दिन जयन्त ने घेरकर उससे पूछ ही लिया, “बेटा, तुम रोज-रोज देर से घर आते हो, कहां रहते हो? और तुम्हारा होमवर्क कैसे पूरा होता है? कहीं तुम परीक्षा में फेल न हो जाओ?”

“पापा, आप मेरी बिलकुल चिंता न करें, मैं स्कूल के बाद अपने दोस्तों के घर चला जाता हूं. उन्हीं के साथ बैठकर अपना होमवर्क भी पूरा कर लेता हूं.” प्रमांशु ने बड़े ही आत्मविश्वास से बताया. जयन्त को विश्वास तो नहीं हुआ, परंतु उन्होंने बेटे की भावनाओं को आहत करना उचित नहीं समझा.

बात उतनी-सी नहीं थी, जितनी प्रमांशु ने अपने पापा को बताई थी. जयन्त भी लापरवाह नहीं थे. वह ध्यान से प्रमांशु की गतिविधियों पर नज़र रखने लगे थे. उन्हें लग रहा था, प्रमांशु किन्हीं ग़लत गतिविधियों में लिप्त रहने लगा था. घर आता

तो लगता उसके शरीर में कोई जान ही नहीं है, वह गिरता पड़ता-सा, लड़खड़ाता हुआ घर पहुंचता. उसके बाल उलझे हुए होते, आंखें चढ़ी हुई होतीं और वह घर पहुंचकर सीधे अपने कमरे में घुसकर दरवाजा अंदर से बंद कर लेता. जयन्त के आवाज़ देने पर भी दरवाजा न खोलता. दूसरे दिन भी दिन चढ़े तक सोता रहता.

यह बहुत चिंताजनक स्थिति थी. जयन्त ने मृदुला से इसका जिक्र किया, तो वह लापरवाही से बोली, “इसमें चिंता करने वाली कौन-सी बात है, प्रमांशु अब जवान हो गया है. अब उसके दिन गुड्डे-गुड़ियों से खेलने के नहीं रहे. वह कुछ अलग ही करेगा.”

और उसने सचमुच बहुत कुछ अलग करके दिखा दिया, ऐसा जिसकी कल्पना जयन्त क्या, मृदुला ने भी नहीं की थी.

प्रमांशु ने हाईस्कूल जैसे-तैसे पास कर लिया, परंतु नंबर इतने कम थे कि किसी अच्छे कॉलेज में दाखिला मिलना असंभव था. आजकल बच्चों के बीच प्रतिस्पर्धा और कोचिंग आदि की सुविधा होने के कारण वह शत-प्रतिशत अंक प्राप्त करने लगे थे. हाई स्कोरिंग के कारण 90 प्रतिशत अंक प्राप्त बच्चों के एडमिशन भी अच्छे कॉलेजों में नहीं हो पा रहे थे. जयन्त ने अपने प्रभाव से उसे जैसे-तैसे एक कॉलेज में एडमिशन दिलवा दिया, परंतु पढ़ाई जैसे प्रमांशु का उद्देश्य ही नहीं था. सतरह-अठारह साल की वयः सन्धि पर था. अब तक यह स्पष्ट हो चुका था कि वह ड्रग्स के साथ-साथ शराब का सेवन भी करने लगा था. जयन्त के पैरों के तले की ज़मीन खिसक गयी. प्यार और ममता से वंचित बच्चे क्या इतना बिगड़ जाते हैं कि ड्रग्स और शराब का सेवन करने लगते हैं? इससे उन्हें कोई सुकून प्राप्त होता है क्या?

अपने बेटे को सुधारने के लिए मां-बाप जो यत्न कर सकते हैं, वह सभी जयन्त और मृदुला ने किए. प्रमांशु के बिगड़ने के बाद मृदुला ने क्लबों में जाना बंद कर दिया था. सोसायटी की किटी पार्टियों में भी नहीं जाती थी.

प्रमांशु की लतों को छुड़वाने के लिए जयन्त और मृदुला ने न जाने कितने डॉक्टरों से संपर्क किया. उनके पास लेकर गए, दवाइयां दीं, परंतु प्रमांशु पर इलाज और कौन्सलिंग का कोई असर नहीं हुआ. उल्टे अब उसने घर आना ही बंद कर दिया था. रात वह अपने दोस्तों के घर बिताने लगा था. उसके ये दोस्त भी उसकी तरह ड्रगिस्ट थे और अपने मां-बाप से दूर इस शहर में पढ़ने के लिए आये थे और अकेले रहते थे.

जयन्त के हाथों से सब कुछ फिसल गया था. मृदुला के पास भी अफ़सोस करने के अलावा और कोई चारा नहीं था. प्रमांशु पहले एकाध रात के लिए दोस्तों के यहां रुकता, फिर धीरे-धीरे इस संख्या में बढ़ोत्तरी होने लगी थी. अब तो कई बार वह हफ़्तों घर नहीं आता था. जब आता था, जयन्त और मृदुला उसकी हालत देखकर माथा पीट लेते, कोने में बैठकर दिल के अंदर ही रोते रहते, आंसू नहीं निकलते, परंतु हृदय के अंदर खून के आंसू बहाते रहते. अत्यधिक ड्रग्स के सेवन से प्रमांशु जैसे हर पल नींद में रहता. लुंज-पुंज अवस्था में बिस्तर पर पड़ा रहता, न खाने की सुध, न नहाने-धोने और कपड़े पहनने की. उसकी एक अलग ही दुनिया थी, अंधेरे रास्तों की दुनिया, जिसमें वह आंखें बंद करके टटोल-टटोलकर आगे बढ़ रहा था.

जयन्त के पारिवारिक जीवन में प्रमांशु की हरकतों की वज़ह से दुःखों का पहाड़ खड़ा होता जा रहा था. जयन्त जानते थे, प्रमांशु के भटकने की असली वज़ह क्या थी, परंतु अब उस वज़ह को सुधारकर प्रमांशु के जीवन में सुधार नहीं लाया जा सकता था. मृदुला अब प्रमांशु के ऊपर प्यार-दुलार लुटाने के लिए तैयार थी, इसके लिए उसने अपने शौक त्याग दिए थे; परंतु अब समय उसके हाथों से बहुत दूर जा चुका था, पहुंच से बहुत दूर...इस बात को लेकर किसी को दोष देने का कोई औचित्य नहीं था.

जयन्त और मृदुला परिस्थितियों से समझौता करके किसी तरह जीवन के साथ तालमेल बिटाकर जीने का प्रयास कर रहे थे, कि तभी उन्हें एक और झटका लगा. पता चला कि प्रमांशु समलैंगिक रिश्तों का भी आदी हो चुका था.

जयन्त की समझ में नहीं आ रहा था, यह कैसे जीन्स प्रमांशु के खून में आ गए थे, जो उनके खानदान में किसी को नहीं थे. जहां तक उन्हें याद है, उनके परिवार में ड्रग्स लेने की आदत किसी को नहीं थी. पार्टी आदि में शराब का सेवन करना बुरा नहीं माना जाता था, परंतु दिन-रात पीने की लत किसी को नहीं लगी थी. और अब यह समलैंगिक संबंध...?

जयन्त की लाख कोशिशों के बावजूद प्रमांशु में कोई सुधार नहीं हुआ. घर से उसने अपना नाता पूरी तरह से तोड़ लिया था. उसकी दुनिया उसके ड्रगिस्ट और समलैंगिक दोस्तों तक सिमटकर रह गयी थी. उनके साथ वह यायावरी जीवन व्यतीत कर रहा था.

बेटा चाहे घर-परिवार से नाता तोड़ ले, मां-बाप के प्रति अपनी जिम्मेवारी से विमुख हो जाए; परंतु मां-बाप का दिल अपनी संतान के प्रति कभी खट्टा नहीं होता. जयन्त अच्छी तरह समझ गए थे कि प्रमांशु जिस राह पर चल पड़ा था, उससे लौट पाना असंभव था. ड्रग और शराब की आदत छूट भी जाए तो वह अपने समलैंगिक संबंधों से छुटकारा नहीं पा सकता था. इसके बावजूद वह उसकी खोज-खबर लेते रहते थे, फोन पर बात करते और मिलकर समझाते, मृदुला से भी उसकी बातें करवाते. वह दोनों ही उसे अपनी लतों से छुटकारा पाने की सलाह देते.

जयन्त और मृदुला को नहीं लगता था कि प्रमांशु कभी अपनी लतों से छुटकारा पा सकेगा.

परंतु नहीं, प्रमांशु ने अपनी सारी लतों से एक दिन छुटकारा पा लिया. परंतु उसने जिस तरह से अपनी आदतों से छुटकारा पाया था, इसकी जयन्त और मृदुला को न तो उम्मीद थी, न उन्होंने ऐसा चाहा था.

एक दिन प्रमांशु के किसी मित्र ने जयन्त को फोन करके बताया कि प्रमांशु कहीं चला गया है और उसका पता नहीं चल रहा था. जयन्त तुरंत उस मित्र से मिले. पूछने पर उसने बताया कि इन दिनों वह अपने पुराने दोस्तों को छोड़कर कुछ नये दोस्तों के साथ रहने लगा था. इसी बात पर उन लोगों के बीच में झगड़ा और मारपीट हुई थी. उसके बाद प्रमांशु कहीं गायब हो गया था. उस मित्र से नाम पता लेकर जयन्त उसके नए-पुराने सभी दोस्तों से मिले, खुलकर उनसे बात की; परंतु कुछ पता नहीं चला. जयन्त ने अनुभव किया कि कहीं न कहीं, कुछ बड़ी गड़बड़ है और हो सकता है, प्रमांशु के साथ कोई दुर्घटना हो गयी हो.

दुर्घटना के मद्देनजर जयन्त ने पुलिस थाने में प्रमांशु की गुमशुदगी की रपट दर्ज कर दी. जवान लड़के की गुमशुदगी का मामला था, इसलिए पुलिस ने पहले बहुत ज़्यादा ध्यान नहीं दिया; परंतु जब जयन्त ने प्रमांशु की हत्या की आशंका व्यक्त की और पुलिस के उच्च अधिकारियों से बात की तो पुलिस ने मामले को गंभीरता से लिया और प्रमांशु के दोस्तों से गहरी पूछताछ की.

जयन्त लगभग रोज पुलिस अधिकारियों से बात करके तपस्वी की जानकारी लेते रहते थे, स्वयं शाम को थाने जाकर एस.एच.ओ. से मिलकर पता करते. थानेदार ने उनसे कहा भी कि उन्हें रोज-रोज थाने आने की ज़रूरत नहीं थी. कुछ पता चलने पर वह स्वयं उनको फोन करके या बुलाकर बता देगा, परंतु जयन्त एक पिता थे, उनका दिल न मानता.

और आज पुलिस ने संभावना व्यक्त की थी कि प्रमांशु की हत्या हो चुकी थी. उसके दोस्तों की निशानदेही पर पुलिस ने कुछ हड़िडयां भी बरामद की थीं. चूंकि प्रमांशु की देह नहीं मिली थी, उसकी पहचान सिद्ध करने के लिए डी.एन.ए. टेस्ट ज़रूरी था. जयन्त और मृदुला का खून लेने के लिए पुलिस ने कल उन्हें थाने बुलाया था. वहां से उनको लेकर अस्पताल जाएंगे.

रात में फिर मृदुला ने शंका व्यक्त की, “पता नहीं पुलिस किसकी हड़िडयां उठाकर लाई है और अब उन्हें प्रमांशु की बताकर उसकी मौत साबित करना चाहते हैं. मुझे लगता है, हमारा बेटा अभी जिन्दा है.”

“हो सकता है, जिन्दा हो. भगवान न करे, उसके साथ कुछ बुरा हुआ हो. फिर भी मैं चाहता हूं, एक बार पता तो चले कि हमारे बेटे के साथ क्या हुआ है. वह जिन्दा है या मुर्दा, कुछ तो पता चले.”

“परंतु जंगल से किसी भी व्यक्ति की हड़िडयां उठाकर पुलिस कैसे यह साबित कर सकती है कि वह हमारे बेटे की ही हड़िडयां है?”

“इसीलिए तो वह डी.एन.ए. परीक्षण करवा रही है.” उन्होंने मृदुला को आश्वस्त करते हुए कहा.

दूसरे दिन वह दोनों ब्लड सैंपल दे आए.

एक महीने के बाद जयन्त के पास थानेदार का फोन आया, “डी.एन.ए. परीक्षण की रिपोर्ट आ गयी है. आप थाने पर आकर मिल लें.”

“क्या पता चला?” उन्होंने जिज्ञासा से पूछा.

“आप आकर मिल लें, तो अच्छा रहेगा.” थानेदार ने गंभीर स्वर में कहा.

जयन्त ऑफिस में थे. मन में शंका पैदा हुई, थानेदार ने स्पष्ट रूप से क्यों नहीं बताया? उन्होंने मृदुला को फोन करके बताया कि डीएनए की रिपोर्ट आ गयी है. वह घर आ रहे हैं, दोनों साथ-साथ थाने चलेंगे.

घर से मृदुला को लेकर जयन्त थाने पहुंचे. थानेदार ने उनका स्वागत किया. मृदुला कुछ घबरायी हुई थी, परंतु जयन्त ने स्वयं को तटस्थ बना रखा था. किसी भी स्थिति का सामना करने के लिए वह तैयार थे.

थानेदार ने जयन्त से कहा, “आप मेरे साथ आइए.” फिर मैडम से कहा, “आप यहीं बैठिए.”

जयन्त को एक अलग कमरे में ले जाकर थानेदार ने जयन्त से कहा, “सर! बात बहुत गंभीर है, इसलिए केवल आपसे बता रहा हूं. हो सकता है, सुनकर

आपको सदमा लगे, परंतु सच्चाई से आपको अवगत कराना भी मेरा फर्ज है. डी. एन.ए. परीक्षण के मुताबिक जिस व्यक्ति की हड्डियां हमने बरामद की थीं, वह प्रमांशु की ही हैं.”

जयन्त को यही आशंका थी. उन्होंने अपने हृदय पर पत्थर रखकर पूछा, “परंतु उसकी हत्या कैसे और क्यों हुई?”

“उसके जिन दोस्तों को हमने पकड़ा था, उनसे पूछताछ में यही पता चला था कि प्रमांशु ने अपने कुछ पुराने दोस्तों से संबंध तोड़कर नये दोस्त बना लिए थे. पुराने दोस्तों को यह बर्दाश्त नहीं हुआ. उन्होंने उससे संबंध जारी रखने के लिए कहा, तो प्रमांशु ने मना कर दिया. यही उसकी हत्या का कारण बना.”

“क्या हत्यारे पकड़े गये?”

“हां, वह जेल में हैं. अगले हफ्ते हम अदालत में आरोप-पत्र दाखिल कर देंगे.”

जयन्त ने एक गहरी सांस ली.

“सर! एक और बात है, जो हम आपसे छिपाना नहीं चाहते, क्योंकि अदालत में जिरह के दौरान आपको पता चलनी ही है.”

‘क्या बात है’ के भाव से जयन्त ने थानेदार के चेहरे को देखा.

“सर, प्रमांशु आपकी पत्नी का बेटा तो है, परंतु वह आपका बेटा नहीं है.” थानेदार ने जैसे धमाका किया. जयन्त की आंखें फट गयीं और मुंह खुला-का-खुला रह गया. उन्हें चक्कर-सा आया. कुर्सी पर न बैठे होते तो शायद गिर जाते.

जयन्त कई पल तक चुपचाप बैठे रहे. थानेदार भी नहीं बोला, वह जयन्त के दिल की हालत समझ सकता था.

कुछ पल बाद जयन्त ने शान्त स्वर में कहा, “थानेदार साहब! जो होना था, हो गया. अब प्रमांशु कभी वापस नहीं आ सकता, परंतु जिस झूठ को अनजाने में हम सच्चाई मानकर इतने दिनों से जी रहे थे, वह झूठ सच्चाई ही बना रहे तो अच्छा है. यह हमारे दाम्पत्य-जीवन के लिए अच्छा होगा.”

“क्या मतलब सर!” थानेदार की समझ में कुछ नहीं आया.

“आप मेरी पत्नी को यह बात मत बताइएगा कि मुझे पता चल गया है कि मैं प्रमांशु का पिता नहीं हूं.”

थानेदार सोच में पड़ गया, फिर बोला, “जी सर! यही होगा. मैं आपकी पत्नी को गवाह नहीं बनाऊंगा.”

“हां, यही ठीक होगा. बाकी मैं संभाल लूंगा.”

“जी सर!”

जयन्त थके-उदास कदमों से मृदुला को कंधे से पकड़कर थाने के बाहर निकले. मृदुला बार-बार उतावली से पूछ रही थी, “क्या हुआ? थानेदार ने क्या बताया? डी.एन.ए. परीक्षण से क्या पता चला? क्या वह हमारा प्रमांशु ही था?”

गाड़ी में बैठते हुए जयन्त ने मृदुला के सिर को अपने कंधे पर टिकाते हुए कहा, “मृदुल, तुम अपने को संभालो, वह हमारा ही बेटा था. अब वह इस दुनिया में नहीं रहा.”

मृदुला हिचकिया भरकर रोने लगी.

